डिस्टैंस ऐजुकेशन विभाग
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला

कक्षा : बी.ए. भाग-1 *सैमेस्टर-2*
पत्र : हिन्दी साहित्य *एकांश संख्या : 2*
माध्यम : हिन्दी

पाठ नं.

सात कहानियाँ

2.1 'पूस की रात' (मुंशी प्रेमचन्द)
2.2 'देवरथ' (जयशंकर प्रसाद)
2.3 'प्रायश्चित्त' (भगवतीचरण वर्मा)
2.4 'खुदा का ख़ौफ़. . . . ' (यशपाल)
2.5 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' (उषा प्रियम्वदा)
2.6 'परमात्मा का कुत्ता' (मोहन राकेश)
2.7 'सज़ा' (मन्नू भण्डारी)
2.8 कर्बला नाटक का सार, समीक्षा और कथ्य
2.9 चरित्र-चित्रण, सप्रसंग व्याख्या और प्रश्नोत्तर

Department website : www.pbidde.org

पाठ संख्या ः 2.1 (खण्ड-ख) लेखिका ः डॉ॰ हरिसिमरन कौर

'पूस की रात'
(मुंशी प्रेमचन्द)

इकाई की रूप—रेखा ः

2.1.0 उद्देश्य

2.1.1 प्रस्तावना

2.1.2 मुंशी प्रेमचन्द का जीवन—वृत्त

2.1.3 'पूस की रात' कहानी की तात्त्विक समीक्षा

- कथावस्तु
- पात्रों का चरित्र—चित्रण
- संवाद—योजना
- देशकाल और वातावरण
- भाषा—शैली
- उद्देश्य

2.1.4 प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्याएँ

2.1.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न

2.1.0 उद्देश्य ः

हिन्दी कथा—साहित्य अर्थात् कहानियों और उपन्यासों की वास्तविक शुरुआत मुंशी प्रेमचन्द से सर्वसम्मति से मानी जाती है। उनके साहित्य में नगर—जीवन का चित्रण तो मिलता है ही, साथ ही ग्राम—जीवन विशेषतः कृषकों और श्रमिकों के जीवन की निर्धनता, ऋणग्रस्तता, भूख, अशिक्षा, कुपोषण, दहेज, मदिरापान, बाल—विवाह जैसी अन्यान्य समस्याओं की भी खुल कर यथार्थ अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। सामाजिक सरोकारों से जुड़ी हुई इनकी रचनाओं में 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' का चित्रण देखने को मिलता है। इसका अर्थ यह है कि एक ओर जीवन के प्रति इनका दृष्टिकोण अन्य जागरुक लेखकों की भाँति यथार्थवादी रहा है और दूसरी ओर जगत् के प्रति पूर्ण आशा और आस्था रखने के कारण इनकी रचनाओं में आदर्शवादी जीवन—दर्शन का भी प्रकाशन हुआ है। आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी ने इन्हें 'कृषक जीवन का प्रामाणिक गाइड' घोषित किया है, जोकि निर्विवाद मत ही माना जाएगा।

प्रेमचन्द के मतानुसार, ''कहानी को मैं 'मानव—चरित्र का चित्र' मात्र समझता हूँ।'' इस टिप्पणी का आशय यह है कि इनके उपन्यासों और कहानियों में जीवन और जगत् से हिन्दू, मुस्लिम और ईसाई जो भी पात्र आए हैं, वे किसी कल्पना—लोक की उपज न हो कर शुद्ध हाड़—माँस के ही जीते—जागते पुतले हुआ करते हैं। उनकी कहानियों और उपन्यासों में मानव मात्र के सुख—दुःख, हर्ष—विषाद, आशा—निराशा इत्यादि मानवीय भावों की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। कुल मिला कर यह कहा जा सकता है कि प्रेमचन्द की रचनाओं में भारतीय जीवन, सभ्यता और संस्कृति के अनूठे और यथार्थ चित्रों की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। इसी कारण इन्हें हिन्दी कथा साहित्य के शिरोमणि और प्रवर्त्तक साहित्यकार का महत्त्वपूर्ण दर्ज़ा प्राप्त है।

प्रस्तुत पाठ में छात्र जिन तथ्यों से परिचित हो सकेंगे, वे अग्रलिखित हैं :—

1. मुंशी प्रेमचन्द का जीवन।

2. 'पूस की रात' कहानी की तात्त्विक समीक्षा ः– कथावस्तु, पात्रों का चरित्र–चित्रण, संवाद–योजना, देशकाल और वातावरण, भाषा–शैली और उद्देश्य – इन तत्त्वों का समीक्षापरक विवेचन।
3. महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्यायें।
4. अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न।

2.1.1 प्रस्तावना ः

'पूस की रात' शीर्षक कहानी प्रेमचन्द की एक प्रगतिशील और यथार्थवादी कला की प्रतिनिधि कहानी है। कहानी का मुख्य पात्र हल्कू किसानों के सामान्य स्वभाव से विपरीत आचार करता हुआ नज़र आता है। वह पौष (पूस, पोह) महीने की देह ठिठुरा देने वाली सर्दी में अपने खेत की उन जानवरों से भी रक्षा करने का विचार छोड़ देता है, जो सारी रात उसके खेतों में घुस कर उसका सारा खेत चर कर नष्ट–भ्रष्ट कर जाते हैं। वह अपने द्वारा जलाई गई अलाव की आग के पास उसकी आँच को सेंकता रहता है। कहानी के अन्त में पत्नी द्वारा आपत्ति करने पर भी वह तनिक भी विचलित नहीं होता है। उसे मालगुज़ारी भरने के लिए भविष्य में दूसरों के खेतों में जा कर मज़दूरी करनी पडेगी, परन्तु उसे केवल इस बात की आश्वस्ति से मानसिक तुष्टि हो रही है कि 'रात की ठंड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा।' इस प्रकार हल्कू मानव–स्वभाव की सुख–सुविधा भोगने की प्रवृत्ति का ही पूर्ण प्रतिनिधित्व करता है। अतः इस कहानी को मनोविश्लेषणात्मक रचना की कोटि में रखा जा सकता है।

2.1.2 मुंशी प्रेमचन्द का जीवन–वृत्त ः

इनका जन्म सन् 1880 ईं में वाराणसी के समीपस्थ गाँव लमही में हुआ था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा वाराणसी में ही हुई थी। सन् 1896 ई॰ में इन्होंने स्कूल में अध्यापन–कार्य आरम्भ कर दिया था। सन् 1920 ई॰ में उस सरकारी नौकरी से त्याग–पत्र देने के बाद इन्होंने स्वतंत्र रूप से लेखन–कार्य प्रारम्भ किया। सुधा, चाँद, सरस्वती, प्रभा जैसी तत्कालीन पत्रिकाओं में इनकी मौलिक हिन्दी कहानियाँ, निबन्ध आदि प्रकाशित होते थे। पहले ये उर्दू भाषा में घनपत राय के नाम से ही लिखा करते थे। हिन्दी साहित्य में आ कर इन्होंने अपना लेखन–नाम प्रेमचन्द अपना लिया था। इन्हें हिन्दी कहानी का सर्वप्रथम सशक्त रचनाकार माना जाता है। इनकी 'कफ़न', 'पूस की रात', 'मनोवृत्ति', 'दो बैलों की कथा', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'सुजान भगत', 'पंच परमेश्वर' इत्यादि बहुत प्रसिद्ध रही हैं।

इनकी कहानियों में समाज–सुधार, राष्ट्रीय भावना, कृषकों की दुर्दशा, जातिवाद और छुआछूत की धारणा, दहेज, महाजनी सम्यता द्वारा कृषकों का शोषण, दलित जातीय नारियों का यौन–शोषण, साामजिक और धार्मिक अंधविश्वासों में आस्था, अनपढ़, दरिद्रता, बेकारी, मदिरापान आदि अन्यान्य समस्याओं को उकेरा गया है।

इनका 'गोदान' उपन्यास भारतीय कृषक जीवन का प्राकाणिक दस्तावेज़ माना जाता है। इसके प्रमुख पात्र होरी, धनिया, गोबर, सिलिया, मातादीन आदि ग्राम्य जीवन का पूर्ण प्रतिनिधित्व करते हैं और मिस्टर खन्ना, मालती, प्रो॰ मेहता आदि चरित्र नागर जीवन के पूर्ण प्रवक्ता (Mouthpieces, Spokesmen) कहे जा सकते हैं।

इनकी कहानी 'दो बैलों की कथा', 'सद्गति', 'शतरंज के खिलाड़ी'; उपन्यास 'गोदान', और 'गबन' पर छोटे–बड़े हिन्दी चलचित्र बनाए जा चुके हैं। इनके कहानी–संग्रहों और कहानी–संकलनों के कुछ नाम इस प्रकार हैं ः

1. प्रेम पच्चीसी, 2. प्रेम–द्वादशी, 3. प्रेम–चतुर्थी, 4. प्रेम–प्रसून, 5. नव–निधि, 6. ग्राम–जीवन की कहानियाँ, 7. मानसरोवर (आठ भाग), 8. प्रेम–पंचमी, 9. सप्तसुमन, 10. सप्त सरोज, 11. प्रेम–गंगा इत्यादि।

इनके ये मौलिक हिन्दी नाटक हैं ः 1. कर्बला, 2. संग्राम, 3. प्रेम की वेदी।

इनके अतिरिक्त इनके ये हिन्दी उपन्यास साहित्य में बहुचर्चित रहे हैं ः 1. प्रेमाश्रय, 2. वरदान, 3. निर्मला, 4. कर्मभूमि, 5. प्रतिज्ञा, 6. गबन, 7. रंगभूमि, 8. कायाकल्प, 9. गोदान और 10. अधूरा हिन्दी उपन्यास मंगल–सूत्र।

इतना ही नहीं इनके निबन्धों, लेखों इत्यादि के भी कुछ संकलन छप चुके हैं ः 1. चिट्ठी–पत्री, 2. कुछ विचार, 3. साहित्य का उद्देश्य, 4. तलवार और त्याग।

इनकी रचनाओं की भाषा सरल, मुहावरेदार, प्रवाहमयी और पात्रानुकूल होने के कारण सशक्त कही जायेगी। इनकी कथा–भाषा में कहावतों और सूक्तियों की भी भरमार देखने को मिलती है।

इनकी अंग्रेज़ी से हिन्दी में अनुदित रचनाओं के नाम ये हैं ः 1. फ़िसाने आवाज़, 2. चाँदी की डिबिया, 3. अहंकार, 4. सृष्टि का आरम्भ, 5. हड़ताल।

इन्होंने अपने जीवन–काल में इन पत्र–पत्रिकाओं का सम्पादन किया था ः 1. माधुरी, 2. मर्यादा, 3. जागरण, 4. हंस।

2.1.3 'पूस की रात' कहानी की तात्त्विक समीक्षा

इस कहानी में एक ऐसे निर्धन कृषक की दयनीय दशा का मार्मिक बखान हुआ है, जो महाजन से लिये गए ऋण के भार से बुरी तरह दबा हुआ है। फिर भी पूस मास की कड़कती सर्दी में रात के समय जाग कर अपने खेत में चरते हुए जानवरों से उसकी रक्षा तक नहीं करता है। इस तरह आँखों के ठीक सामने अपना खेत बर्बाद हो जाने पर वह सरकार को मालगुज़ारी चुकाने के लिए एक किसान से साधारण खेत–मज़दूर बन जाने की करुण त्रासदी भोगने के लिए विवश हो जाता है। कहानीकार के मतानुसार तत्कालीन क्रूर सामन्ती वयवस्था में किसान अन्न, वस्त्र की समुचित व्यवस्था से भी पूरी तरह से वंचित थे। हल्कू नामक कथानायक इस निर्मम व्यवस्था से लड़ने की अपेक्षा अनेक आगे पूरी तरह से समर्पण करके दीन–से–दीनतर अवस्था में पहुँच जाता है। यही इस कहानी का मुख्य वर्ण्य विषय है।

कहानी में शीत के कारण हल्कू के शरीर में अकर्मण्यता और आलस्य ठीक उसी प्रकार से घर कर लेता है, जिस प्रकार से 'कफ़न' कहानी के घीसू और माधव के शरीर में। स्थूल दृष्टिकोण से इसे एक प्रतिक्रियावादी सोच का प्रमाण समझा जा सकता है, जबकि यह कहानी क्रूर और निर्मम सामन्ती व्यवस्था को ही उस के चारित्रिक पतन का पूर्णतः उत्तरदायी ठहराती है। हल्कू की कामचोरी या निष्क्रियता का मूल कारण 'सहना' नामक महाजन ही है, जिससे उसने ढेर सारा ऋण ले रखा है। महाजन का 'सहना' नाम भी अत्यंत व्यंजनापरक है, क्योंकि किसानों को ऐसे सूदख़ोर महाजनों की अधिक ब्याज दर और अन्य अत्याचारों को मन मार कर 'सहना' ही पड़ता है।

इस प्रकार लेखक यहाँ कोई नक़्ली आदर्श खड़ा नहीं करता है। वह हल्कू को 'गोदान' उपन्यास के होरी की तरह किसी सशस्त्र क्रान्ति के लिए तैयार नहीं करता है। हाँ, वह एक ऐसी त्रासदी अवश्य रच देता है, जिसकी करुण अनुगूँज पाठकों के मनों में निर्दयी व्यवस्था के प्रति सार्थक आक्रोश उत्पन्न करने में सफल माना जा सकता है।

कथावस्तु ः

हल्कू अपने नाम के विपरीत काफ़ी मोटा और भारी था। शायद इसी कारण वह कामचोर और आलसी भी हो चुका था। वह अपनी पत्नी मुन्नी से वे तीन रुपये माँगता है नज़र आता है, जो उसने आगामी जोड़े में इस बार एक कम्बल ख़रीदने के लिए पहले से अलग रखे हुए थे। जब हल्कू वे रुपये सहना का बक़ाया चुकाने के लिए माँगता है, तब मुन्नी उसका विरोध करती है। तब हल्कू पत्नी को यह तर्क देता है कि महाजन सहना की गालियाँ और बकझक उससे अब अब सहन नहीं होती है। हाँ, जाड़ा तो वह जैसे–तैसे काट ही लेगा। बहस के बाद पत्नी वे तीन रुपये पति को निकाल कर दे देती है। यहाँ हल्कू के जिस स्वाभिमान की ओर संकेत हुआ है, वह डॉ॰ शिव कुमार मिश्र के मतानुसार " 'टिपिकल' (Typical) किसान का स्वभाव नहीं है।" वे आगे लिखते हैं, "ऐसी स्थिति में महज़ सहना की गालियों से भयभीत हल्कू का अपने जाड़े को, जाड़े के दिनों में बिना कम्बल खड़ी फ़सल की रखवाली को दाँव पर लगा देना, किसान–आचरण नहीं लगता।" – (पुस्तक, 'कहानीकार प्रेमचन्द ः रचना–दृष्टि और रचना–शिल्प)

कहानी के आरम्भ में हल्कू अपनी पत्नी से कहता है, "बला से जाड़ों में मरेंगे, बला तो सिर से टल जाएगी।"

वासतव में महाजन रूपी 'बलाओं' को तो अपने सिरों से टालने के लिए कितने ही कृषक प्राकृतिक संकटों यथा गर्मी–सर्दी, अकाल, बाढ़ आदि को अनिच्छापूर्वक सहते ही चले जाते हैं।

महाजनों–साहूकारों द्वारा किसानों–मज़दूरों के होने वाले शोषण को हल्कू किसान की बुद्धिमती पत्नी केवल इस एक वाक्य में यों समेट कर रख देती है ः–

"न जाने कितनी बाक़ी है, जो किसी तरह चुकने में ही नहीं आती..........."

ऐसे कृषकों को तो अपनी सारी मज़दूरी भी खेती में ही झोंक देनी पड़ती है। तभी तो ऋण के लिए तीन रुपये

निकाल कर देते समय हल्कू को कुछ ऐसा अनुभव होता है, मानो वह अपना हृदय ही उसे निकाल कर देने जा रहा हो।

वास्तव में 'सहना' जैसे क्रूर महाजनों से तो जबरा जैसे कुत्ते ही कहीं उत्तम हैं, जो स्वार्थों–हितों की बात कभी सोचते तक नहीं हैं और अपने स्वामी (हल्कू) की नींद में ज़रा–सा ख़लल पड़ते देख कर झट से अपनी स्वाभाविक 'कूँ–कूँ' तक बंद कर दिया करते हैं। इधर हल्कू भी उस कुत्ते की दुर्गन्धमयी देह की पर्वाह न करके उसे अपने अभिन्न बन्धु–बान्धव की ही तरह अपने गले से लगा लेता है और अपनी साँसों की उष्मा से उसकी ठण्डी देह को सेंक पहुँचाता है। नायक निर्धन हल्कू का यह विलक्षण पशु–प्रेम देखते ही बनता है।

जबरा कुत्ते का पेट में मुँह डाले कड़ाके की सर्दी में 'कूँ–कूँ' करना, स्वामी के मुख की ओर प्रेम से दलकती आँखों से देखना, उसकी घुटनियों पर अपने अगले पंजे रखना, उसके मुँह के पास मुँह ले जा कर गर्म साँसों का स्पर्श महसूसना, उसकी गोद में चिपट कर स्पर्श–सुख पाना, 'हार' में चारों ओर दौड़–दौड़ कर भौंकते हुए अपने स्वामी को उसका कर्त्तव्य याद दिलाना; दुम हिला–हिला कर और 'कूँ–कूँ' करके उसकी बातों का अपने ढंग से उत्तर देना, हड्डी को चिचोड़ना, कूद कर आग को पार करने की अपेक्षा केवल गोलाकार घूम कर दूसरी ओर जा खडत्र होना और कहानी के अंत में नीलगायों के द्वारा हल्के का सारा खेत उजाड़े जाते देख कर कुत्ते जबरे का गला फाड़–फाड़ कर भौंकते चले जाना इत्यादि भाव–भंगिमाओं को श्वानों की बुद्धि और चेष्टाओं के संबंध में लेखक की जानकारी पता चलती है। कहानी में यद्यपि कथा–तत्त्व या घटनाओं का अभाव है, तथापि इस रचना से कुत्ते जैसे पशुओं के स्वभाव का गहरा प्रमाण मिलता है।

अत्यंत शीत में ठिठुरता हुआ हल्कू पूँजीपतियों के विषय में इस प्रकार सोचता है "और एक–एक भाग्यवान् ऐसे पड़े हैं कि जिनके पास जाड़ा जाये, तो गर्मी से घबड़ा कर भागे। मोटे–मोटे गद्दे, लिहाफ़ ! मजाल है, जाड़े का गुज़र हो जाये। तक़दीर की खूबी है। मजूरी हम करें, मजा दूसरे लूटें।"

इस प्रकार इस कहानी में भी प्रेमचन्द ने सामाजिक चेतना और प्रगतिशीलता वाले विचार तो व्यक्त किए हैं, परन्तु अपनी विचारधारा को किसी 'प्रचार' का हथियार या 'वाद' का बिगुल नहीं बनने दिया है। एक ओर हल्कू को लेखक ने एक व्यक्ति–चरित्र या व्यक्तित्व–सम्पन्न पात्र (Individual Character) के रूप में ही प्रस्तुत किया है। दूसरी ओर वर्ग–संघर्ष की चेतना भी व्यंजित की है।

कहानी के अंत में नीलगायों द्वारा हल्कू के खेत चरे जाते हैं, फिर भी उसे सर्दी की रात में ठिठुरने से अपना बचाव कर लेने में अपार आत्म–तोष अनुभव होता है। अच्छी ख़ासी खेती नष्ट होने के बाद अब उसे दूसरों के खेतों में जा कर मज़दूरी का काम आरम्भ करना पड़ेगा। अब चाहे उसे दो जून की रोटी मिलने में अपार दिक्कतों का सामना करना पड़ेगा, परन्तु आगे से उसे घर की उष्मा तो मिलती रहेगी। 'घर' के प्रति हल्कू का यही क्षुद्र आकर्षण उसकी सर्वहारा चेतना का स्पष्ट प्रमाण है। वास्तव में 'कफ़न' कहानी के घीसू और माधव जैसे पात्रों की ही तरह हल्कू भी निजी स्वार्थ–भावना की पूर्ति का इसलिए शिकार है, क्योंकि उसके आगे अन्य कोई चारा या विकल्प शेष बचा ही नहीं है।

नीलगायों द्वारा सारा खेत रौंदा हुआ देख कर उसकी पत्नी मुन्नी उस (हल्कू) अत्यन्त चिन्तित स्वर में कहती है, 'अब मजूरी करके मरलगुज़ारी भरनी पड़ेगी।'

इसके बाद हल्कू प्रसन्न मुख से कहता है, "रात को ठण्ड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा।"

इस प्रकार यह कहानी अपनी अच्छी ख़ासी खेती को स्वयं ही लात मार कर खेत–मज़दूर बन जाने वाले किसानों की विवशता और व्यथा का एक कच्चा चिट्ठा प्रस्तुत करती है। इसमें सामाजिक शोषण का विरोध हल्के ढंग से ही व्यंजित किया गया है।

पात्रों का चरित्र–चित्रण ः

'पूस की रात' कहानी में मुख्यतः हल्कू नामक किसान और गौणतः उसकी पत्नी मुन्नी का गहन मनोविश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। हल्कू अत्यन्त सहनशील स्वभाव का प्राणी है, इसलिए उसमें अन्याय के विरुद्ध विद्रोह का स्वर दबा–दबा–सा ही है।

हल्कू की पवित्र आत्मा में पशु कुत्ते के प्रति प्रेम की सुगन्ध तो थी, परन्तु घृणा का लेशमात्र न था। उसकी गोद में उसका जबरा नामक कुत्ता भी मानो स्वर्ग के–से सुख का उपभोग करता नज़र आता है।

हल्कू समाज के उन पूँजीपतियों के प्रति खिन्न है, जिनके पास कड़ाके की सर्दी में यदि जाड़ा भी जाए, तो मोटे–मोटे गद्दों और लिहाफ़ों से डर कर भागे। 'मजूरी' हम करें, मज़ा दूसरे लूटे' के आत्मगत चिन्तन में उसका विद्रोह केवल संकेतित ही होता है।

हल्कू के विपरीत उसकी पत्नी मुन्नी में शोषित लोगों के आक्रोशपूर्ण तेवरों का पूर्ण प्रतिनिधित्व हुआ माना जा सकता है। इस कथन के विपरीत डॉ॰ शिवकुमार मिश्र का वक्तव्य है, "हल्कू का जैसा चरित्र कहानी में है, वह किसान–जीवन की त्रासदी नहीं लगता। कारण हल्कू एक 'टाइप' किसान–चरित्र है हि नहीं। उनकी त्रासदी व्यक्तिगत त्रासदी है, उसकी अकर्मण्यता और पराएपन के नाते।" – (पूर्वोक्त पुस्तक, पृ॰ 72)

इस कहानी में मुन्नी अपने पति हल्कू की अपेक्षा अधिक बुद्धिमती और व्यावहारिक ठहरती है। वह पहले से जानती है कि आगामी जाड़े में कम्बल ख़रीदने के लिए जोड़ कर रखे गए तीन रुपये सहना महाजन को देने के बाद कम्बल ख़रीदा ही नहीं जा सकेगा। वह उबलती हुई कहती भी है :–

"बाक़ी चुकाने के लिए ही तो हमारा जन्म हुआ है" या लहना के कठोर स्वभाव को लक्ष्य करके वह पति से कहती है, "गाली क्यों देगा, क्या उसका राज है ?" या फिर उसका यह कथन देखें, "मजूरी में सुख से एक रोटी खाने को तो मिलेगी। किसी की धौंस तो न रहेगी। अच्छी खेती है। मजूरी करके लाओ, वह भी उसी में झोंक दो, उस पर धौंस।" यहाँ स्त्री मुन्नी का व्यवहार मर्दाना–सा है।

यह 'गोदान' उपन्यास की नायिका धनिया की भाँति रणचण्डी और आक्रोश की उबलती–खौलती मूर्ति–सी बन कर कहानी में रंगमंच पर अवतरित हुई है। कहानी में एक पात्र के रूप में उसकी भूमिका छोटी–सी हो कर भी हल्कू को प्रेरणा देने की दृष्टि से कुछ बड़ी ही हो गई है। कथान्त में वह अपने पति को आलस्य दिखाने और घोड़े बेच कर सोते रहने पर बुरी तरह से कोसने लगती है, जोकि उसके मर्दाना स्वभाव के सर्वथा अनुरूप बन पड़ा है।

कहानी में जहाँ हल्कू एक व्यक्तित्व–सम्पन्न चरित्र (Individual Character) है, वहाँ शोषित पति की पत्नी के नाते मुन्नी एक वर्गीय या प्रतिनिधि चरित्र (Typical Character) है। उनका चरित्रगत वैषम्य ही इस चरित्र–प्रधान मनोवैज्ञानिक कहानी में विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं।

वैसे दोनों ही चरित्र गतिशील (Rounded Charactres) न हो कर पूर्ण रूप से स्थिर (Flat Characters) ही कहे जाएँगे। इसका कारण आदि से ले कर अन्त तक दोनों चरित्रों में स्वभावगत स्थिरता और एकरूपता (Consistency) ही कही जायेगी।

कुत्ते जबरा का चरित्र–निरूपण भी कहानीकार प्रेमचन्द की सिद्धहस्त कहानी–कला का ही परिचायक है। कहानी–पात्रों के शील–निरूपण और चरित्र–चित्रण की दृष्टि से सफल रचना मानी जा सकती है।

संवाद–योजना ः

इस कहानी के संवाद दीर्घ न हो कर अत्यन्त संक्षिप्त, चुस्त–दुरुस्त और पात्रानुकूल हैं। उनकी भाषा भी समाज में उनकी वर्गीय विशेषता से लैस है।

डॉ॰ शिवकुमार मिश्र का यह वक्तव्य द्रष्टव्य है, " 'पूस की रात' (कहानी) का वही अंश सबसे मार्मिक है, जिसमें जबरा और हल्कू परस्पर संवाद करते हैं, अपना सुख–दुःख बाँटते हैं, पूस की रात अपने आतंकदायी शीत से उन्हें एकात्म कर देती है। उनमें चुहल भी होती है। जबरा आम के बाग़ में सूखी पत्तियों को इकट्‌ठा कर जलाए गए अलाव के आर–पार कूदता है। हल्कू और जबरा यहाँ मनुष्य और पशु न हो कर सह–अनुभूति के तार में बँधे प्राणी मात्र हैं, अपनी पृथक् अस्मिताओं को भूले हुए।" – (पूर्वोक्त पुस्तक, पृ॰ 71)

नायिका मुन्नी एक आम भारतीय नारी के–से स्वर में कथान्त में पति की अकर्मण्यता पर बरसते हुए कहती है, "क्या आज सोते ही रहोगे ? तुम यहीं आ कर रस गए और उधर सारा खेत चौपट हो गया। इसके बाद हल्कू के द्वारा किए गए एक बहाने में भी सदियों का दबा पुरुष–वर्चस्व इन शब्दों में मुखर हो उठता है ः–

"मैं मरते–मरते बचा। तुझे अपने खेत की पड़ी है। पेट में ऐसा दर्द हुआ कि मैं ही जानता हूँ।"

इसी प्रकार कहानी में इस आरम्भिक कथन से पति हल्कू का स्वाभिमान ही फूट पड़ता है, "सहसा आया है। लाओ, जो रुपये रखे हैं, उसे दे दूँ, किसी तरह गला तो छूटे।"

मुन्नी कहती है, "तीन ही तो रुपये हैं। दे दोगे, तो कम्बल कहाँ से आएगा ? माघ–पूस की रात हर में कैसे कटेगी ? उससे कह दो। फ़सल पर दे देंगे, अभी नहीं।" इस कथन से उसकी दूरदर्शिता, व्यावहारिकता और सहजकोपिता की ही स्वभावगत प्रवृत्तियाँ रेखांकित होती हैं। आगे भी वह कहती है, "कर चुके दूसरा उपाय। ज़रा सुनूँ तो कौन उपाय करोगे। कोई खैरात दे देगा कम्बल ? न जाने कितनी बाक़ी है, जो किसी तरह चुकने ही नहीं आती। मैं कहती हूँ, तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते ? मर–मर काम करो, उपज हो तो बाक़ी दे दो, चलो छुट्टी हुई। बाक़ी चुकाने के लिए ही तो हमारा जन्म हुआ है। पेट के लिए मजूरी करो। ऐसी खेती से बाज़ आए।"

इस कथन से जहाँ मुन्नी अपने पति को खेती छोड़ कर मज़दरी करने के लिए प्रेरणा देती हुई एक पृष्ठपीठिका तैयार करती हैं, वहाँ सहना जैसे साहूकारों द्वारा भाले–भाले किसानों की आर्थिक विवशता का लाभ उठाते हुए उन्हें अत्यधिक ब्याज–दरों पर ऋण देने, बाक़ी चुकाने पर भी ग़लत सलत हिसाब रखने और उनका निरन्तर शोषण करने चले जाने पर की पूरी कहानी समेट कर रख दी गई है।

कहानी में स्वगत संवाद का एक उदाहरण देखें। हल्कू अपने कुत्ते जबरा से कहता है, "पिएगा चिलम", जाड़ा तो क्या जाता है, हाँ, ज़रा मन बहल जाता है।"

आगे भी वह कुत्ते से किसी आत्मीय की तरह से स्नेहपूर्ण स्वर में बतियाना चला जाता है, "कैसी अच्छी महक आई जबरू ! तुम्हारी नाक में भी कुछ सुगन्ध आ रही है ?"

आगे भी कहता है, "क्यों जब्बर, अब ठंड नहीं लग रही है ?"

जब्बर ने 'कूँ–कूँ' करके मानो कहा, "अब क्या ठंड लगती रहेगी ?"

"पहले से यह उपाय न सूझा, नहीं तो इतनी ठंड क्यों खाते ?"

"अच्छा आओ, इस अलाव को कूद पर पार करें। देखें, कौन निकल जाता है। अगर जल गए बच्चा, तो मैं दवा न करूँगा।"

आगे भी वह अलाव पार करने के इस जोखिम–भरे खेल के सम्बन्ध में जबरा से कहता है, "मुन्नी से कल न कह देना, नहीं तो लड़ाई करेगी।"

इस प्रकार इस कहानी के संवाद गागर की तरह चुस्त और प्रभावपूर्ण हैं। संवादों की भाषा भी पात्रों के मानसिक और सामाजिक स्तर के सर्वथा अनुरूप है। यथा, पत्नी मुन्नी पति हल्कू से कहती है, "हाँ, सारे खेत का सत्यानाश हो गया। भला, ऐसा भी कोई सोता है। तुम्हारे यहाँ मँडैया डालने से क्या हुआ ?"

इस प्रकार संवाद–योजना की कसौटी पर भी यह कहानी खरी उतरती है।

देशकाल और वातावरण ः

इस कहानी का आरम्भ यद्यपि घर से होता है, तथापि आगे चल कर घटना–केन्द्र कथानायक हल्कू का खेत–खलिहान ही केन्द्र में आ जाता है। प्रेमचन्द प्रकृति और परिवेश के अनूठे रेखांकन में कला–पक्ष प्रतीत होते हैं। गद्य की समास–शैली में पिछली शताब्दी के आरम्भ के आसपास या मध्यकाल की परिस्थितियों का सशक्त उरेहन हुआ है। समाज की अपेक्षा प्रकृति के दृश्यों का अंकन देखते ही बनता है।

कहानी के शीर्षक के अनुरूप प्रकृति की नयनाभिराम पृष्ठभूमि प्रस्तुत की गई है। पूस की अँधेरी रात में आकाश पर ठिठुरते हुए तारों का उद्दीपन–रूप में चित्रण तो यहाँ हुआ ही है, साथ ही खेत के किनारे ऊख के पत्तों की छतरी, बाँस का खटोला, पुआल, बर्फ़ीली पछुआ हवा, उससे आग का और धधकना, अंधकार के बाद सप्तर्षियों की चढ़ाई से रात बीतने का अनुमान लगाने की प्राचीन जन–शैली, पतझड़ में पत्तियों को बटोर कर आग जलाने की लोक–शैली, अरहर के खेत में पौधे उखाड़ कर उसका झाड़नुमा उपला सुलगाना, अंधकार में निर्दय पवन द्वारा वृक्षों की पत्तियों को कुचलते हुए चले जाना और वृक्षों से ओस की बँदों का 'टप–टप' टपकना – ये सब एक ओर प्रकृति के अनूठे दृश्यगत बिम्ब साकार करते हैं, साथ ही ग्राम–सभ्यता और संस्कृति की पृष्ठभूमि खड़ी करते चलते हैं।

रूपगत बिम्बों की मनोहारी योजना से प्राकृतिक वातावरण सवाक् हो उठता है। अलाव की लौ ऊपर उळ कर वृक्ष की पत्तियों को छू–छू कर भागती नज़र आती है। इसी प्रकार अंधकार को सिरों पर सँभ्साले खड़े विशालकाय वृा और उनमें उस अलाव का प्रकाश तम–सागर में 'एक नौका के समान हिलता–मचलता' भासित होता है। ऐसे अनेक रूप–चित्र

और अग्नि–बिम्ब कहानी के कथ्य के समानान्तर एक दूसरा संसार हमारे सामने खड़ा करते हुए कथाकार के भावुक कवि–हृदय के प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

निर्धन जन एक ओर तो पेट की आग बुझाने की समस्या से पीड़ित रहते हैं, दूसरी ओर, शीलकाल में अपनी देहों को तपाने–गर्माने की समस्या से ग्रस्त बस जैसे–तैसे जीये चले जाते हैं। समग्रतः देशकाल और वातावरण के निरूपण की दृष्टि से यह एक सशक्त कहानी कही जा सकती है।

भाषा-शैली ः

इस कहानी की भाषा सरल, सहज और मुहावरेदार हिन्दी ही है। स्थल–स्थल पर मुहावरों, कहावतों, सूक्तियों आदि से इसकी भाव–प्रेषण–क्षमता को निखारा जा सका है। यहाँ कुछेक निदर्शन प्रस्तुत हैं ः–

1. उपमा ः 1. अकर्मण्यता ने रस्सियों की भाँति उसे चारों तरफ़ से जकड़ रखा था।
2. एक भीषण जन्तु की भाँति उसे धूर रहा था।

2. मुहावरे ः 1. 'किसी तरह गला तो छूटे'
2. 'बला तो सिर से टल जाएगी'
3. 'आँखें तरेरती हुई बोली'
4. 'मर–मर काम करो'
5. 'अब रोओ नानी के नाम को'

3. हास्य रस ः

'वह (हल्कू) अपना भारी–भरकम डील लिए हुए (जो उसके नाम को झूठ सिद्ध करता था)...''

4. संस्कृत तत्सम शब्द ः

उपाय, स्त्री, अनिश्चित, दशा, मसतक, दीनता, दीर्घ, श्वान, बुद्धि, स्वामी, मन, पिशाच, स्वर्ग, दुर्गन्ध, अनुभव, सुख, पवित्र, आत्मा, अभिन्न, मित्र, तत्परता इत्यादि।

5. तद्भव शब्द ः

पूस (सं॰ पौष), हाथ (सं॰ हस्त), छत्तरी (सं॰ छत्र), बाँस (सं॰ वंश), आँख, नींद (सं॰ निद्रा), पूरी, पीठ, (सं॰ पृष्ठ), आठ, मुँह, साँस, भाई इत्यादि।

6. देशज शब्द ः

हार, गाढ़े (की चादर), खटोले, झोंक, डाँडु, पुआल, चादर, घुटनियों, ठण्ड, हलुवा, पछुआ, चिलम, मजूरी इत्यादि।

7. अरबी-फ़ारसी-उर्दू शब्द ः

खुशामद, शायद, लिहाफ़, मज़ा, तकरीर, खूबी।

8. ध्वन्यात्मक शब्द ः

चर–चर, कूँ–कूँ।

कहानी में चरित्र–चित्रण की जो विविध शैलियाँ अपनाई गई हैं, वे और उनके उदाहरण इस प्रकार हैं ः–

1. एक पात्र द्वारा अन्य पात्र का चरित्र-चित्रण ः

मुन्नी सहना नामक महाजन के सम्बन्ध में अपने पति हल्कू से कहती है कि "गाली क्यों देगा, क्या उसका राज है ?"

हल्कू पत्नी के बारे में कुत्ते से यों सम्बोधित होता है, "मुन्नी से कल न कह देना, नहीं तो लड़ाई करेगी।"

2. एक पात्र द्वारा समूह–चित्रण ः

1. हल्कू पूँजीपतियों के बारे में कहता है, "और एक भागवान ऐसे पड़े हैं, जिनके पास जाड़ा जाए, तो गरमी से घबड़ा कर भागे। मोटे–मोटे गद्दे, लिहाफ़, कम्बल। मज़ाल, जाड़े का गुज़र हो जाए।"

2. मुन्नी सहना जैसे महाजनों की अर्थलोलुपता, बेईमानी और आर्थिक शोषण की ओर संकेत करती हुई पति से कहती

है, "तुम छोड़ दो, अब की से खेती। मूजरी में सुख से एक रोटी खाने को तो मिलेगी। किसी की धौंस तो न रहेगी। अच्छी खेती है। मजूरी करके लाओ, वह भी उसी में झोंक दो, उस पर धौंस।"

3. पात्र द्वारा आत्म चित्रण ः

कहीं कोई पात्र अपना ही शील–निरूपण करता नज़र आता है। यथा ः

1. "पिएगा चिलम, जाड़ा तो क्या जाता है, हाँ, ज़रा मन बहल जाता है।"
2. "रात की ठण्ड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा।"

कहानी में शब्दगत, रूपगत और गंधगत बिम्बों की भरमार है। यथा ः

1. शब्दगत बिम्ब ः 1. उनके चबाने की आवाज़ चर–चर सुनाई देने लगी।
2. वृक्षों से ओंस की बूँदें नीचे टपक रही थीं।

2. रूपगत बिम्ब ः

"अलाव जल उठा। उसकी लौ ऊपर वाले वृक्ष की पत्तियों को छू–छू कर भागने लगी। उस अस्थिर प्रकाश में बग़ीचे के विशाल वृक्ष ऐसे मालूम होते थे, मानो उस अथाह अंधकार को अपने सिरों पर सँभाले हुए हों। अन्धकार के उस आनन्द–सागर से यह प्रकाश एक नौका के समान हिलता मचलता हुआ जान पड़ता था।"

3. गन्धगत बिम्ब ः

"एकाएक एक झोंका मेंहदी के फूलों की खुशबू लिए आया। हलकू ने कहा – कैसी अच्छी महक आई, जबरू। तुम्हारी नाक में भी कुछ सुगन्ध आ रही है।"

समग्रतः यह कहानी सशक्त भाषा–शैली का दृष्टान्त प्रस्तुत करती है।

उद्देश्य ः

प्रत्येक सशक्त कहानी की ही तरह 'पूस की रात' भी एक सोद्देश्य रचना है। प्रेमचन्द की 'कफ़न' कहानी में भी व्यंजना यह है कि घीसू और माधव सोचते हैं कि उनके समाज में जब उन जैसे निर्धनों का सदैव शोषण होना ही है, तो वे व्यर्थ ही परिश्रम क्यों करें ? वे दोनों पात्र उस शोषकीय मनोवृत्ति को नकारते हैं। अन्य मूर्ख किसानों के समूह में इस दृष्टि से वे दोनों विचारवान् कहे गए हैं। 'पूस की रात' का नायक हल्कू उन्हीं दोनों पात्रों का प्रतिरूप प्रतीत होता है, जो लहना जैसे साहूकारों से अपनी खेती के लिए ऋण लेने चले जाने से बेहद कंगाली की जिस दशा में पहुँच जाता है, उसके विरोध में नील–गायों से अपना सारा खेत नष्ट करवा कर एक खेत–मज़दूर का जीवन जीते हुए आत्मनिर्भर होना चाहता है। प्रेमचन्द इस पतन के लिए दूषित सामाजिक और आर्थिक अवस्था को पूर्णतः दोषी ठहराते हैं। इस कहानी में मुख्य प्रयोजन यही है, जिसे मात्र दो पात्रों द्वारा कथाकार ने गहराई से रेखांकित किया है।

2.1.4 प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्याएँ

1. कोई खैरात दे देगा..ऐसी खेती से बाज आए।

प्रसंग ः ये गद्य–पंक्तियाँ हिन्दी कहानी 'पूस की रात' से ली गई हैं। यह कहानी हिन्दी कथा–साहित्य के प्रवर्त्तक और सर्वश्रेष्ठ लेखक मुंशी प्रेमचन्द द्वारा रचित एक चरित्र–प्रधान मनोवैज्ञानिक कहानी है। यह कहानी बी॰ ए॰ प्रथम वर्ष हिन्दी की पाठ्य–पुस्तक 'सात कहानियाँ' (सम्पादक ः डॉ॰ ईश्वरदास जौहर) में संकलित हैं। इस गद्यांश में सहना जैसे महाजन के द्वारा भोले–भाले कृषकों के होने वाले आर्थिक शोषण पर कटाक्ष किया गया है। इन पंक्तियों से पहले कथानायक हल्कू आने वाले जाड़े में एक कम्बल ख़रीदने के लिए एक–एक पैसा काट कर जोड़े हुए तीन रुपये भी पत्नी मुन्नी से निकलवा कर सहना को दे देना चाहता है। वह पत्नी को यह कह कर आश्वस्त करता है कि वह कम्बल ख़रीनदे के लिए कोई दूसरा उपाय सोचेगा।

पत्नी अच्छी तरह जानती है कि पति केवल सहना महाजन की घुड़कियों और गालियों के अनुमान मात्र से ही अपने खून–पसीने की कमाई उसे सौंपने के लिए जा रहा है। अपने पति के भीरु और सहनशील स्वभाव के विपरीत पत्नी मुन्नी इस उत्तर या प्रतिक्रिया द्वारा अपना रणचण्डी वाला रूप प्रदर्शित करती है। वह उससे कहती है कि –

व्याख्या ः तुम दूसरा उपाय करके जाड़े में कम्बल ख़रीद लेने का केवल एक बहाना भर ही कर रहे हो। अन्यथा मुझे भी उस उपाय के बारे में स्पष्ट रूप से बताओ तो सही। उसके कहने का आशय यही है कि महाजन को बाकी चुकाने में ये

कठिनाई से जमा किए गए तीन रुपये भी टेंट से निकाल जायेंगे और इस बार भी जाड़े में सर्दी से बचने के लिए वह कोई भी कम्बल नहीं ख़रीद पायेगा। कोई व्यक्ति उसे भीख या दान में तो कम्बल देने से रहा।

इसके बाद मुन्नी सहना साहूकार के हिसाब–किताब की गड़बड़ी और व्यावसायिक बेईमानी पर सीधा प्रहार करती हुई व्यंग्यपूर्वक कहती है कि पता नहीं, अभी और कितनी राशि ऋण के रूप में हमें चुकानी पड़ेगी। यहाँ हम सारा वर्ष अपने हाड़ तोड़–तोड़ कर अन्न उपजाते हैं, परन्तु अन्त में फ़सल कटने पर लगभग सारी कमाई हमें इस साहूकार को भेंट कर देनी पड़ती है। हम अपना पेट भरने के लिए ही तो इतना दमतोड़ परिश्रम किया करते हैं, परन्तु फिर भी लाभ का अधिकांश सहना महाजन मार कर बकाया चुकाने के नाम पर ले जाया करता है।

अन्त में मुन्नी यह संकेत भी करती है कि वे इस तरह की घाटे की खेती–बाड़ी करना ही नहीं चाहते हैं।

गद्य-सौष्ठव ः इस गद्यांश में कथान्त की ओर पहले से ही संकेत हो जाता है, जिसे नाटक की पारिभाषिक शब्दावली में नाटकीय व्यंग्य (Dramatic Irony) कहा जाता है। कहानी के अन्त में भी कड़ाके की ठण्डी रात में नीलगायें जब हल्कू का सारा खेत चर जाती हैं, तब वह ठण्ड से बचने के लिए अलाव के पास सिकुड़ कर बैठा रहता है। पत्नी आ कर उसे आगे से मज़दूरी करके मालगुज़ारी भरने की बात कहती है।

इन पंक्तियों में कटाक्ष, व्यंग्य और सांकेतिकता के कारण संवाद अत्यंत पैना और मारक प्रभाव वाला हो गया है।

2. तुम छोड़ दो अब की से खेती..उस पर धौंस।

प्रसंग ः हिन्दी कथा–साहित्य के आदि सम्राट् मुंशी प्रेमचन्द की हिन्दी कहानी 'पूस की रात' (कथा–संकलन ः 'सात कहानियाँ, सम्पादक ः डॉ॰ ईश्वरदास जौहर) से यह गद्यांश उद्धृत किया गया है। यह कथन कथानक हल्कू से उसकी पत्नी मुन्नी द्वारा कहा गया है। इससे पहले जब वह पति को एक–एक पैसा करके जाड़े में कम्बल ख़रीदने के लिए जोड़े गए तीन रुपये महाजन सहना को बकाया चुकाने के नाम पर न देने का हठ करती है, तब हल्कू उसे सहना द्वारा गालियाँ खाने की बात करता है और वह (मुन्नी) क्रोधपूर्वक कहती है कि गालियाँ भला वह क्यों देगा ? क्या उसी का राज्य है ? फिर भी आले में रखे रुपये उठा कर देते हुए वह पति हल्कू से इन शब्दों में अपने मनोगत आक्रोश का प्रकाशन करते हुए कहती हैं ः–

व्याख्या ः मुन्नी कहती है कि तुम्हें इस बार खेती–बाड़ी का यह घाटे का धँधा छोड़ देना चाहिए। यदि तुम दूसरों के खेतों में मज़दूरी का भी कार्य करना आरम्भ करोगे, तो सुख से रोटी तो खाने योग्य हो सकोगे। वर्तमान काल में तो कठोर परिश्रम करते रहने पर भी तुम्हें सहना महाजन की घुड़कियाँ, गालियाँ और बार–बार धौंस बरदाश्त करनी पड़ती है। यह खेती–बाड़ी का भी कैसा घाटे वाला काम है कि परिश्रम करके तुम जो थोड़ी–बहुत धन–राशि कमाते हो, अन्त में इसी खेती के रख–रखाव के लिए महाजन से लिए गए ऋण चुकाने में ही खप जाया करती है। इतना घाटा उठाने पर भी तुम्हें महाराज की उल्टी–सीध ी बातें सुननी पड़ती हैं।

गद्य–सौष्ठव ः इस गद्यांश की भाषा अत्यंत सरल और प्रवाहमयी हिन्दी है। साथ ही उसमें भावों को व्यक्त करने की अपूर्व क्षमता भी है। नारीजनोचित भाषा का नूमना 'तुम छोड़ दो अब की से खेती' जैसे वाक्यों से मिल जाता है। 'मजूरी' शब्द उर्दू शब्द 'मज़दूरी' का तद्भव रूप है। 'झोंक देना' किसी बात को व्यर्थ लगाने, ख़र्च कर देने के अर्थ में लोक–प्रचलित मुहावरा कहा जाएगा। रात को रबड़ या केंचुये की तरह फैला कर रहने के कारण यहाँ गद्य की व्यास–शैली का प्रयोग माना जा सकता है।

3. मुन्नी ने चिंतित हो कर कहा..................................यहाँ सोना तो न पड़ेगा।

प्रसंग ः यह संवाद मुंशी प्रेमचन्द की प्रसिद्ध कहानी 'पूस की रात' के अन्त से उद्धृत किया गया है। यह कहानी पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला की बी॰ ए॰ प्रथम वर्ष के हिन्दी विषय की पाठ्य–पुस्तक 'सात कहानियाँ' से संकलित हैं। इस पुस्तक के सम्पादक डॉ॰ ईश्वरदास जौहर हैं।

इन दो संवादों से पहले पूस की ठण्डी रात में नीलगायें हल्कू का सारा खेत चर कर जाती हैं, किन्तु वह आलाव के पास सवेरे तक आग सेंकता हुआ बैठे सो जाता है। उसकी पत्नी आ कर जानवरों द्वारा पूरी तरह से नष्ट को देख कर यह आपत्ति करती है कि भला इस तरह से भी कोई गहरी नींद में सोया करता है। उनके यहाँ मंडैया डालने का लाभ ही क्या हुआ है ? इसके बाद हल्कू यह बहाना करता है कि वह तो रात कड़ाके की सर्दी में मरते–मरते बचा है, जबकि उसे

अपने खेत की हानि की ही सूझ रही है। फिर वह नीलगायों को उठ कर न भगाने का कारण अपने पेट–दर्द को बता कर पीछा छुड़ाता है। आगे पत्नी के मुख पर छाई हुई उदासी और हल्कू के मुख पर छाई प्रसन्नता का कारण उन दोनों के बीच हुए परस्पर संवाद से पता चल जाता है।

व्याख्या ः पत्नी मुन्नी पति हल्कू के चिंतित स्वर में कहती है कि अब आगे से उसे दूसरे भूस्वामियों के खेतों में मज़दूरी का काम करके सरकार को मालगुज़ारी चुकानी पड़ेगी। उसके कहने का भाव यह है कि इसके अतिरिक्त दूसरा कोई और चारा ही नहीं बचा है।

दूसरी ओर उसका पति चिन्तित की अपेक्षा हर्षित स्वर में कहता है कि कम–से–कम इस तरह से कड़कती सर्दी में ठिठुरते हुए सोने से तो सदा के लिए बचाव हो जाएगा।

यहाँ एक ओर मुन्नी दूषित महाजनी सभ्यता पर कटाक्ष करती है, जिसके कारण एक अच्छा भला कृषक पेट भरने तक की कमाई न कर पाने के कारण खेत–मज़दूर बनने के लिए बाध्य हो जाया करता है।

दूसरी ओर, हल्कू एक साधारण मानव के रूप में सर्दी से बचाव करने के लिए न तो कम्बल ख़रीद पाता है और न ही अपने को किसी तरह से ओढ़ ढँक कर सर्दी से बचा पाता है। होता यह है कि वह अपनी आजीविका की आधारभूत खेती को बचाने के स्थान पर अलाव के पास बैठ कर अपनी देह को उष्मा पहुँचाने के कार्य को ही वरीयता प्रदान करता है।

गद्य–सौष्ठव ः जहाँ पत्नी के कथन से उसके स्वभाव की व्यवहारिकता, यथार्थपरकता और दूरदर्शिता व्यंजित होती है,वहाँ उसके पति हल्कू के कथन से उसकी सुविधाभोगिता, सहनशीलता, समंजनशीलता आदि स्वभावगत विशेषताओं पर ही विशेष रूप से आलोक–प्रक्षेपण होता है।

2.1.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न ः

1. 'पूस की रात' कहानी का कथा–सार (कथानक) लिखें और इसकी कथवस्तु (Plot) की भी समीक्षा करें।
2. 'पूस की रात' कहानी के शीर्षक (नामकरण) के औचित्य या सार्थकता का तर्कपूर्वक विवेचन करें।
3. 'पूस की रात' कहानी के कथ्य (प्रतिपाद्य, मूल संवेदना, उद्देश्य) पर विस्तार से प्रकाश डालें।
4. 'पूस की रात' कहानी किस कोटि (श्रेणी, वर्ग) की कहानी है और इसमें प्रेमचन्दकालीन कृषक–समाज की किस समस्या का चित्रण हुआ है ?
5. 'पूस की रात' कहानी के कथा–नायक हल्कू का चरित्र–चित्रण करें।
6. 'पूस की रात' कहानी की नायिका मुन्नी का शील–निरूपण करें।
7. 'पूस की रात' रचना के कथा–शिल्प की समीक्षा करें।
8. 'पूस की रात' कहानी मानव–चरित्र का एक सशक्त चित्र है – इस उक्ति के प्रकाश में मानव–मनोविज्ञान का रेखांकन करें।
9. 'पूस की रात' कहानी की भाषा–शैली पर एक लेख लिखें।
10. 'पूस की रात' कहानी की समीक्षा कहानी के तत्त्वों के आधार पर करें।
11. 'पूस की रात' कहानी के आधार पर प्रेमचन्द की कहानी–कला पर विचार करें।

पाठ संख्या ः 2.2 **लेखिका ः डॉ॰ हरिसिमरन कौर**

'देवरथ'
(जयशंकर प्रसाद)

इकाई की रूप—रेखा ः

2.2.0 उद्देश्य
2.2.1 प्रस्तावना
2.2.2 जयशंकर प्रसाद का जीवन—वृत्त
2.2.3 'देवरथ' कहानी की तात्त्विक समीक्षा
कथावस्तु
पात्रों का चरित्र—चित्रण
संवाद—योजना
देशकाल और वातावरण
भाषा—शैली
उद्देश्य
2.2.4 प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्याएँ
2.2.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न

2.2.0 उद्देश्य ः

श्री जयशंकर प्रसाद का साहित्य मुख्यतः भारत के गौरवपूर्ण अतीत, विशेषतः सभ्यता और संस्कृति का आख्यान कहा जा सकता है। उनके उपन्यासों और कहानियों में भारत के स्वर्णिम अतीत की विविध झलकियाँ सुरक्षित हैं। वे अपने और अतीतकालीन समाज के अनेक स्त्री—पुरुष चरित्रों को अपनी लेखनी से अमर कर गये हैं। जहाँ ऐतिहासिक कहानियों में ये चरित्र यथार्थ की प्रामाणिकता से लैस हैं, वहाँ कल्पना—प्रधान सामाजिक और सांस्कृतिक कहानियों में उनके कथा—पात्र उनकी मनोहारिणी कल्पना की उपज हैं। फिर वह चाहे 'आकाशदीप' कहानी की चम्पा हो या जलदस्यु बुद्धगुप्त या फिर सामाजिक कहानी 'मधुआ' का नायक मधुआ हो।

प्रसाद की 'ग्राम' शीर्षक कहानी हो या 'शरणागत', उनमें मुंशी प्रेमचन्दीय कथा—शैली में ज़मीदारों द्वारा कृषकों—श्रमिकों के शोषण की गाथा है। फिर भी 'शरणागत' शीर्षक कहानी में नारी जाति की स्वातन्त्र्य—चेतना की सुगबुगाहट भी है। 'पुरस्कार' शीर्षक कहानी में राष्ट्रहित के आगे निजी हितों के त्याग का महान् पाठ पढ़ाया गया है। 'आकाशदीप' कहानी की नायिका एक ओर तो जलदस्यु बुद्धगुप्त से हृदय की गहराइयों से बहुत प्रेम करती है; दूसरी ओर उसके द्वारा अपने पिता की हत्या करने के कारण अपार घृणा भी करती है। प्रेम—भावना के दबाव के कारण वह चाह कर भी अपनी कटार से उसे मार नहीं पाती है और घृणा के कारण ही उससे विवाह न करके एक अलग—थलग द्वीप में रह कर आजीवन समाज—सेवा करने का व्रत लेती है। इस प्रकार अतीत की सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर आधारित हो कर भी इन की रचनाएँ मानव—मन के अन्तर्द्वन्द्वों से आधुनिकता के रंग में रँगी रहती है। 'विराम चिह्न' कहानी का अछूत युवक जब सजातीय लोगों के समूह के बल पर मन्दिर के द्वार तक जा पहुँचता है, तब परंपरा की प्रतीक उसकी बुढ़िया माँ उसके राह में बिछ जाती है और उसका सब ही क्रान्ति के विरोध में एक 'पथ—बाधा' बन कर धर्म की सीमा निर्धारित करने लगता है। समग्रतः छायावादी भाषा—शैली में प्रसाद जी एक ऐसा कथा—संसार खड़ा करते हैं, जो आदि से ले कर अन्त

तक पुरातन युग और परिवेश से घिरे होने पर भी उसकी अनेक जीर्णशीर्ण मान्यताओं के आगे या या तो 'विराम–चिह्न' लगा देता है या अनेक प्रश्न–चिह्न खड़े करता रहता है। इस प्रकार प्रसाद कहानीकार अतीतजीवि हो कर भी अनेक रचनाओं को प्रासंगिक और समय–संगत बना सके हैं। उनकी 'ममता' कहानी क्रूर समाजवाद और राजशाही पर गहरा कटाक्ष है।

प्रस्तुत अध्याय में छात्र जिन तथ्यों से परिचित हो सकेंगे, वे अग्रलिखित हैं ः–

1. श्री जयशंकर प्रसाद का जीवन, व्यक्तित्त्व और कृतित्व।
2. 'देवरथ' कहानी की तात्त्विक समीक्षा – कथावस्तु, पात्रों का चरित्र–चित्रण, संवाद–योजना, देशकाल और वातावरण, भाषा–शैली और उद्देश्य।
3. महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्याएँ।
4. अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न।

2.1 प्रस्तावना ः

प्राचीन काल में भारत के दक्षिणी भाग के कुछ मन्दिरों में देवदासी की प्रथा प्रचलित रही है। इस प्रथा का प्रारंभ किस समय से और कैसे हुआ – इस संबंध में अधिक जानकारी तो प्राप्त नहीं है। बौद्धों के पतन के काल में उस धर्म की 'हीनयान' शाखा से जो 'वज्रयान' नामक उपशाखा फूटी, उसमें धर्म–साधना के नाम पर माँस, मदिरा, मदन (नारी के साथ सम्भोग) मनोविकार (काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह और अहंकार) आदि की प्रचुरता होती चली गई। मठों और मन्दिरों में काम करने वाली नारियों को या तो देवदासी बना कर अपने उन्मुक्त भोग का साधन बनाने का कुचक्र रचा जाता था, या फिर धर्म–साधना के नाम पर उन्हें रखैलें बना कर उनका कौमार्य भंग किया जाता था। धर्म के ही ठेकेदार, पंडित, पुजारी आदि उनके लिए किसी भी बाहरी व्यक्ति से प्रेम और विवाह करने की पूर्ण वर्जना कर देते थे, ताकि ऐसी नारियाँ कहीं उनके चँगुल से न निकल जाएँ। पाठ्य–पुस्तक 'सात कहानियाँ' में संकलित 'देवरथ' शीर्षक कहानी नारियों पर इसी अमानुषिक एकाधिकार, अत्याचार और धर्माडम्बरों पर करारा प्रहार करती हैं। कथान्त में 'काला पहाड़' के अश्वारोही आ कर ऐसे अन्यायपूर्ण देवरथ को चारों ओर से घेर लेते हैं, जिसके तले आ कर संधस्थविर की कामवासना की शिकार सुजाता दम ोड़ देती है। रथ पर रखी हुई देवमूर्ति को ही संकेत से उस नारी की मृत्यु के लिए उत्तरदायी ठहराया है, जोकि जयशंकर प्रसाद की कहानी–कला का एक निदर्शन है।

2.2.2 श्री जयशंकर प्रसाद का जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व

जीवन–वृत्त ः

श्री विश्वंभर 'मानव' के अनुसार श्री जयशंकर प्रसाद की जनम 30 जनवरी सन् 1890 ई॰ को काशी के सराय गोवर्द्धन मोहल्ले में हुआ था, परन्तु डॉ॰ रामनिवास गुप्त ने इनका जन्म–वर्ष सन् 1889 ई॰ लिखा है। – ('हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ॰ 396) ये जाति के वैश्य थे। इनके पितामह का नाम श्री शिवरतन और पिता का नाम श्री देवी प्रसाद था। ये शैव जाति के समर्थक थे। तमाखू, सुँघनी और सुर्ती के बड़े व्यापारी होने के नाते इन्हें 'सुँघनी साहू' कहा जाता था। प्रसाद ने किशोरावस्था में अपनी माता के साथ धारा–क्षेत्र, ओंकारेश्वर, मान्धाता, पुष्कर, जयपुर, ब्रज, अयोध्या, अमरकंटक इत्यादि की यात्रा की थी।

माता–पिता का साया सिर से उठ जाने के बाद इन्होंने काशी के 'क्वींज़ कॉलेज' से सातवीं श्रेणी पास करने के पश्चात् पढ़ना–लिखना छोड़ दिया था। अब इन्होंने शेष अध्ययन घर पर ही किया। इन्हें व्यापार से खीझ थी, इसलिए दूकान पर ही ये वेद, उपनिषद्, पुराणश साहित्य इत्यादि का पर्याप्त अनुशीलन करते रहते थे। इन्हें व्यायाम अत्यन्त प्रिय था। 'कामायनी' के प्रथम पृष्ठ पर ही मनु के स्वास्थ्य में इनका निजी डील–डौल झलकता है ः–

"अवयव की दृढ़ मांसपेशियाँ,
ऊर्जस्वित था वीर्य अपार................।"

ये घर का सारा ऋण–भार जैसे–तैसे उतार कर साहित्य–साधना में जुट गए। इन्हीं की सम्मति से इनके भाँजे श्री अम्बिकाप्रसाद गुप्त ने सन् 1907 ई॰ से 'इन्दु' पत्रिका का प्रकाशन शुरु किया था। इस से पूर्व 16–17 वर्ष की अवस्था में ही प्रसाद की सर्वप्रथम मौलिक कविता 'भारतेन्दु' पत्रिका के जुलाई सन् 1906 अंक में छपी थी। यह ब्रज भाषा में रचित

रीति–शैली का एक शृंगारिक सवैया था। ये पहले 'कलाधर' की उपनाम से ब्रजभाषा की जो कविताएँ लिखते थे, जोकि 'चित्राधार' और 'प्रेम–पथिक' (सन् 1913 ई॰) में संकलित हैं। इन्होंने 'प्रेम–पथिक' काव्य को कालान्तर में खड़ी बोली में रूपान्तरित कर दिया था। इनका दूसरा कविता–संग्रह 'कानन–कुसुम' (सन् 1912–13 ई॰) है।

डॉ॰ कृष्णलाल हंस 'कानन–कुसुम' का प्रकाशन–काल सम्वत् 1969 विक्रमी देने के बाद प्रकाशित 'प्रेम–पथिक' को संवत् 1962 (सन् 1905 ई॰) के ब्रजभाषा–काव्य का खड़ीबोली में रूपान्तर कहते हैं। कदाचित् यह रूपान्तर सन् 1913 ई॰ (विश्वंभर 'मानव' के अनुसार सन् 1914 ई॰) में ही छपा था। इसी वर्ष 'करुणालय' काव्य का भी प्रकाशन हुआ था। इनकी शेष रचनाएँ इस प्रकार हैं ः 'उर्वशी' (सन् 1909 ई॰), 'वन–मिलन' (सन् 1909 ई॰), 'प्रेमराज्य' (सन् 1909 ई॰), 'अयोध्या का उद्धार' (सन् 1910 ई॰), 'शोकाच्छवास्' (सन् 1910 ई॰), 'बभ्रू वाहन' (सन् 1911 ई॰), 'महाराणा का महत्त्व' (सन् 1914 ई॰), 'झरना' (सन् 1918 ई॰), 'आँसू' (सन् 1925 ई॰), 'लहर' (सन् 1933 ई॰) और 'कामायनी' (सन् 1935 ई॰)। वियवमीर 'मानव' ने 'झरना' का प्रकाशन सन् 1927 ई॰ लिखा है, जोकि अशुद्ध है। उन्होंने 'कामायनी' का प्रकाशन–काल भी सन् 1936 ई॰ दिया है।

प्रसाद–कृत 'कंकाल' (सन् 1929 ई॰) उपन्यास में ग्राम–जीवन और कृषक–वेदना को अनुस्यूत किया गया है। इनका अन्य उपन्यास 'तितली' (सन् 1934 ई॰) भी चर्चित रहा है। 'इरावती' अपूर्ण उपन्यास है।

प्रसाद की 'ग्राम' और 'शरणागत' कहानियों में ज़मींदारों द्वारा जन–शोषण की कथा है। 'ममता' कहानी में विध ावा–जीवन की वेदना और 'शरणागत' कहानी में नारी–स्वातन्त्र्य की चेतना है। 'पुरस्कार' कहानी में राष्ट्रहित के आगे स्वहित का समर्पण है।

सन् 1910 ई॰ से नाट्य–रचना आरम्भ करने वाले प्रसाद जी के इन आरम्भिक नाटकों में नाट्यशिल्पगत प्रौढ़ता का अभाव है ः– 'सज्जन' (सन् 1910–11 ई॰) , 'कल्याणी–परिचय' (सन् 1912 ई॰), 'प्रायश्चित' (सन् 1914 ई॰) , 'करुणालय' (सन् 1912 ई॰) , 'राज्यश्री' (सन् 1915 ई॰)। इस काल में आ कर रचित इनके नाअकों में नाट्यकला की अपेक्षित प्रौढ़ता मिलती है – 'विशाख' (सन् 1921 ई॰), 'अजातशत्रु' (सन् 1922 ई॰), 'कामना' (सन् 1927 ई॰), 'जनमेजय का नागयज्ञ' (सन् 1926 ई॰) 'स्कन्दगुप्त' (सन् 1928 ई॰), 'एक घूँट' (सन् 1930 ई॰), 'चन्द्रगुप्त' (सन् 1931 ई॰) और 'ध्रवस्वामिनी' (सन् 1933 ई॰)।

जहाँ प्रसाद के नाटकों में काव्यात्मक भाषा और साहित्यक स्तर के फलस्वरूप काफ़ी सराहे गए हैं, वहाँ मंचीय सीमाओं के कारण इनके नाटकों की काफ़ी आलोचनाएँ भी हुई हैं। इनकी ख्याति ऐतिहासिक नाटकों के कारण है। ये अपने नाटकों में शिल्प की अपेक्षा 'अभिनेता' और 'चरित्र' को ही वरीयता प्रदान करते हैं। नाअकों में मानवीय अन्तर्द्वन्द्व और शाश्वत सौंदर्य–बोध मिलने से वे कालजयी बन गए हैं। उनमें राष्ट्रीय–सांस्कृतिक उत्थान का स्वर विशेष रूप से मुखर रहा है।

इनके नाटक 'राज्यश्री' का प्रथम संस्करण सन् 1915 ई॰ में दपा था। नये दृश्यों और पात्रों के साथ द्वितीय संस्करण सन् 1937 ई॰ में निकाला गया, जिसमें नाट्यकलागत उत्कर्ष देखने को मिलता है। प्रसाद ने पौराणिक काल नलाटक 'जनमेजय का नागयज्ञ' से ले कर हर्षवर्द्धन–युग ('राज्यश्री') तक के भारतीय इतिहास को अपने नाटकों का विषय बनाया है।

'काव्य और कला', 'रहस्यवाद', 'रस', 'नाटकों में रस–प्रयोग', 'रंगमंच नाटकों का प्रारम्भ', 'आरम्भिक पाठ्य काव्य' और 'यर्थाथवाद' और छायावाद' – ये आठ निबन्ध इनके एक मात्र निबन्ध–संग्रह 'काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध' में संकलित हैं। इनमें इतहास, दर्शन, मनोविज्ञान, संस्कृति, सभ्यता और साहित्य के ज्ञान और पाण्डित्य के साथ संस्कृत तत्सम शब्दावली और गद्य की समास–व्यास–शैली का मणिकांचन संयोग है।

श्री जयशंकर प्रसाद ने तीन विवाह किये थे। उनके एक मात्र पुत्र का नाम 'रत्नशंकर' है। प्रसाद इत्र, नौका–विहार, व्यायाम और संगीत–का में विशेष रुचि रखते थे। ये 'इन्दु' के अतिरिक्त 'जागरण' और 'हंस' पत्रिकाओं में भी रचनाएँ छपाया करते थे। इनके घर के सामने नारियल बाज़ार वाली इनकी दूकान पर ही लोग इनसे भेंट करने–हेतु आया करते थे। प्रतिदिन बेनिया बाग़ तक टहलते जाते समय इनकी भेंट प्रेमचन्द जी से हुआ करती थी। एक ओर, वैदिक धर्म में इनकी प्रगाढ़ आस्था थी, दूसरी ओर, शैव धर्म में भी। बौद्ध धर्म की अहिंसा और अतिशय करुणा से ये बहुत प्रभावित थे। जीवन के अन्तिम दिनों में राजयक्ष्मा से ग्रस्त रह कर सन् 1937 ई॰ में इन्होंने सदा के लिए यह संसार त्याग दिया।

केवल 47 वर्ष की आयु में इन्होंने 27 ग्रंथों की रचना की, जिनमें काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबन्ध सभी हैं।

प्रसाद ने कुल 69 कहानियों की रचना की। 'आकाशदीप', 'आँधी', 'छाया', 'प्रतिध्वनि', 'इन्द्रजाल' आदि इनके प्रसिद्ध पाँच कहानी–संग्रह हैं। इनकी कहानियों में कोमल भाव, आवेग, गीतिमयता आदि की प्रधानता है। इन्होंने सामाजिक और ऐतिहासिक दोनों प्रकार की कहानियों की रचना की है। इन्होंने प्रेमचन्द जैसी व्यावहारिक भाषा न अवपना कर अपनी शैली में संस्कृतनिष्ठ शब्दावली पर ही अधिक ज़ोर दिया है।

प्रसाद जी एक नए साहित्यक युग के निर्माता थे। साथ–ही–साथ एक नई विचार–शैली, नई भाव–धारा और नवीन दर्शन के उद्‌भावक भी। आप हिन्दी के सर्वमान्य श्रेष्ठकवि और कथा–साहित्य के अग्रणी लेखक थे। इन्होंने मौलिक कहानियाँ तब लिखीं, जब हिन्दी में कहानी–लेखक विरले ही थे। अपनी उत्कृष्ट नाट्‌य–कृतियों से उन्होंने हिन्दी नाट्‌य–परम्परा को भी पुष्ट किया।

'कामायनी' नामक महाकाव्य आपकी सर्वोत्कृष्ट कृति है। आपके उपन्यासों, कहानियों और नाट्‌य–कृतियों का भी अपना अलग वैशिष्ट्‌य है।

2.2.3 'देवरथ' कहानी की तात्विक समीक्षा

कथावस्तु ः

कहानी का शीर्षक है, 'देवरथ'। इसका अर्थ है – देवता का रथ, दिव्य रथ। इस कहानी की नायिका का नाम सुजाता है। वह बौद्ध संघ की शरण में चली आई थी। बाद में उसे ज्ञात हुआ कि दूर के ढोल सुहावने होते हैं। संघ के बूढ़े संचालक ने ही उसका कौमार्य भंग किया था। इससे उसके आशापूर्ण ह्रदय पर बहुत आघात हुआ था। यही कारण है कि संसार से भाग कर यहाँ आने पर वह एक भिक्षुणी का जीवन जीने के लिए विवश हुई। इतना होने पर भी मन की शान्ति तो उससे कोसों दूर हो गई।

चैत्र मास की अमावस्या के एक प्रभात में उसका मन अत्यन्त अधीर था। दिन का प्रकाश होने पर भी उसके मन में अन्धकार भरा जा रहा था। उसे कुछ समझ नहीं आ रहा था कि शिकारियों के झुण्ड के सामने उसकी दशा किसी अकेली हिरणी की–सी है, परन्तु वह यहाँ से भाग कर जाये भी तो कहाँ जाए ?

बौद्ध संघ में ही युवक आर्य्यमित्र ने उस तापसी को समाधि की अवस्था में देखा। समाधि टूटने पर वह उस पुरुष–भिक्षु के सामने झुक गई, क्योंकि उेसा करना ही संघ का एक सामान्य नियम था। आर्य्यमित्र ने उसके सवास्थ्य के संबंध में प्रश्न किया। तब संघ के उस वैद्य से नित्य औषधि लेने से वह देह तो स्वष्थ हो गई थी, परन्तु मन से अभी तक अस्वस्थ ही चल रही थी।

आर्य्यमित्र उसे अभी कोई पथ्य (औषधि) सेवन करने की बात कहता है, जिसे सुजाता तुरंत मान लेती है, परन्तु उसकी कोई और बात सुनने की अपेक्षा टाल जाती है और विषयान्तर करती हुई पूछ बैठती है कि उसने कब से प्रव्रज्या ली है। आर्य्यमित्र भी उत्तर टाल कर 'संसार ही दुःखमय है' का पुराना राग अलापता है। अब सुजाता उससे अधिक बात न करके 'नमस्कार' करके उसे विदा कर देती है। वह एक आलोक–तरंग में निमग्न रहती है और उसे महास्थविर के समीप आ खड़े होने का भी आभास नहीं हो पाता है।

फिर कभी जब सुजाता अकेली बैठी हुई जीवन और संवेदन के सत्य होने की बात बुदबुदा रही थी और आत्मा के आलोक में अन्धकार का अस्तित्व न रहने की बात अपने आप से कर रही थी, तभी समीप आए हुए आर्य्यमित्र से वह अपने भिक्षुणी होने का कारण पूछती है। वह बात बदल कर उससे रहता है कि स्वयं को एक पापी मान लेने पर भी वह बनावट सदाचार के पर्दे में सुरक्षित नहीं रह सका है। उसने महास्थविर के सामने स्वीकार कर लिया है कि वह सांसारिक वैभवों की कदापि अवहेलना नहीं कर सकता है। कलिंग के राजवैद्य का पद भी वह त्याग नहीं सकता है। वह तो केवल उसी को पत्नी बनाने के प्रयोजन से इस नील विहार में एक भिक्षु बन कर आया था।

सुजाता उसके विवाह–प्रस्ताव को ठुकराती हुई उससे कहती है, उसने देर कर दी है। इस पर भी वह उससे कहता है कि ये गेरुए वस्त्र, रत्नमाला, मणिकंकण, हेमकांची आदि धारण करने चाहिए, क्योंकि अपने योग्य यही सब धारण करके एक दिन राजरानी बन सकती है। फिर वह उससे कहता है कि वह तो स्वयं संघ का बन्धन तोड़ चुका है और वह भी जीवन

और आत्मा की नश्वरता में आस्था नहीं रखती है।

यह सुन कर सुजाता उससे संकेतपूर्वक पूछती है कि सतीत्व का जो अमूल्य उपहार कुलवधुएँ अपने पतियों के चरणों में समर्पित किया करती हैं, वह भला अब उसे देने के लिए कहाँ से लाएगी ?

यह सुन कर आर्य्यमित्र उसमें कोई बाधा होने की बात पूछता है। सुजाता उससे कहती है कि वह उसे सुन कर क्या करेगा ? फिर वह उस भूतपूर्व राजकुमार को जा कर पहले की तरह से राज–सुख भोगने का सत्यपरामर्श देती है। उसके मतानुसार उसे उस जन्म की दुखियारी के पीछे अपना आनन्दपूर्ण भविष्य कदापि नष्ट नहीं करना चाहिए। यदि उसने बौद्ध संघ का बन्धन तोड़ डाला है, तो अब उस नीच स्त्री के प्रति अपने इस मोह का बन्धन भी तोड़ देना चाहिए।

अब आर्य्यमित्र उसका हाथ थाम कर पूछता है कि वह उसे स्पष्ट बताये कि क्या वह उससे प्रेम नहीं करती है। इसके उत्तर में सुजाता अपने दुःख का कारण उसके प्रति अपने प्रेम को ही ठहराती है, अन्यथा मन्दिर में 'भैरवी' अर्थात् देवदासी के लिए यौन–तुष्टि के लिए भला कौन–सी कमी हो सकती है ? 'भैरवी' कर नाम सुनते ही आर्य्यमित्र चौंक पड़ता है। अब सुजाता की आँखों में आँस आ जाते हैं।

उधर आर्य्यमित्र सोचता है कि परिवार के पवित्र बन्धन तोड़ कर आदमी जिस मुक्ति या निर्वाण की आशा में यहाँ दौड़े चले आते हैं, उन्हें यह कैसा सामाजिक दण्ड भोगना पड़ रहा है ! क्या धर्म की यही सीमा–रेखा है। गार्हस्थ्य जीवन की उपेक्षा करने वालों के लिए यह दण्ड समाज को भला कब यों ही भोगते रहना होगा ?

आगे वह सुजाता से देवरथ के चक्र की तरह सिर के भी चकराने की बात कहता है और उसका वास्तविक रूप जान कर भी उसे पत्नी–रूप में स्वीकार करने की बात कह डालता है।

इसके उत्तर में सुजाता कहती है कि वह अपना सारा कलंक उसके साथ बाँट कर उसे पति के रूप में अपनाने का दुस्साहस कभी नहीं करेगी। वह उससे अपने अस्वीकार के लिए क्षमा माँगती है। फिर अपनी वेदना को रात से भी काली और दुःख को समुद्र से भी अधिक विस्तृत घोषित करती है। फिर वह उसे याद दिलाती है कि इसी सागर किनारे बैठ कर वे दोनों कभी अपने नाम लिखा करते थे, जिसे बाद में समुद्र अपनी लहरों की अंगुलि से मिटा दिया करता था। अब मन की रेत से प्रेम का नाम भी मिट जाने देना चाहिए। तभी पीछे संघस्थविर का कठोर स्वर सुजाता को पुकारता सुन पड़ता है।

कुछ समय बाद जब वे सुजाता से पूछते हैं कि उसने प्रायश्चित्त किया या नहीं ? तब वह उन्हीं से यह प्रति प्रश्न करती है, "किसके पाप का प्रायश्चित्त ! तुम्हारे या अपने ?"

तब संघस्थविर उसे अपने और आर्य्यमित्र के पापों का प्रायश्चित करने की बात कहते हुए उसे एक 'धर्म–द्रोह' का नाम देते हैं, जिसे सुनकर सुजाता आश्चर्य प्रकट करती है, और वे उसे याद दिलाते हैं कि उसका शरीर तो केवल देवता को ही समर्पित थरा। यह सुनते ही सुजाता उसे क्रोध में असत्यवादी, वज्रयानी नर–पिशाच शब्दों से सम्बोधित करती है। अब वे उसे मृत्यु–दण्ड देने का निर्णय सुना डालते हैं।

सुजाता कहती है कि इस स्नेहमयी धरती पर तो वह भी उसके लिए कोमल ही होगा। गार्हस्थ्य धर्म छोड़ कर भी वे लोग अपनी वासना–तृप्ति के लिए फिर से नया घर बनाते हैं। वास्तव में उनकी कामवासना तो सरल साधारण गृहस्थों से भी अधिक तीव्र, क्षुद्र और निम्न प्रकार की ही ठहरती है।

सुजाता मृत्यु–दण्ड स्वीकार करती हुई भी यह भविष्यवाणी करती है कि उन लोगों का यह काल्पनिक आडम्बरपूर्ण धर्म भी शीघ्र मर जाएगा, क्योंकि मानवता का नाश करके कोई जीवित नहीं रह सकता है। संघस्थविर उसे अगले दिन ही मृत्यु–दण्ड देने की बात कह कर चले जाते हैं।

इसके बाद सुजाता रात भर चलने वाले उत्सव की सार्थकता के बारे में देवता से पूछती है और यह कटाक्ष भी करती है कि क्या जीवन की यातनाओं से उसकी पूजा के साधन एकत्र किये जाते हैं ? देव–मूर्ति मौन ही रहती है।

जब सुजाता ने पुजारियों में आर्य्यमित्र को भी भक्ति–भाव से चलते हुए देखा, तो उसके मन में यह इच्छा हुई कि उसे आर्य्यमित्र को बुला कर बता देना चाहिए कि वह उसके साथ चलने के लिए तैयार है। उसने उसे पुकारा भी, परन्तु उत्सव के कोलाहल में किसी ने भी उसकी वह कातर पुकार न सुनी। वह जन–समूह में छलांग लगा देती है और उसका शरीर देवरथ के चक्र तले पिस जात है। रथ खड़ा हो जाता है और स्थविर के कुछ बोलने से पहले ही दर्शक और पुजारी

सभी 'काला–पहाड़' चिल्लाते हुए इधर–उधर भागने लगते हैं। तभी 'काला पहाड़' के घुड़सवार देवरथ को घेर लेते हैं, जिसके ऊपर देव–मूर्ति थी और नीचे सुजाता की लाश थी।

इसी दुःखान्त के साथ कहानी समाप्त हो जाती है।

पात्रों का चरित्र–चित्रण ः

इस कहानी में मुख्य पात्र तीन ही हैं। सुजाता नायिका है, आर्य्यमित्र नायक है और संघ का स्थविर खलनायक है। तीनों ही चरित्र गतिशील (Round) न हो कर स्थिर चरित्र (Flat Characters) हैं। इनके स्वभाव आदि से ले जा कर तक अपरिवर्तित ही रहते हैं। ये अपने वर्ग के प्रतिनिधि–चरित्र है, फिर भी सुजाता का चरित्र व्यक्तित्व सम्पन्न चरित्र (Individual Character) की भी कुछ विशेषताएँ लिये हुए नज़र आता है।

आध्यात्मिकता से मोह–भंग, धर्म के विकृत रूप और आडम्बरों से घृणा, स्पष्टवादिता, सत्यवादिता, व्यंग्यप्रियता, आत्म–ग्लानि, परहितैषिता आदि सुजाता के चरित्र की प्रमुख स्वभावगत विशेषतायें हैं।

कथानक आर्य्यमित्र के चरित्र के प्रमुख लक्षण ये हैं ः– उत्कट और निश्छल प्रेम–भाव, सरलहृदयता, स्पष्टवादिता, भौतिकवादिता, त्यागशीलता, नारी के प्रति सम्मान–भावना इत्यादि। रेखाचित्रों द्वारा आरम्भ में ही सविता तापसी का खाका खींचा गया है।

खलनायक के रूप में संघ के स्थविर की चारित्रिक विशेषतायें ये हैं ः – कामलोलुपता, धर्माडम्बर, असत्यवादिता, दुःशीलता, कठोर हृदयता, क्रूरता, ईर्ष्या इत्यादि।

इस छोटे आकार वाली कहानी में विस्तृत शील–निरूपण का स्थान न होने पर भी सुजाता का ही चरित्र–चित्रण सशक्त हो पाया है। उसके चरित्र की तुलना में उसके प्रेमी आर्य्यमित्र का चरित्र अविकसित ही रह गया है। ठीक यही बात बौद्ध के वज्रयानी संघ के स्थविर के संबंध में भी कहा जा सकती है। कुल मिला कर चरित्र–चित्रण की कसौटी पर यह कहानी बहुत उच्च कोटि की नहीं कही जाएगी। इसमें कोई भी पात्र हिन्दी कहानी–साहित्य में अमर और चिरस्मरणीय रह जाएगा, इसमें सन्देह ही है।

संवाद–योजना ः

इस कहानी के संवाद पात्रानुकूल ही हैं। वे संक्षिप्त भी हैं और मनःस्थिति और परिस्थिति के अनुरूप दीर्घ भी हैं। आगे इन दोनों प्रकार के संवादों के निदर्शन प्रस्तुत हैं ः –

1. संक्षिप्त संवाद ः

1. "यह सुन कर तुम क्या करोगी। संसार ही दुःखमय है।"
2. "जीवन सत्य है, संवेदन सत्य है, आत्मा के आलोक में अन्धकार कुछ नहीं है।"
3. "किन्तु आर्य्यमित्र, तुमने विलम्ब किया, मैं तुम्हारी पत्नी न हो सकूँगी।"
4. "किसके पाप का प्रायश्चित। तुम्हारे या अपने ?"

2. दीर्घ संवाद ः

1. क्यों सुजाता, यह काषाय क्या शृंखला है ? फेंक दो इसे। वाराणसी के स्वण्र–खचित वसन ही तुम्हारे परिधान के लिए उपयुक्त हैं। रत्नमाला, मणिकंकण और हेमकांची तुम्हारे कमल–कोमल अंगलता को सजावेगी। तुम रारानी बनोगी।"
2. किन्तु आर्य्यमित्र ! मैं वह अमूल्य उपहार – जो स्त्रियाँ, कुलवधुएँ अपने पति के चरणों में समप्रण करती हैं, कहाँ से लाऊँगी ? वह वरमाला, जिसमें दूर्वा–सदृश कौमार्य हरा–भरा रहता हो, जिसमें मधूक–कुसुम–सा हृदय–रस भरा हो, कैसे, कहाँ से तुम्हें पहना सकूँगी ?"

इस प्रकार कहानी में संवादों द्वारा पात्रों के चरित्र–चित्रण की जो शैलियाँ अपनाई गई हैं, वे इस प्रकार हैं ः–

2. एक पात्र द्वारा आत्मचरित्र–चित्रण ः

1. "सुजाता विवाह का प्रस्ताव करने वाले प्रेमी आर्य्यमित्र से साहसपूर्वक कहती है, "किन्तु मैं तो तुम्हें पति–रूप से ग्रहण न कर सकूँगी। अपनी सारी लांछना तुम्हारे साथ बाँट कर जीवन–संगिनी बनने का दुस्साहस मैं न कर सकूँगी।"
2. आय्यमित्र सुजाता से कहता है, "मैंने अमावस्या की गम्भीर रजनी में संघ के सम्मुख पापी होना स्वीकार कर लिया

है। अपने कृत्रिम शील के आवरण में सुरक्षित नहीं रह सका। मैंने महास्थविर से कह दिया कि संघमित्र का पुत्र आर्य्यमित्र सांसारिक विभूतियों की उपेक्षा नहीं कर सकता। कई पुरुषों की संचित महौषधियों, कलिंग के राजवैद्य पद का सम्मान सहज में नहीं छोड़ा जा सकता। मैं केवल सुजाता के लिए ही भिक्षु बना था।"

2. एक पात्र द्वारा अन्य पात्र का चरित्र–चित्रण ः

1. "तुम भी तो जीवन की, आत्मा की क्षणिकता में विश्वास नहीं करती हो ?"
2. "चुप रहा असत्यवादी ! वज्रयानी नर–पिशाच............"

3. एक पात्र द्वारा समूह का चरित्र–चित्रण ः

"पवित्र गार्हस्थ्य बन्धनों को तोड़ कर तुम लोग भी अपनी वासना–तृप्ति के अनुकूल ही तो एक नया घर बनाते हो, जिसका नाम बदल देते हो। तुम्हारी तृष्णा तो साधारण, सरल, गृहस्थों से ीाी तीव्र है, क्षुद्र है और निम्न कोटि की है।"

समग्रतः काव्य–भाषा में गुँथे से संवाद सरल, सरस, प्रवाहमयी और सुगठित हैं। वे कथा–विकास में सहायक न होने पर भी आन्तरिक भावों के प्रकाशक अवश्य कहे जा सकते हैं।

देशकाल और वातावरण ः

यह एक भाव–प्रधान मनोविश्लेषणात्मक कहानी है। इसके अतिरिक्त इनमें कथा–तत्त्व का अभाव होने से घटनायें भी नगन्य ही हैं देशकाल और वातावरण के चित्रण का भी इस छोटी–सी कहानी में अधिक अवकाश न था। फिर भी प्रकृति–चित्रण का एक दृश्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है ः–

"समुद्र का कोलाहल कुछ सुनने नहीं देता था। संध्या धीरे–धीरे विस्तृत नील जल–राशि पर उतर रही थी। तरंगों पर तरंगें बिखर कर चूर हो रही थीं। सुजाता बालुका की शीतल वेदी पर बैठी हुई अपलक आँखों से उसे क्षणिकता का अनुभव कर रही थी, किन्तु नीलाम्बुधि का महान् संभार किसी वास्तविकता की ओर संकेत कर रहा था। सत्ता की सम्पूर्णता धुँधली छाया में मूर्तिमान हो रही थी।"

यहाँ भी प्रसाद की कामायनी भाषा में जीवन की दार्शनिकता गूँथने का प्रयास लक्षित होता है।

अगने उदाहरण में देव–प्रतिमा की रथ–यात्रा से समूचा दृश्य हमारे सामने चक्षु–मूर्त हो उठता है, "देव–विग्रह ने रथ–यात्रा के लिए प्रयाण किया। जनता तुमुलनाद से जय–घोष करने लगी।.....सुजाता ने देखा, पुजारियों के दल में कौशल वसन पहने हुये आर्य्यमित्र भी भक्ति–भाव से चला आ रहा है।

सम्पूर्ण बल से उसने पुकारा – 'आर्य्यमित्र !'

किंतु उस कोलाहल में कौन सुनता है। देवरथ विस्तीर्ण राजपथ से सलने लगा। उसके दृढ़–चक्र धरणी की छाती में लीक डालते हुए आगे बढ़ने लगे। उस जन–समुद्र में सुजाता फांद पड़ी और एक क्षण में उसका शरीर देवरथ के भीषण चक्र से पिस उठा।"

इस प्रकार इस कहानी में देशकाल और वातावरण नामक तत्त्व का घनीभूत रेखांकन न हो कर केवल क्षीण और विरल व्यवहार ही माना जाए, तो इसमें दो मत नहीं हो सकते हैं।

भाषा–शैली ः

प्रसाद जी की अन्य कहानियों की ही भाँति 'देवरथ' कहानी की भाषा भी संस्कृत तत्सम शब्दावली में अनुस्यूत छायावादी काव्य–भाषा से ओत–प्रोत कही जायेगी। यथा एक निदर्शन अवलोकनीय है ः "चेत की अमावस्या का प्रभात था। अश्वत्थ वृक्ष की मिट्टी–सी सफ़ेद डाली और तने पर ताम्र अरुण कोमल पत्तियाँ निकल आई थीं। उन पर प्रभात की किरणें पड़ कर लोट–पोट हो जाती थीं। इतनी स्निग्ध शय्या उन्हें कहाँ मिली थी।"

संस्कृत तत्सम शब्द ः

भाषा में संस्कृत तत्सम शब्दों की प्रचुरता विषय–वस्तु के सर्वथा अनुरूप ही हैं। यथा ः रेखा, भाल, तापसी नासा–पुट, संसार, यौवन, काषाय, आशापूर्ण हृदय, ताम्र, अरुण, कोमल, भिक्षुणी, शरण, संघ, स्थविर, उपयुक्त, स्वर्ण, खचित, रत्नमाला, मणिकंकण, हेम कांची, अंग–लता, आत्मा, क्षीणकता, जर्जित, नियम, अंधकार, आलोक इत्यादि।

तद्भव शब्द ः

तद्भव शब्दों का भी प्रयोग हुआ है ः आँख (सं॰ अक्षि), घर (सं॰ गृह), चूर (सं॰ चूर्ण), मुझ (सं॰ मह्याम), सिर (सं॰ शिर)।

देशज शब्द ः

देशज शब्दों का भी प्रयोग उल्लेखनीय है, यथा ः बरौनियों, पुतली।

अरबी–फ़ारसी–उर्दू के शब्द ः

अरबी–फ़ारसी–उर्दू के शब्द विरल ही हैं, यथा ः *पता, लोग* इत्यादि।

संज्ञा के विकृत रूपों का भी प्रयोग उल्लेखनीय है, यथा प्रायश्चित (शुद्ध रूप प्रायश्चित्त), ऊंगली (शुद्ध रूप अंगुलि) **क्रियाओं के भी विकृत रूप** हैं, यथा ः प्रगट (सं॰ प्रकट)

चरित्र–चित्रण की विभिन्न शैलियों का प्रयोग हुआ है। संवादों में विवेचित शैलियों के अतिरिक्त अन्य शैलियों के उदाहरण ये हैं ः –

1. रेखाचित्र द्वारा चरित्र–चित्रण ः

मानवीय व्यक्तित्व का आन्तरिक ही नहीं, बाहरी रूप भी होता है, जिसका चित्रण रेखाचित्र (Character-Sketch) द्वारा किया जाता रहा है। प्रस्तुत कहानी का आरम्भ ही तपस्विनी सुजाता के इस रेखाचित्र द्वारा किया गया है, "दो, तीन रेखाएँ भाल पर काली पुतलियों के समीप मोटी और काली बरौनियों का घेरा, घनी आपस में मिली रहने वाली भवें और नासा–पुट के नीचे हलकी–हल्की हरियाली उस तापसी के गोरे मुँह पर सबल अभिव्यक्ति की प्रेरणा प्रगट करती थी।"

2. तृतीय या अन्य पुरुष–शैली में चरित्र–चित्रण ः

कहानी में एक स्थल पर आर्य्यमित्र इसी शैली में अपना परिचय विस्तार से देते हुए ये शब्द कहता है, "मैंने महास्थविर से कह दिया कि संघमित्र का पुत्र आर्य्यमित्र सांसारिक विभूतियों की उपेक्षा नहीं कर सकता।" और सुजाता से उसी के बारे में इसी शैली में इतना और जोड़ देता है, "वह मेरी वाग्दत्ता भावी पत्नी है।"

सुजाता ने हससे पहले इसी तृतीय पुरुष शैली में अपने ही बारे में यह कहा था, "तक भी आर्य्यमित्र वह क्या करे ?"

समूची कहानी में गद्य की व्यास–शैली की अपेक्षा समास–शैली का व्यवहार होने से कथा–भाषा सुगठित और नपी–तुली बन पड़ी है। अतः भाषा–शैली की कसौटी पर भी यह कहानी खरी उतरती है।

उद्देश्य ः

इस कहानी की नायिका सुजाता बौद्ध दर्शन के अनुसार समूचे संसार को दुखों का घर मान कर ही बौद्ध संघों में आ कर भिक्षुणी बनी थी। यहाँ के कामलोलुप भिक्षुओं ने उसे भैरवी बना कर धर दिया था। राजकुमार आर्य्यमित्र केवल उसे पाने की कामना से ही भिक्षुक बन कर इसी संघ–विहार में आया था, जिसका नाम नील विहार था। अन्त में वह इस बौद्ध–विहार के संचालक संघस्थविर से दो टूक शब्दों में कह देता है कि वह कलिंग के राजवैद्य–पद का सम्मान सहज ही नहीं छोड़ पायेगा। संघ की मर्यादा को उसने तापसी सुजाता से प्रेम करके भंग करने का पाप किया है। वास्तव में वह सांसारिक विभूतियों की अपेक्षा कर ही नहीं सकता है। वह सुजाता के आगे उससे विवाह करने का प्रस्ताव भी रखता है, जिसे वह संघ के कामलोलुप पुरुषों के यौनाचार से दूषित हो जाने के कारण ही अस्वीकार करके अपनी निश्छलता ही प्रमाणिक करती है।

दूसरी ओर संघ के महास्थविर सुजाता और आर्य्यमित्र को संघ की मर्यादा भंग करने के कारण मृत्यु–दंड देने का निर्णय सुनाते हैं। सुजाता स्वयं उत्सव–समारोह में चलते हुए देवस्थ के आगे आगे कूद कर उसके चक्र तले पिस जाती है। ठीक उसी समय 'काला पहाड़' के जागरुक घुड़सवारों ने आ कर उस देवरथ को धेर लिया। अतः कुछ धर्माडम्बर करने वाले पुजारी वहाँ से पलायन करने के लिए विवश हो जाते हैं।

इस प्रकार यह कहानी बौद्ध धर्म के पतन–काल की अवस्था और मठों, संघों, संघरायों आदि में चल रही अनैतिक गतिविधियों पर गहरा कटाक्ष करती है। इसके साथ ही शोषित पीड़ित नारियों की मनोवेदना, यातना और चिरदमित

विद्रोह–भावना को वाणी प्रदान करना भी कहानीकार को अभीष्ट रहा है। उन दिनों वज्रयानी सिद्ध साधारण गृहस्थों को आत्मा और जीवन की क्षणभंगुरता (क्षणिकता) के उपदेश दे कर उनके हृदयों में संसार के प्रति वैराग्य–भाव उत्पन्न किया करते थे, ताकि वे अपने बसे–बसाये घर–बार छोड़ कर मठों, बिहारों और संघों में आ जाएँ। उनकी नारियों को वे अपनी वासना–पूर्ति का साधन बना कर यौन–तुष्टि का सुख भोगा करते थे। उन्हें देवदासी सरीखी भैरवी का जीवन जीने के लिए बाध्य कर देते थे।

इसी कारण आर्य्यमित्र अधीर हो कर सोचता है कि पारिवारिक पवित्र बन्धनों को तोड़ कर जिस मुक्ति की–निर्वाग्ण की–आशा में जनता दौड़ रही है, क्या उस धर्म की यही सीमा है ? यह अन्धेर–गृहस्थों का सुख न देख सकने वालों का यह निर्मम दण्ड समाज कब तक भोगेगा ?"

सुजाता भी कामलोलुप महास्थविर को न केवल असत्यवादी और वज्रयानी नर–पिशाच कह कर लांछित करती है, अपितु उसे चेतावनी देती हुई यों कहे चली जाती है, "स्थविर ! तुम्हारा धर्मशासन घरों को चूर–चूर विहारों की सृष्टि करता है, जिसका केवल नाम बदल देते हो। तुम्हारी तृष्णा तो साधारण गृहस्थों से भी तीव्र है, क्षुद्र है और निम्न कोटि की है।"

आगे जब महास्थाविर उसे अवश्य ही मरने की चेतावनी देते हैं, तब भी वह भविष्यवाणी–सी करती हुई साहसपूर्वक उनसे कहती है, "तो मरूँगी स्थविर, किन्तु तुम्हारा वह काल्पनिक आडम्बरपूर्ण धर्म भी मरेगा। मनुष्यता का नाश करके कोई धर्म खड़ा नहीं रह सकता।"

इस प्रकार विकृत धर्म पर मानवता की विजय स्थापित करना ही इस कहानी का मुख्य लक्ष्ण है, जिसकी सफल सिद्धि हो सकी है।

2.2.4 महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्यायें

1. किन्तु मैं पति–रूप..प्रेम का नाम।

प्रसंग ः

यह कथन पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला की बी॰ ए॰ प्रथम वर्ष कक्षा के हिन्दी विषय की निर्धारित पाठ्य–पुस्तक 'सात कहानियाँ' की जयशंकर प्रसाद की कहानी 'देवरथ' से उद्धृत किया गया है। ये शब्द भिक्षुणी सुजाता अपने प्रेमी आर्य्यमित्र से उस समय कहती हैं, जब वह उसके देवदासी सरीखी भैरवी–रूप में संघ का जीवन जीने की बात उसी से जान कर भी उसे अपनी पत्नी के रूप में ग्रहण करने का निर्णय सुनाता है। इन पंक्तियों में सुजाता उसके विवाह–प्रस्ताव को अस्वीकार करने का कारण बता कर अपनी निश्छलता और स्पष्टता का ही परिचय देती हुई उससे ये शब्द कहती है–

व्याख्या ः

वह आर्य्यमित्र से कहती है कि वह उसे अपने पति के रूप में ग्रहण नहीं कर पाएगी, क्योंकि ऐसा करके उसे संघ में रह कर अनेक कामुक भिक्षुओं के साथ यौन–सम्बन्ध रखने के कलंक को बाँटना पड़ेगा। ऐसा दुस्साहस वह कभी भी नहीं कर सकेगी। वह अस्वीकार के लिए उससे क्षमा भी माँगती है। वह आगे यह भी कहती है कि उसकी पीड़ा वास्तव में रात से भी अधिक काली है। उसका निजी दुःख समुद्र से भी कहीं अधिक है।

आगे वह उसे उस दिनों की बात याद दिलाती है, जब इसी सागर के किनारे बैठ कर वे दोनों रेत पर अपने नाम लिखा करते थे। यह और बात है कि सदैव रोने वाली लहरों वाला सागर शीघ्र ही अपनी लहरों रूपी अंगुलि से उनके नाम मिटा दिया करता था। अन्त में अपने प्रेमी आर्य्यमित्र से इतना और कहती है कि अब उसे मन की रेत पर से अपना प्रेम–भाव भी उसी प्रकार से सदा के लिए मिटा देना चाहिए।

गद्य-सौष्ठव ः

यहाँ भी भाषा प्रसाद के कवि–हृदय से भावुकतापूर्ण और सरस हो उठी है और उसे पढ़ने से पाठक के भीतर एक विशेष रस का संसार होने लगता है। ऐसी रूपकमयी और छायावादी काव्य–भाषा से कथ्य सदैव गहन और घनीभूत हो जाया करता है।

2. किन्तु आर्य्य मित्र ! मैं वह..तुम्हें पहना सकूँगी ?

प्रसंग ः

पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला की बी॰ ए॰ प्रथम वर्ष की कक्षा के हिन्दी विषय की निर्धारित पाठ्य–पुस्तक 'सात कहानियाँ' (सम्पादक ः डॉ॰ ईश्वरदास जौहर) में संकलित श्री जयशंकर प्रसाद की कहानी 'देवरथ' से ये पंक्तियाँ चुनी गई है। इनसे पूर्व सुजाता को उसका प्रेमी भिक्षु आर्य्यमित्र अपने द्वारा किया गया विवाह–प्रस्ताव ठुकराने पर उसे गेरुवे वस्त्र फेंक कर अपने ही योग्य वाराणसी के स्वर्ण–खचित वस्त्र, रत्नमाला, मणि कंकण, हेमकांची आदि देह पर धारण कर लेने का सत्परामर्श देता है।

उसी के उत्तर में यहाँ सुजाता संघ के कामुक भिक्षुओं द्वारा अपना कौमार्य खंडित कर देने का रहस्य उद्घाटित करती हुई संकेतपूर्वक ये शब्द कहती है :–

व्याख्या ः

सुजाता अपने से अत्यन्त निश्छल प्रेम करने वाले राजकुमार से संघ में भिक्षु बने हुए आर्य्यमित्र से कहती है कि अच्दे कुलों की नववधुएँ अपने पतियों को अखण्डित सतीत्व का जो क़ीमती उपहार समर्पित किया करती है, उसे वह भला कहाँ से ला कर उसे दे सकेगी ? आगे वह काव्यात्मक और रूपकात्मक भाषा में कहती है कि जिसने वरमाला में कुआँरापन दूब की तरह हरा–भरा सुरक्षित रखा होता है और जिसमें महुए के फूल–सा ह्रदय का रस भरा रहता है, उसे वह अब भला कैसे पहना सकेगी ?

गद्य–सौंदर्य ः यहाँ सुजाता नारीजनोचित्त लज्जाके कारण अपने प्रिय आर्य्यमित्र से स्पष्ट शब्दों में नहीं बता सकी है कि संघवासी कामुक भिक्षुओं ने उसका कौमार्य कभी का खण्डित कर डाला है और अब वह अपने को उसकी पत्नी बनने के भी योग्य नहीं समझती है।

अन्य कहानियों की तरह ही यहाँ भी संस्कृत तत्सम शब्दावली की प्रधानता है। कथन की भंगिमा व्यंजनापूर्ण है। भाषा में काव्यात्मकता, रूपकात्मकता और भावुकता प्रत्येक वाक्य में ओतप्रोत है। कहानीकार ने कहीं भी नैतिकता, शील या लोक–मर्यादा का उल्लघंन नहीं किया है। सुजाता के इन शब्दों से उसकी हार्दिक निष्कपटता, सत्यवादिता और निरीहता ही प्रतिबिम्बित होती है। समूचा कथन ही छायावादी काव्य–भाषा का प्रभाव लिए हुए माना जाएगा।

2.2.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न ः

1. जयशंकर प्रसाद की 'देवरथ' कहानी का कथा–सार (कथानक) लिख कर इस रचना की कथावस्तु की समीक्षा करें।
2. 'देवरथ' कहानी के शीर्षक (नामकरण) के औचित्य या सार्थकता का तर्क–संगत विवेचन कीजिए।
3. 'देवरथ' कहानी के कथ्य (प्रतिपाद्य, मूल संवोदना, उद्देश्य) पर विस्तार से प्रकाश डालें।
4. 'देवरथ' कहानी किस कोटि (श्रेणी, वर्ग) की कहानी है और इसमें प्रसादकालीन धार्मिक परिवेश का कैसा चित्रण हुआ है ?
5. 'देवरथ' कहानी के नायक आर्य्यमित्र का चरित्र–चित्रण कीजिए।
6. 'देवरथ' कहानी की नायिका सुजाता का शील–निरूपण करें।
7. 'देवरथ' कहानी के शिल्प–विधान की समीक्षा करें।
8. 'देवरथ' कहानी मानव–चरित्र का एक सशक्त चित्र है – इस उक्ति के प्रमाण में कहानी में मानव–मनोविज्ञान का रेखांकन करें।
9. 'देवरथ' कहानी की भाषा छायावादी है' – इस कथन की सार्थकता सिद्ध करते हुए इस कहानी में प्रयुक्त विविध शैलियों का सोदाहरण विवेचन कीजिए।
10. 'देवरथ' कहानी की तात्त्विक समीक्षा करें।
11. 'देवरथ' कहानी को जयशंकर प्रसाद की एक प्रतिनिधि कहानी मान कर उनकी कहानी–कला की उल्लेखनीय विशेषताओं पर विचार करें।

पाठ संख्या ः 2.3 **लेखिका ः डॉ॰ हरिसिमरन कौर**

'प्रायश्चित्त'
(भगवतीचरण वर्मा)

इकाई की रूप–रेखा ः

2.3.0 उद्देश्य
2.3.1 प्रस्तावना
2.3.2 भगवतीचरण वर्मा का जीवन–वृत्त
2.3.3 'प्रायश्चित्त' कहानी की तात्त्विक समीक्षा
कथावस्तु
पात्रों का चरित्र–चित्रण
संवाद–योजना
देशकाल और वातावरण
भाषा–शैली
उद्देश्य
2.3.4 प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्याएँ
2.3.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न

2.3.0 उद्देश्य ः

श्री भगवतीचरण वर्मा एक सफल उपन्यासकार, कहानीकार, कवि और नाटककार के रूप में हिन्दी साहित्य में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। उन्होंने प्रेमचन्दीय मानववाद और मानवतावाद को तो ग्रहण किया है, परन्तु उनकी रचनाओं में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के स्थान पर शुद्ध भोगे हुए यथार्थ के अनुभवों को सीधी सरल भाषा–शैली में सशक्त वाणी प्रदान की है।

इनकी कविताओं, गीतों, कहानियों और उपन्यासों में देशभक्ति और विद्रोह–चेतना के सवर भी छविमान् हैं। इसके अतिरिक्त प्रेम–भावना का रोमांटिक संसार भी इनकी रचनाओं में यत्रतत्र अपने अनूठे रूप में विद्यमान है।

इनके 'भूले–बिसरे चित्र' उपन्यास (सन् 1959 ई॰) को सन् 1961 ई॰ का 'साहित्य–अकादमी' पुरस्कार मिला था। इससे सन् 1850–1930 ई॰ तक की चार पीढ़ियों की कथा कही गई है, जो पीढ़ीगत अन्तरालों की समस्या के साथ–साथ देश की समाजार्थिक (Socio-Economic) राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थतियों का भी खुलासा करती है। इनके इस और अन्य उपन्यासों के पात्र सामाजिक परिवर्तन का सन्देश देते नज़र आते हैं, जिनसे लेखक की प्रगतिशील विचारधारा में गहरी आस्था रेखांकित होती है। इनकी 'दो बाँके' और 'प्रायश्चित्त' जैसी कहानियों में चुटीला हास्य–व्यंग्य मिलता है। इनकी पेंसिल स्केच, मधुपर्क, दीप मालिका, हिलोर, तारा, स्वप्नमयी, रेशम की डोर, ख़ाली बोतल, कबाड़ी का महल इत्यादि में हल्के–फुल्के विषयों के साथ श्री जयशंकर प्रसाद की तरह से प्रेम में सफलता–असफलता, निर्धनों की दयनीयता, कलाकार की मनोवेदना आदि को भी गूँथा गया है। विषयगत वैविध्य इनकी रचनाओं में ख़ूब मिलता है। कवि–रूप में इन्हें छायावादी काव्यधारा के अन्तर्गत भी लिया जाता रहा है, जबकि कुछ समीक्षक इन्हें राष्ट्रीय–सांस्कृतिक काव्यधारा के ही कवि मानते हैं। कहानीकार–रूप में उच्च कोटि की कहानियाँ न देने पर भी सरल, सहज और कौतूहलवर्द्धक घटना–प्रधान कहानियों की

रचना में ही इनकी विशेष रुचि रही है। धार्मिक और सामाजिक अन्धविश्वासों और धर्माडम्बरों पर कटाक्ष करने वाली सीधी–सच्ची कहानियाँ भी इनकी लेखनी से निकल कर लोकप्रिय हुई हैं; ऐसा कहें, तो कोई भी अत्युक्ति नहीं होगी।

प्रस्तुत अध्याय में छात्र जिन तथ्यों का विस्तृत ज्ञान पा सकेंगे, वे अग्रलिखित हैं ः–

1. श्री भगवतीचरण वर्मा का जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व।
2. कहानी 'प्रायश्चित्त' की तात्त्विक समीक्षा ः – कथावस्तु, पात्रों का चरित्र–चित्रण, संवाद–योजना, देशकाल और वातावरण, भाषा–शैली और उद्देश्य। इन सभी तत्त्वों का आलोचनात्मक विवेचन किया गया है।
3. महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्यायें।
4. अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न।

2.3.1 प्रस्तावना ः

भारतीय समाज में निम्नवर्गीय कृषकों, श्रमिकों आदि से ले कर मध्यवर्गीय बाबुओं, क्लर्कों, शिक्षकों आदि और उच्चवर्गीय लखपति लोग सभी प्रचलित धार्मिक और सामाजिक अन्धविश्वासों से ग्रस्त हैं। अशिक्षित होने के कारण तो निम्न आर्थिक स्थिति वाले लोग धर्माडम्बर रचाने वाले पंडितों के माया–जाल में फँसते ही हैं; उनके अतिरिक्त अल्पशिक्षित और सुरक्षित जन भी इन्हीं अर्थलोलुप लोगों के कुचक्र में फँस कर भारी धन–राशि उन्हें समय–समय पर भेंट करते रहते हैं। धार्मिक रुढ़ियों और रीतियों में जितनी आस्था इस देश में है, वैसी कदाचित् किसी दूसरे देश में नहीं मिलेगी। इसी मूल संवेदना पर पाठ्य–पुस्तक में निर्धारित कहानी 'प्रायश्चित्त' भी आधारित है।

राम की बहू एक बिल्ली की करतूतों से तंग आ कर उसे एक पाटा दे मारती है। उस बिल्ली को मरी जान कर घरेलू पंडित को बुला कर लाया जाता है, जो घी की स्वामिनी को इस जीव–हत्या का प्रायश्चित्त करने के लिए हज़ारों रुपयों का ख़र्च बताता है। कम–से–कम ग्यारह तोले की सोने की बिल्ली बना कर यदि प्रायश्चित्त न किया गया, तो उसे मारने वाली का वध के मुहूर्त के अनुसार मरने के बाद कुम्भीपाक नरक की यातना भोगनी पड़ेगी। कहानी की चरम–सीमा में उसी बिल्ली के उठ कर भाग जाने से पंडित जी की आशाएँ धूल में मिल जाती हैं। इस प्रकार अन्धविश्वासों पर कटाक्ष करना ही इस कहानी का प्रमुख अभीष्ठ कहा जाएगा।

2.3.2 श्री भगवतीचरण वर्मा का जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व

श्री भगवतीचरण वर्मा का जीवन–वृत्त ः

श्री भगवतीचरण वर्मा का जन्म शफ़ीपुर, ज़िला उन्नाव में 30 अगस्त सन् 1903 ई॰ को हुआ था। ये श्रीवास्तव कायस्थ हैं। इनके पिता बाबू देवीचरण वर्मा इनकी शैशवावस्था में ही वक़ालत करने की इच्छा से कानपुर आए और वहाँ के पटकापुर मुहल्ले में ही बस गए। सन् 1908 ई॰ में जब ये मात्र पाँच वर्ष के थे, तब वकील साहिब की मृत्यु हो गई। इसका परिणाम यह निकला कि इनके परिवार को ताऊ के सरंक्षण में जाने के लिए विवश होना पड़ा।

काव्य की प्रेरणा इन्हें प्रारम्भ में थियोसोफ़िकल स्कूल, कानपुर के अपने अध्यापक श्री जगमोहन 'विकसित' से प्राप्त हुई। यह बात कक्षा सातवीं की है। कुछ दिनों उपरान्त इनकी रचनाएँ 'प्रताप' में प्रकाशित होने लगीं। श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के अतिरिक्त कानपुर में इनका हेलमेल श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' और श्री विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक से ही बढ़ा। सन् 1923 ई॰ में जब प्रेमचन्द जी मारवाड़ी विद्यालय के प्रधानाचार्य बन कर आए, तो उनसे भी इनका परिचय हुआ। इसी वर्ष इनका विवाह भी हुआ था।

शिक्षा–दीक्षा ः

श्री भगवतीचरण वर्मा ने सन् 1928 ई॰ में प्रयाग विश्वविद्यालय से बी॰ ए॰; एल॰ एल॰ बी॰ की परीक्षा उत्तीर्ण की। शिक्षा समाप्त होने पर इन्होंने वकालत करनी आरम्भ कर दी। वक़ालत की दूकान न चल पाने पर सन् 1932 ई॰ में ये प्रतापगढ़ में स्थित 'भदरी' के राजा साहब के साथ रहने लगे। 'चित्रलेखा' वहीं पूरी हो कर सन् 1934 ई॰ में प्रकाशित हुई। इसके एक वर्ष बाद ही इनकी पत्नी की मृत्यु हो गई। सन् 1934 ई॰ में ही उन्होंने नन्दिता नाम की एक बंगाली युवती को अपनी जीवन–संगिनी के रूप में स्वीकार किया।

इनका एक गीत है ः–

"हम दीवानों की क्या हस्ती,

हैं आज यहाँ, कल वहाँ चले,
मस्ती का आलम साथ चला,
हम धूल उड़ाते जहाँ चले।"

उनका यह गीत लोग गाते–फिरते थे। इनकी यह मस्ती कवि 'नवीन' के अलमस्त स्वभाव से काफ़ी मेल खाती थी। जहाँ इनके काव्य में प्रेमजन्य निराशा और दुःख के घने बादल घुमड़ते हैं, वहाँ राष्ट्रभक्ति के भी उद्‌गार गूँजते रहते हैं, जिनकी बदौलत इनकी कविताएँ प्रासंगिक हो उठी हैं। कहीं–कहीं आधुनिकता–बोध से आपूर्ण नई काव्य–भाषा के दर्शन हो जाते हैं। उदाहरण के लिए ः

यहाँ सफलता या असफलता, ये तो सिर्फ़ बहाने हैं,
केवल इतना सत्य कि निज को हम ही स्वयं अनजाने हैं।

श्री भगवतीचरण वर्मा सिनेमा–जगत् (सन् 1937– 1957 ई॰), पत्रकारिता (सन् 1948 ई॰) और आकाशवाणी (सन् 1950–1957 ई॰) से भी सम्बन्धित रहे। सन् 1960 ई॰ में लखनऊ की महानगर कॉलोनी में इन्होंने अपना बंगला बनवाया और उसका नाम रखा – 'चित्रलेखा'। आलकज उनका परिवार वहीं रहता है।

श्री भगवतीचरण वर्मा का व्यक्तित्व ः

श्री भगवतीचरण वर्मा जीवन की स्वाभाविक भावनाओं के सफल गायक रहे हैं। इनके काव्य का मूल सवर 'नियतिवाद' है। हिन्दी में अपने ढंग से ये अकेले नियतिवादी हैं। इनका 'नियतिवाद' निराशा का समर्थक न हो कर, जीवन के प्रति विभोरता, तटस्थता, लापरवाही और मस्ती का दृष्टिकोण बनाए रखने का साधन मात्र है। कला की दृष्टि से इनकी रचनाओं की प्रमुख विशेषता है – स्पष्टता। इनकी भाषा सांकेतिक चाहे कम हो, परन्तु सरल है। वर्मा जी के पाइकों को इनके अभिप्रेत अर्थ के समझने में कभी किसी प्रकार की कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता है। यह कोई कम महत्त्व की बात नहीं है।

श्री भगवतीचरण वर्मा का कृतित्व ः

श्री भगवतीचरण वर्मा ने हिन्दी साहित्य में अग्रलिखित योगदान दिया ः

1. काव्य ः

वर्मा जी के अब तक अग्रलिखित काव्य–ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं ः

1. मणुकण (सन् 1932 ई॰)
2. प्रेम–संगीत (सन् 1937 ई॰)
3. मानव (सन् 1940 ई॰)
4. रंगों से मोह (सन् 1962 ई॰)
5. एक दिन।

ये राष्ट्रीय–सांस्कृतिक काव्यधारा का पूर्ण प्रतिनिधित्व करते हैं। 'मेरी आग' कविता में क्रान्ति–चेतना की पंक्तियाँ देखिए ः –

"फिर न मिलेंगे ये दीवाने, फिर न मिलेगा इनका त्याग।
जल उठ, जल उठ ! मेरी धधक उठ, महानाश–सी मेरी आग।"

'मधुकण' में कोमलता और ओज से पूर्ण कुछ प्रारंभिक रचनाएँ हैं। कोमलता है प्रेम और सौंदर्य को ले कर तथा ओज है जीवन के कलुष को मिटाने के लिए हृदय में उठे आवेश में, जो 'बादल' जैसी रचनाओं में ीारा पड़ा है। जीवन में उत्थान–पतन, वैभव–दीनता, सौंदर्य–श्रीहीनता अर्थात् परिस्थितियों के उतार–चढ़ाव को उच्च स्तर पर अत्यंत प्रभावशाली ढंग सं चित्रित करने के लिए वर्मा जी ने 'नूरजहाँ की क़ब्र पर' शीर्षक एक लंबी मार्मिक रचना प्रस्तुत की। यह 'मधुकण' की सबसे सफल रचना है। इस काव्य ग्रंथ में 'तारा' नाम से एक काव्य–रूपक भी संग्रहीत है, जिसमें पाप–पुण्य की समस्या उठायी गयी है। 'प्रेम–संगीत' में जैसा कि उसके नाम से स्पष्ट है, प्रेम–संबंधी बीस रचनाएँ हैं। 'मानव' वर्मा जी पिछली दोनों कृतियों से भिन्न प्रकार की कृति है। इसमें अपने युग की समस्याओं पर उन्होंने यथार्थवादी दृष्टि से विचार किया है।

इसी में 'भैंसा–गाड़ी', 'ट्राम', 'राजा साहब का वायुयान' आदि रचनाएँ हैं, जिनमें जीवन की भयंकर वास्तविकता को कवि ने चित्रित किया है। इस ग्रंथ में कवि अधिकतर शोषितों के समर्थक और मानवता के प्रचारक के रूप में दिखाई देता है। यहीं वर्मा जी गांधीवाद का समर्थन भी कर सके हैं। 'रंगों से मोह' में कुछ रचनाएँ देश, कुछ प्रणय, कुछ प्रार्थना–परक है। देश–संबंधी रचनाओं पर स्वतंत्रता–प्राप्ति के बाद की घटनाओं का प्रभाव पाया जाता है। प्रार्थना–गीतों में भावों की पूरी आद्रता पायी जाती है।

इनकी कुछ अन्य कविताओं के उदाहरण आगे प्रस्तुत किए जा रहे हैं ः–

1. नीचे जलने वाली पृथ्वी,
ऊपर जलने वाला अंबर,
औ कठिन भूमि की जलन लिए
नर बैठा है बन कर पत्थर;
पीछे है पशुता का खँडहर,
दानवता का सामने नगर,
मानव का कृश कंकाल लिए
चरमर–चरमर चूँ–चरर–मरर
आ रही चली भैंसा गाड़ी।

2. तुम रणकण के ढेर, उलूकों के तुम भग्न विहार।
किस आशा से देख रहे हो, तुम नभ पर प्रति बार ?
कि जिससे टकराता था कभी
तुम्हारा उन्नत भाल।
सुनते हैं, तुमने भी देखा था वैभव का काल।
धूल में मिले हुए कंकाल !

3. जब कलिका को मदमाता में
हँस देने का वरदान मिला;
जब सरिता की उन बेसुध–सी
लहरों को कल–कल गान मिला;
जब भूले–से भरमाये–से
भ्रमरों को रस का पान मिला;
तब हम मस्तों को हृदय मिला,
मर मिटने का अरमान मिला।

2. उपन्यास ः

श्री भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास 'चित्रलेखा' (सन् 1934 ई॰) को ही उपन्यासकार के रूप में लेखक की ख्याति का प्रस्थान–बिन्दु माना जा सकता है। इसमें पाप और पुण्य की समस्या का अत्यन्त दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक विवेचन कृति की उपलब्धि है। इनके दो उपन्यास 'तीन वर्ष' और 'आखिरी दाँव' भी इसी काल की रचनाएँ हैं।

3. कहानी ः

श्री भगवतीचरण वर्मा अपनी 'दो बाँके' कहानी के चुटीले हास्य–व्यंग्य और भाषा–शैली के बाँकपन के प्रसिद्ध रहे। ये आठवें दशक तक निरन्तर रचना–रत रहे हैं। इनकी चर्चित कहानियाँ अग्रलिखित हैं ः

1.	पेंसिल स्केच	2.	मधुपर्क	3.	दीप–मालिका
4.	हिलोर	5.	तारा	6.	स्वप्नमयी।

इनके कहानी–संग्रह अग्रलिखित है ः

1.	कला की दृष्टि	2.	दीप–मालिका	3.	पुष्पकरिणी
4.	रेशम की डोर	5.	ख़ाली बोतल	6.	कबाड़ी का महल।

4. एकांकी ः

श्री भगवतीचरण वर्मा के एकांकी भी अभिनेय रहे हैं। उनमें युगीन समस्याओं का निरूपण हुआ है। कुछ एकांकी हास्य–रस और व्यंग्य–कटाक्ष से भरपूर हैं तथा 'मैं और केवल मैं', 'सबसे बड़ा आदमी', 'दो कलाकार' इत्यादि।

फ़िल्मों में कथा–लेखन, पत्रकारिता तथा आकाशवाणी में सलाहाकार (Advisor) का कार्य करने के उपरान्त अब ये केवल एक स्वतन्त्र लेखक के रूप में निरन्तर लेखक–कार्य में सलंग्न रहे थे।

2.3.3 'प्रायश्चित्त' कहानी की तात्त्विक समीक्षा

कथावस्तु ः

इस कहानी की कथावस्तु अत्यन्त सरल, सहज और कौतूहलवर्धिनी है। अतः कथावस्तु जटिल की अपेक्षा सरल कथावस्तु की कोटि की ही ठहरती है।

रामू की बहू का विवाह मात्र चौदह वर्ष की अवस्था में हो गया था। जब वह ससुराल आई, तो उसे धत्ता बता कर कबरी बिल्ली उसकी आँख बचा कर रसोई आदि में घुस कर दूध, घी, मलाई आदि चट करके उसकी नाक में दम करने लगी। आख़िर एक दिन वह निश्चय कर लेती है कि या तो वही घर में रहेगी या वह बिल्ली। सो, पहले वह उसे फँसाने के लिए एक कठघरा मँगवाती है, परन्तु चतुर बिल्ली पर किसी भी वस्तु का प्रभाव न पड़ा। उसे पहले की तरह से सास की मीठी झिड़कियाँ खानी पड़ती हैं और पति को वही रुखा–सूखा भोजन।

एक दिन जब बहू ने बड़े ही चाव से पिस्ता, बादाम, मखाने आदि डाल कर खरी बनाई, तो बिल्ली ने ताक पर ऊँचाई पर धरा खीर का कटोरा अपनी छलाँग से गिरा दिया। फूल के कटोरे के टूटने और खीर के बिखरने से रामू की बहु पर खून सवार हो गया। रात भर जागती रही, सवेरे उठ कर वह बिल्ली को देख कर कमरे की देहरी पर दूध का कटोरा धर गई। लौट कर दूध गटकती हुई बिल्ली पर पूरे बल से एक पाटा दे मारा, जिससे बिल्ली उलट कर धरती पर निस्पन्द गिर गई।

मेहरी ने बहू को बिल्ली की हत्या कर देने को बुरा कहा। मिसरानी ने घोषणा कर दी कि बहू के सिर पर जब तक यह हत्या रहेगी, वह रसोई नहीं बनाएगी। सास भी कहती है कि वह भी तब तक कुछ न खाएगी, न पियेगी। फिर उसने महरी को ही जल्दी से पण्डित को बुलवा कर लाने का आदेश दे डाला।

समाचार मिलते ही पंडित परमसुख प्रसन्न हो उठे। सोचा लाला घासीराम के घर वालों को बहू द्वारा बिल्ली की हत्या कर अब प्रायश्चित्त करना पड़ेगा और उन्हें ढेरों पकवान खाने को मिलेंगे मथुरा में पंसेरी खुराक़ वाले पंडितों में उनकी गिनती होती थी। वे आते हैं। किसनूँ की माँ जब उनसे बिल्ली की हतया से मिलने वाले नरक के बारे में पूछती है, ताके पंडित जी घटना के समय प्रातः के सात बजे को ही ब्राह्म मुहूर्त का समय बता कर कंभीपाक नरक का नाम लेते हैं। रामू की माँ की आँखों में आँसू छलकते देख कर वे उसे बताते हैं कि प्रायश्चित्त करने से सब ठीक हो जाएगा। वे सोने की ही बिल्ली बनवा कर बहू के हाथों से दाने करने का सुझाव देते हैं। उनके मतानुसार शास्त्रों में तो ठीक बिल्ली के ही वज़न की बिल्ली का दान करने का विधान लिखा है, परन्तु इस कलियुग धर्म, कर्म और श्रद्धा का सर्वनाश होने का रोना रोते हैं, फिर कम–से–कम 21 तोले के सोने की बिल्ली दान करने की बात करते हैं।

जब रामू की माँ मात्र 1 तोले के सोने की बात करती है, तब पण्डित जी उसे बहू से बढ़ कर रुपये का लोभ होने और रुपये का लोभ होने और बहू ने सिर पर पाप लगे रहने की बात करते हैं। आख़िर 11 तोले सोने पर मामला तय होता है। इसके बाद पण्डित जी पूजा के सामान में दान करने के लिए दस मन गेहूँ, एक मन चावल, एक मन दाल, मन भर ही तिल, 5–5 मन जौ और चने, चार पंसेरी घी और मन भर नमक बता कर कहते हैं, "बस इतने से काम चल जाएगा।"

यह सुन कर रामू की माँ, छन्नू की दादी और मिसरानी तीनों पण्डित जी की हाँ–में–हाँ मिलाती नज़र आती है। अब पुनः पण्डित परमसुख रामू की माँ को कुम्भीपाक नरक का भय दिखाते हैं और उस थोड़े–से ख़र्च से अपना मुँह कदापि

न मोड़ने की सलाह देते हैं। जब वह "जो नाच नचाओगे, नाचना ही पड़ेगा", जैसी बात करती है, तब पण्डित जी रुष्ठ हो कर अपना पोथी–पत्रा बटोर कर जाने का कोरा अभिनय करते हैं। तीनों नारियाँ उन्हें मनाती हैं और रामू की माँ पण्डित जी के चरण पकड़ लेती है।

अब पंडित पुनः 21 दिनों के पाठ के 21 रुपये लेने की बात करते हैं तथा 21 दिनों तक दोनों समय 5–5 बाह्मणों को भोजन करवाने की बात और जोड़ देते हैं। फिर तनिक रुक कर अकेले ही दोनों समय भोजन करने और उन्हें पाँच ब्राह्मणों से भोजन कराने का फल ही मिल जाने का आश्वासन देते हैं।

मिसरानी मुस्कराकर पंडित जी की तोंद देखने का उपहास करती है।

अब पंडित जी रामू की माँ से ग्यारह तोले सोना निकाल लाने के लिए कहते हैं और दो घँटे में बाज़ार से उसे सोने की बिल्ली बनवा कर लाने की भी बात करते हैं। तब तक वे पूजा के सामान का प्रबन्ध करने की सलाह दे ही रहे होते हैं कि तभी हाँफती हुई महरी कमरे में घुस कर पूछने पर कहती है, "माँ जी, बिल्ली तो उठ कर भाग गई।"

इस अप्रत्याशित कथा–मोड़ या 'चरम सीमा' से कहानी का सुखान्त घटित होता है।

पात्रों का चरित्र-चित्रण ः

इस कहानी में पात्रों का शील–निरूपण अत्यन्त स्वाभाविक और विश्वसनीय बन पड़ा है। मुख्य पात्र रामू की बहू, माँ (राम की बहू की सास) और पंडित परमसुख – तीन मुख्य पात्र हैं। घर की महरी, मिसरानी दोनों गौण नारी–पात्र हैं। पड़ौसिनों में किसनूँ की माँ, छन्नू की दादी जैसे नारी पात्र तो नगण्य ही हैं।

रामू की माँ के चरित्र की प्रमुख विशेषताएँ ये हैं ः धर्म भीरुता, आस्तिकता, पुत्रवधू से प्रेम, अर्थाभावों से चिनता इत्यादि।

रामू की पत्नी अर्थात् बहू के चरित्र और व्यक्तिगत ये हैं ः कर्त्तव्यशीलता, सहजकोपिता, पाक कला–कुशलताा, कैर्शोर्य सुलभ चंचलता, निरीहता, भोलापन, सेवा–भाव इत्यादि।

पंडित परमसुख के चरित्र की प्रमुख प्रवृत्तियाँ या गुण इस प्रकार हैं ः– अर्थलोलुपता, पेटूपन, मिथ्याभाषिता, स्वार्थपरता, वाचालता, चतुरता, दूरदर्शिता इत्यादि।

ये तीनों पात्रा अपने वर्ग के प्रतिनिधि चरित्र (Typical Characters) तो हैं ही, साथ ही अपरिवर्तिनशील चरित्र (Flat Characters) भी हैं, इन्हें परिवर्तनशील (Round) चरित्रों की कोटि में नहीं रखा जा सकता है। पूर्वोक्त तीनों पात्रो का चारित्रिक विकास ठीक से हुआ है। शेष चरित्र मो भरती के ही हैं, किन्तु ने अन्य प्रमुख पात्रों के चरित्र की रेखाएँ गहराने में सहायक ही कहे जायेंगे। समग्रतः शील–निरूपण के निकष पर यह कहानी खरी उतरने वाली मानी जा सकती है।

संवाद–योजना ः

इस कहानी में संवाद स्थिति, परिस्थिति और मनःस्थिति के अनुसार संक्षिप्त और सुदीर्घ दोनों ही प्रकार के हैं। ये कथा–विन्यास के सहायक होने के साथ–साथ पात्रों के अन्तर्द्वन्द्वों के सूचक भी ठहरते हैं। कुछ उदाहरणों से यह तथ्य प्रमाणित हो जाता है यथा ः–

1. संक्षिप्त संवाद ः

1. रामू की माँ पुत्रवधू द्वारा बिल्ली की हत्या करने के प्रायश्चित्तस्वरूप पंडित परमसुख द्वारा 21 तोले की सोने की बिल्ली बना कर दान करवाने की बात सुन कर घबरा कर कहती है, "अरे, बाप रे, इक्कीस तोला सोना। पण्डित जी यह ता बहुत है। तोले भर की बिल्ली से काम न निकलेगा ?"

2. अरे पण्डित जी, रामू की माँ को कुछ नहीं अखरता, बेचारी को कितना दुःख है............बिगड़ो न।"

पण्डित जी को रुष्ट हो कर जाने के लिए तैयार देख कर घर की मिसरानी उन्हें मनाने के लिए ये शब्द कहती है।

2. सुदीर्घ संवाद ः

पंडित परमसुख का लम्बा कथन प्रेक्षनीय है, "बिल्ली कितने तोले की बनवाई जाए ? अरे, रामू की माँ, शास्त्रों

में तो लिखा है कि बिल्ली के वज़न भर सोने की बिल्ली बनवाई जाए, लेकिन अब कलयुग आ गया है। धर्म–कर्म का नाश हो गया है, श्रद्धा नहीं रही। सो, रामू की माँ, बिल्ली तो क्या बनेगी, क्योकि बिल्ली बीस–इक्कीस सेर से कम क्या होगी। हाँ, कम–से–कम इक्कीस तोले की बिल्ली बनवा कर दान करवा दो, और आगे तो अपनी–अपनी श्रद्धा।"

इसी प्रकार संवादों द्वारा पात्रों के चरित्र–चित्रण की जो विविध शैलियाँ अपनाई गई हैं, उनके कुछ निदर्शन आगे प्रस्तुत हैं ः–

1. एक पात्र द्वारा अन्य पात्र का चरित्र-चित्रण ः

जब रामू की माँ द्वारा बिल्ली कह हत्या के प्रायश्चित्तस्वरूप पंडित जी द्वारा 21 तोले सोने की बिल्ली बनवा कर बहू के हाथों दान करने की बात कहते हैं, तब रामू की माँ केवल तोले भर सोने की बात कहती है। उसकी बात सुनते ही पंडित जी उसके धन–लोभ पर कटाक्ष करते हुए कहते हैं, "रामू की माँ, एक तोले की बिल्ली ! अरे, रुपये का लोभ बहू से बढ़ गया ? बहू के सिर बड़ा पाप है, इसमें इतना लोभ ठीक नहीं।"

2. पात्र द्वारा आत्म चरित्र-चित्रण ः

पंडित परमसुख का कथन अवलोकनीय है, "उसमें क्या मुश्किल है, हम लोग किस दिन के लिए हैं, रामू की माँ ? मैं पाठ कर दिया करूँगा, पूजा की सामग्री आप हमारे घर भिजवा देना।"

3. लेखक द्वारा पात्र का चरित्र-चित्रण ः

एक स्थान पर कहानीकार स्वयं पंडित परमसुख के चरित्र के बारे में यह व्यंग्यपूर्ण, किन्तु सार्थक टिप्पणी करता है, "कहा जाता है कि मथुरा में जब मसेरी खुराक वाले पंडितों को ढूँढा जाता था, तो पंडित परमसुख जी को उस लिरूट में प्रथम स्थान दिया जाता था"

महरी का कथन उसके स्तर और शिक्षा के सर्वथा अनुकूल भाषा लिए हुए हैं, "फिर क्या हो, कहो, तो पंडित जी को **बुलाए लाएँ**।"

किसनू की माँ का भी यह कथन नारीजनोचित भाषा और स्तर के अनुरूप ढला है, "पंडित जी, बिल्ली की हत्या करने से **कौन** नरक मिलता है ?"

समग्रतः इस कहानी के संवाद चुस्त–दुरुस्त और पात्रानुकूल भाषा वाले ही माने जायेंगे।

देशकाल और वातावरण ः

इस कहानी में एक उच्च मध्यवर्गीय हिन्दू परिवार के वातावरण का अधिक अवकाश न होने पर भी यथार्थपरक वर्णन अधिक किया गया है। यथा ः–

1. भण्डार–घर की चाबी उसकी करधनी में लटकने लगी, नौकरों पर उसका हुकुम चलने लगा और रामू की बहू घर में सब कुछ।

2. एक दिन रामू की बहू ने रामू के लिए खीर बनाई। पिस्ता, बादाम, मखाने और तरह–तरह के मेवे दूध में औटाए गए, सोने का वर्क चिपकाया गया और खीर से भर कर कटोरा कमरे के एक ऐसे ऊँचे ताक पर रखा गया, जहाँ बिल्ली न पहुँच सके। रामू की बहू इसके बाद पान लगाने में लग गई।

फिर भी पृष्ठभूमि के रूप में देशकालगत ऐसे उदाहरण नगण्य ही हैं। अतः कहा जा सकता है कि स्थान, समय, परिवेश और प्रकृति आदि के वर्णन हस कहानी में लगभग नगण्य ही हैं। अतः इस तत्त्व के निकष पर यह कहानी निर्बल ही ठहरती है।

भाषा–शैली ः

भाषा की सरलता, स्वाभाविकता, कौतूहलवर्द्धकता और पात्रानुकूलता के सभी गुण इस कहानी की भाषा में हैं। सबसे सटीक भाषा पण्डित परमसुख के कथनों में मिलती है। यथा ः–

1. फिर इससे कम मे तो काम न चलेगा। बिल्ली की हत्या कितना बड़ा पाप है, रामू की माँ। ख़र्च को देखते वक़्त

पहले बहू के पाप को तो देख लो। यह तो प्रायश्चित्त है, कोई हँसी–खेल थोड़े ही है; अरे सौ डेढ़ सौ रुपया आप लोगों के हाथ का मैल है।"

2. पण्डित जी आगे भी कहते हैं, "इक्कीस दिन के इक्कीस रुपये और इक्कीस दिन तक दोनों वक़्त पाँच–पाँच ब्राह्मणों को भोजन करवाना पड़ेगा।..............सो, इसकी चिन्ता न करो, मैं अकेले दोनों समय भोजन कर लूँगा और मेरे अकेले भातन करने से पाँच ब्राह्मणों के भोजन का फल मिल जाएगा।"

इस सामाजिक कहानी में कई प्रकार के जो शब्द प्रयुक्त हुए हैं, उनके निदर्शन इस प्रकार हैं ः–

1. संस्कृत तत्सम शब्द ः

बालिका, प्रेम, घृणा, प्रथम, सतर्क, विविध, प्रकार, व्यंजन, उपस्थित, अपराधिनी, भाँति, सहानुभूति, पंडित, हत्या, ब्रह्म, कुम्भीपाक नरक, कृष्ण, प्रातःकाल, स्वर, गम्भीर, चिन्ता, अक्षर, पुरोहित, दिन–शास्त्र, प्रायश्चित, विधान, दान, धर्म, कर्म, पूजा, लोभ, तिल, पाप, एक, स्वर, भोजन, ब्राह्मण, फल, व्यंग्य, प्रबन्ध।

2. तद्‌भव शब्द ः

घर (सं॰ गृह), पाँच (सं॰ पंच), मुँह (सं॰ मुख), हाथ (सं॰ हस्त), बहू (सं॰ वधू), काम (सं॰ कर्म), सब (सं॰ सर्व), आँख (सं॰ अक्षि), दूध (सं॰ दुग्ध), ऊपर (सं॰ उपरि), रात (सं॰ रात्रि), नींद (सं॰ निद्रा), सिर (सं॰ शिर), महूरत (सं॰ मुहूर्त्त), माथे (सं॰ मस्तक), उँगली (सं॰ अंगुलि), नाक (सं॰ नासिका), पत्रे (सं॰ पत्र), बात (सं॰ वार्ता)।

3. देशज शब्द ः

हांड़ी, खड़ी, कटोरी, बालाई, कठघरा, पान, छलाँग, चम्पत, देहरी, महरी, झाड़ू, तोंद, औटाना इत्यादि।

4. अरबी–फ़ारसी–उर्दू शब्द ः

आफ़त, ताक़, जिन्स, दुश्वार, मोरचाबंदी, फ़ासिले, सरगर्मी, वर्क़, हौसला, नदारद, माल, आवाज़, सुबह, ज़िन्दा, चेहरे, क़रीब, सामान, ख़र्च, वक़्त, किफ़ायत, आदमी, तरफ़, ज़िम्मे, खुशी, बेचारी, ज़रा, खत्म इत्यादि।

5. ध्वन्यात्मक शब्द ः

झनझनाहट, इत्यादि।

6. मुहावरे ः

छक्के पुँजे, परच जाना, सिर हत्या लगना, हँसी खेल होना, नाच नचाना, हाथ लगना, हिलाना, न डुलना, कमर का लेना इत्यादि।

7. कहावतें ः

न रहे बाँस, न बजे बाँसुरी; हाथ की मैल इत्यादि।

8. विशेषण–विकार ः

स्वादिष्ट (सं॰ स्वादिष्ठ)

9. संज्ञा–विकार ः

प्रायश्चित (सं॰ प्रायश्चित्त), कलयुग (सं॰ कलियुग)।

समग्रतः इस कहानी की भाषा–शैली सशक्त और स्वाभाविक ही कही जाएगी।

उद्देश्य ः

इस कहानी में भारतीय समाज में प्रचलित विभिन्न अन्धविश्वास और पाप–पुण्य, प्रायश्चित जैसी धार्मिक रुढ़िवादी मान्यताओं के लिए पण्डितों–पुजारियों द्वारा फैलाये गये धर्माडम्बरों पर कटाक्ष किया गया है। एक घर में फटा फेंक कर बिल्ली को मारा गया और बहू समझी कि बिल्ली मर गई है। सो, घर भर की और आस पड़ौस की नारियों ने भी रसोई बनाना, खान–पान बंद करना आरम्भ कर दिया। इस प्रकार कहानीकार भगवतीचरण वर्मा ने लोगों को पण्डितों–पुराहितों आदि के द्वारा प्रचारित धार्मिक अन्धविश्वासों को अपने मनों से दूर करने का सुझाव संकेतपूर्वक दिया है। इस प्रकार यह एक सोद्देश्य और सशक्त कहानी है।

2.3.4 महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्यायें

1. बिल्ली कितने तोले की...अपनी अपनी श्रद्धा।

प्रसंग ः

ये शब्द पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला की बी॰ ए॰ हिन्दी प्रथम वर्ष कक्षा में निर्धारित पाठ्य–पुस्तक 'सात कहानियाँ' (सम्पादक ः डॉ॰ ईश्वरदास जौहर) की श्री भगवतीचरण वर्मा की कहानी 'प्रायश्चित्त' से उद्धृत किए गए हैं। यह कथन पण्डित परम सुख द्वारा रामू की माँ, मिसरानी, किसनू की माँ, छन्नू की दादी आदि को सम्बोधित है।

इससे पहले रामू की बहू द्वारा पाटे के प्रहार से बिल्ली की मौत जान कर पण्डित परम सुख जी बहू को शास्त्र के कुम्भीपाक नरक में जाने के दण्ड का विधान कर डरा देते हैं। फिर यह कह कर रामू की माँ को आश्वस्त करते हैं कि आख़िर हम पुराहित किस दिन के लिए हैं। शास्त्रों में जो प्रायश्चित्त का विधान दिया गया है, उसके विधिपूर्वक करने से प्रातःकाल ब्रह्म मूहूर्त में बिल्ली मारने का किया गया पाप घुल सकता है। जब रामू की माँ पंडित परम सुख से प्राश्यचित्त करने का ढंग पूछती है, तो वे कहते हैं कि जब तक सोने की एक बिल्ली बनवा कर बहू के हाथों दान न करवाई जाएगी, तब तक घर अपवित्र ही रहेगा। इतना ही नहीं, बिल्ली दान कर देने के बाद घर में इक्कीस दिनों तक निरंतर पाठ भी करवाना होगा।

यह सुन कर पड़ौसिन छन्नू की दादी यह सुझाव देती है कि पहले सोने की बिल्ली बनवा कर दान कर दी जाए और पाठ उसके बाद करवा लिया जाए। रामू की माँ जब पंडित परम सुख से यह पूछती है कि कितने सोने की बिल्ली बनवाई जाए, तब वे पूर्वोक्त लम्बा वक्तव्य देते हैं ः–

व्याख्या ः पंडित जी अपनी तोंद पर हाथ फेरते हुए मुस्करा कर कहते हैं कि भारतीय ज्योतिषशास्त्रों में तो बिल्ली के बराबर के तौल की ही सोने की बिल्ली बनवाने का विधान लिखा हुआ है। यह और बात है कि इस घोर कलियुग के समय में लोगों के मनों से धार्मिक कार्य सम्पन्न करने की भावना लगभग समाप्त ही हो चुकी है। वासतव में लोग अब धर्म के प्रति पहले की तरह से ही श्रद्धा या पूज्य भावना नहीं रखते थे।

चूँकि बिल्ली तो बीस–इक्कीस सेर के वज़न की ही होगी। अतः उसके बराबर वज़न के सोने की बिल्ली तो आजकल कहाँ बनवाई जाएगी। फिर भी कम–से–कम इक्कीस तोले सोने की बिल्ली बवना कर ही बहू के हाथों दान करवा देनी चाहिए। शेष दान की मात्रा तो अपनी–अपनी व्यक्तिगत श्रद्धा के अनुसार ही हुआ करती है।

2. फिर इससे कम में तो...लोगों के हाथ का मैल है।

प्रसंग ः

यह कथन पण्डित परमसुख का रामू की माँ, महरी, पिसरानी, पड़ौसिनों आदि के प्रति सम्बोधित है और श्री भगवतीचरण वर्मा की कहानी 'प्रायश्चित्त' से चुना गया है। यह सामाजिक कहानी पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला की बी॰ ए॰ प्रथम वर्ष कक्षा के हिनदी विषय की निर्धारित पाठ्य–पुस्तक 'सात कहानियाँ' में संकलित है। यह पुस्तक डॉ॰ ईश्वरदास जौहर द्वारा सम्पादित है।

इससे पहले पंडित परमसुख रामू की माँ को यह सुझाव देते हैं कि प्रातःकाल में बहू द्वारा बिल्ली की जो हत्या की गई है, उसके लिए कुम्भीपाक नाक के दंड का शास्त्रीय विधान है। यदि बहू के हाथों से सोने की बिल्ली दान करवा दी जाए, तो घर को पहले की ही तरह से पवित्र कराया जा सकता है। रामू की माँ आख़िर 11 (ग्यारह) तोले सोने की एक बिल्ली बनवा कर दान करने पर सहमत हो जाती है।

इसके बाद पंडित जी पूजा का सामान गिनवाते हैं ः दस मन गेहूँ, एक–एक मन तिल, नमक, चावल और दान, पाँच–पाँच मन जौ और चना लगेगा। इतना सुन कर रामू की माँ घबरा जाती है और इसका कुल ख़र्च सौ–डेढ़ सौ रुपये तक का अनुमान लगाती है। कहते–कहते वह रुआँसी हो जाती है। उसकी ऐसी मनःस्थिति देख कर पंडित जी यह वक्तवय देते हैं ः–

व्याख्या ः

पंडित परमसुख बेहद उखड़े स्वर में रामू की माँ को समझाते हैं कि इतने से कम धन से पूजा का काम नहीं चल

पाएगा। बिल्ली की हत्या कोई छोटा–सा पाप नहीं है। उसे ख़र्च के साथ–साथ अपनी पतोहू के द्वारा किए गए घोर पाप को भी अपने ध्यान में रखना चाहिए। आख़िर वह इतने बड़े किए गए घोर पाप को भी अपने ध्यान में रखना चाहिए। आख़िर वह इतने बड़े पाप को धुलवाने के लिए विधि–विधान से पूरा प्रायश्चित्त करवा रही है। यह कोई बच्चों का हँसी–खेल नहीं हैं कि सस्ते में जान छूट जाएगी।

इसके अतिरिक्त वह रामू की माँ से एक और बात बल दे कर कहते हैं कि समाज में बनी हुई अपनी प्रतिष्ठा और मर्यादा के ही अनुसार प्रायश्चित्त में कम या अधिक धन व्यय किया जाता है। अरज तक समाज में ऐसी ही लोक–रीति प्राचीन काल से चली आई है। वे लोग भी कोई कम हैसियत या प्रतिष्ठा वाले नहीं हैं। सच तो यह है कि इस कार्य में वयय होने वाला जो सौ, डेढ़ सौ रुपये उन्होंने बताए हैं, वह तो उनके लिए हाथ के मैल के बराबर है अर्थात् बहुत छोटी बात या ख़र्च ही समझा जाएगा।

गद्य–सौष्ठव ः

इन पंक्तियों में पंडित परमसुख रामू की की माँ को बिल्ली की हत्या के पाप से मुक्त होने और अपने घर को पवित्र करने के लिए लगभग सौ–डेढ़ सौ रुपयों का ख़र्च बताते हैं। वे अपने कम ख़र्च न कर सकने की बात पर ही अड़ कर अपने हठीले और सहजकोपी स्वभाव का ही परिचय देते हैं।

'हँसी खेल होना' एक मुहावरा है और 'हाथ का मैल' प्रचलित कहावत या लोकोक्ति का प्रयोग हुआ है। समग्रतः भाषा एक अर्थलोलुप और धर्माडम्बरी पंडित के चरित्र के सर्वथा अनुरूप बन पड़ी है।

3. रामू की बहू ने तै कर लिया..........................उस पर हाथ न लगा सके।

प्रसंग ः

यह गद्यांश पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला की बी॰ ए॰ प्रथम वर्ष कक्षा के हिन्दी विषय की निर्धारित पाठ्य–पुस्तक 'सात कहानियाँ' की श्री भगवतचरण वर्मा द्वारा रचित कहानी 'प्रायश्चित्त' से उद्धृत किया गया है। इस पुस्तक के संपादक डॉ॰ ईश्वरदास जौहर हैं। ये पंक्तियाँ लेखक द्वारा रामू की बहू (पत्नी) और उसे हरदम तंग करती रहने वाली कबरी बिल्ली के ही सम्बन्ध में कही गई हैं और कहानी में स्वयं कहानीकार का ही कथन है, जिसे लेखकीय हस्तक्षेप कहा जा सकता है।

बिल्ली की करतूतों से तंग आ कर रामू की बहू चूहेदानी जैसे एक बड़ा कठघरा मँगचा कर बिल्ली को उसमें फँसा कर कहीं दूर भिजवा देना चाहती है, परन्तु चतुर और शातिर बिल्ली कठघरे के झाँसे में बिल्कुल नहीं आती है।

व्याख्या ः

जब कबरी बिल्ली रामू की पत्नी की नज़र बचा कर रोज़ रसोई आदि स्थानों में रखे दूध, घी, मलाई आदि चट करती रहती है, तब पत्नी यह निश्चित कर लेती है कि या तो वही घर में रहेगी या फिर वह पेट और माल उड़ाऊ बिल्ली। वह उसके विरुद्ध मोर्चा तैयार करती है। उसकी तरह से बिल्ली भी पहले से अधिक सावधान हो जाती है। रामू की बहू बिल्ली को फँसाने के लिए बाज़ार से कठघरा मँगवा लेती है और उसके भीतर दूध, मलाई, चूहे और उसे स्वादिष्ट लगने वाली अन्य वस्तुएँ भी रखवा देती है। बिल्ली इतनी चुस्त थी कि वह नज़र उठा कर भी उस कठघरे की ओर नहीं देखती है। उसमें पहले वे अधिक फुर्ती आ गई थी। इससे पहले वे कबरी बिल्ली घर भर के सभी सदस्यों में केवल रामू की बहू (पत्नी) से ही डरा करती थी, किन्तु अब तो वह सदा उसी के साथ ही रहा करती थी। फिर भी वह उससे इतनी दूरी अवश्य बनाए रखती हैं कि वह उस पर अपना हाथ न उठा सके।

गद्य-सौन्दर्य ः

इस गद्यांश की भाषा सरल, स्वाभाविक और प्रवाहपूर्ण कही जाएगी। रामू की धर्मपत्नी और कबरी दोनों में जो सदैव बच्चों की–सी आँख मिचौनी चलती रहती थी, ये पंक्तियाँ उसी परस्पर रस्साकशी की एक झलक मात्र प्रस्तुत करती है। साथ लग जाना, हाथ लगा सकना हिन्दी के सामान्य प्रचलित मुहावरे कहे जा सकते हैं। घर (सं॰ गृह), हाथ (सं॰ वधू), बिल्ली (सं॰ विडालिका), हाथ (सं॰ हस्त) तद्भव शब्द हैं। सतर्क, स्वादिष्ट, व्यंजक संस्कृत तत्सम शब्द है। अरबी–फ़ारसी–उर्दू शब्दों में तै, निगाह, मोरचाबन्दी, लेकिन, फ़ासिले गिलाए जा सकते हैं। लेखक का वर्णन सरल होने के साथ–साथ सरस भी बन पड़ा है।

2.3.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न ः

1. 'प्रायश्चित्त' कहानी का कथासार (कथानक) लिख कर इस रचना की कथावस्तु (Plot) की समीक्षा करें।
2. 'प्रायश्चित्त' कहानी के शीर्षक (नामकरण) के औचित्य या सार्थकता का तर्कसंगत विवेचन करें।
3. 'प्रायश्चित्त' कहानी के कथ्य (प्रतिपाद्य, मूल संवोदना, उद्देश्य) पर विस्तार से प्रकाश डालें।
4. 'प्रायश्चित्त' कहानी किस कोटि (श्रेणी, वर्ग) की कहानी है और इसमें भगवतीचरण वर्मा के काल और वर्तमान काल में प्रचलित किन धर्माडम्बरों का चित्रण हुआ है ?
5. 'प्रायश्चित्त' कहानी के प्रमुख पुरुष पात्रों का चरित्र–चित्रण करें।
6. 'प्रायश्चित्त' कहानी में रामू की माँ (सास) और पत्नी (बहू) दोनों का शील–निरूपण करें।
7. 'प्रायश्चित्त' रचना के कथा–शिल्प के विभिन्न आयामों की सोदाहरण समीक्षा कीजिए।
8. 'प्रायश्चित्त' कहानी में सामाजिक और धार्मिक अंधविश्वासों पर हास्य–व्यंग्यपूर्ण शैली में गहरा कटाक्ष किया गया है।' – इस कथन की पुष्टि हेतु विस्तृत विवेचन करें।
9. 'प्रायश्चित्त' कहानी की संवाद–योजना पर विचार करें।
10. 'प्रायश्चित्त' कहानी की तात्त्विक समीक्षा करें।
11. 'प्रायश्चित्त' कहानी के आधार पर भगवतीचरण वर्मा की कहानी–कला की प्रमुख विशेषताओं का विश्लेषण करें।

पाठ संख्या ः 2.4 **लेखिका ः डॉ॰ हरिसिमरन कौर**

'खुदा का ख़ौफ़. . . . '
(यशपाल)

इकाई की रूप—रेखा ः

2.4.0 उद्देश्य
2.4.1 प्रस्तावना
2.4.2 यशपाल का जीवन—वृत्त
2.4.3 'खुदा का ख़ौफ़. . . . ' कहानी की तात्त्विक समीक्षा
कथावस्तु
पात्रों का चरित्र—चित्रण
संवाद—योजना
देशकाल और वातावरण
भाषा—शैली
उद्देश्य
2.4.4 प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्याएँ
2.4.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न

2.4.0 उद्देश्य ः

यशपाल का नाम हिन्दी के प्रगतिवादी या मार्क्सवादी लेखकों में सर्वोपरि रखा जाता रहा है। यह और बात है कि उनके महाकाव्यात्मक उपन्यास 'झूठा सच' (दो खण्ड) में से ले कर उनके अन्य उपन्यासों और कहानियों में मार्क्सवादी चेतना का बलात् आरोप नहीं हुआ है, बल्कि उनकी रचनाओं के बीच से ही उनकी प्रगतिशील वैचारिकता निकलती चलती है। उन्होंने प्रेमचन्द की कथा—शैली अपना कर भी समाजवादी यथार्थ के चित्रण में कुछ पग आगे बढ़ाए हैं। वे घटना या कथा—तत्त्व से भी सब कहीं बँधे नहीं रहे हैं। हाँ, पात्रों के व्यक्तित्व और चरित्र में उन्होंने काफ़ी गहराइयाँ नापी हैं।

यशपाल की प्रत्येक रचना में हमें किसी छोटी—बड़ी सामाजिक समस्या का निरूपण देखने को मिलता है। यहरी कारण है कि ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक आदि किसी भी विषय पर लिखी उनकी प्रत्येक रचना सोद्देष्य ही है।

उनकी कहानी 'तुमने क्यों कहा था, मैं सुन्दर हूँ', बेमेल विवाह से उत्पन्न त्रासदी की स्थिति का चित्रण करती है। 'प्रतिष्ठा का बोझ' कहानी में विधवा सास और उसी की तरह उसकी युवती बहू (जिसका पति विवाह बाद ही लेनदारों के डर से घर से भाग गया था) दोनों एक पड़ौसी (केवलचंद) के किरायेदार बन जाने पर उससे अपनी अतृप्त यौनेच्छा की पूर्ति करती रहती है। इसी प्रकार यशपाल ने अपनी कुछेक कहानियों में यौन—प्रसंगों को सामाजिक विसंगतियों की पृष्ठभूमि में प्रस्तुत किया है। पतिव्रता, ज़िम्मेवारी, फलों का कुर्त्ता, न कहने कि बात, होली का मज़ाक – जैसी कहानियों में प्रेम, पातिव्रत्य के छल—छद्म और यौन—तृप्ति के विविध आयामों को मानव—मनोविज्ञान की दृष्टि से जाँचा—परखा गया है। ठीक यही बात उनके उपन्यासों पर भी चरितार्थ होती है।

डॉ॰ किरण अग्रवाल के मतानुसार, "यशपाल ने अपनी कहानियों में प्रेम और दांपत्य पर एक समाजशास्त्री , एक वैज्ञानिक, एक मनोवैज्ञानिक और एक चिनतक की तरह अलग—अलग कोणों से विचार किया है।........जब स्त्री और

पुरुष दोनों को ही परिवार के बाहर ही प्रेम को तलाशना है, तो फिर परिवार की उपादेयता क्या है ? दाम्पत्य का अर्थ क्या है ? और अगर उपादेयता है, अर्थ है, तो फिर उनका स्वरूप क्या होगा ? क्योंकि जब तक 'स्त्री' पुरुष और समाज की ज्यादतियाँ सह रही है, तब तक ही परिवार बचा है। जिस दिन (नारी) वह सहना बंद कर देगी, उस दिन परिवार नहीं रहेगा।" – (लेख ः 'यशपाल की कहानियों में प्रेम, परिवार और दाम्पत्य')।

प्रस्तुत अध्याय में विद्यार्थी जिन तथ्यों से परिचित हो सकेंगे, वे ये हैं ः–

1. यशपाल का जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व।
2. कहानी 'खुदा का खौफ़' की तात्त्विक समीक्षा ः कथावस्तु, पात्रों का चरित्र–चित्रण, संवाद–योजना, देशकाल और वातावरण, भाषा–शैली और उद्देश्य। इन तत्त्वों का समीक्षात्मक विवेचन किया जाएगा।
3. महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्यायें।
4. अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न।

2.4.1 प्रस्तावना ः

जीवन के अन्य क्षेत्रों की ही तरह सेना के क्षेत्र में भी उच्च पदों पर आसीन अधिकारी घूस जैसे भ्रष्टाचारों में ही लीन नहीं होते, अपितु निम्न वर्गीय जनों के साथ अभद्र और अमानुषिक व्यवहार करते देखे जाते हैं। वे अपने ऐसे व्यवहार से कभी भी लज्जित नहीं होते, अपितु यही चाहते हैं कि अन्य मध्य और उच्च वर्गों के लोग न केवल वैसे अमानवीय कार्यों की प्रशंसा ही करें, बल्कि उनके समान ही आचरण भी करें। ठीक इसी कथ्य का आख्यान यशपाल की निर्धारित कहानी 'खुदा का खौफ़' कहानी में हुआ है। समकालीन नाटककार स्वदेश दीपक का नाटक 'कोर्ट मार्शल' भी दीन–हीन लोग के सैनिक अफ़सरों द्वारा यशपाल की इसी अमानवता के विषय पर रचित है।

'खुदा का खौफ़' कहानी का सेना से अवकाश प्राप्त कैप्टन रल्ली एक बार यू॰ एन॰ ओ॰ से 5,000 रुपये मासिक वेतन पर अफ़गानिस्तान चला जाता है। उसे सड़क–निर्माण के कार्य का मुख्य परामर्शदाता नियुक्त किया जाता है। वे स्नेह सौहार्द–भाव की प्रतीक भेंट ठेकेदारों से स्वीकार कर लेते हैं, परन्तु सड़क बनाने के निर्णय से पहले किसी भी व्यक्ति से कोई भी घूस नहीं लेते हैं।

बूजा के अमीर और प्रान्त के गवर्नर उन्हें एक दावत देते हैं। उस समय वे अपनी यह इच्छा भी प्रकट करते हैं कि खैबर से जलालाबाद जाने वाली सड़क उनकी गढ़ी से हो कर ही गुज़रनी चाहिए। जब वे कर्नल रल्ली को अपने साथ आखेट के लिए ले जाते हैं, तब एक निरपराध सिपाही से ऐसा अमानुषिक व्यवहार करते हैं कि कर्नल के प्राण काँप उठते हैं। लौट कर वे गवर्नर की सिफ़ारिश ही नहीं ठुकराते, बल्कि वह नौकरी ही छोड़ कर आ जाते हैं। इस प्रकार यह कहानी मानवीय मूल्यों के ग्रहण की मूल्यवती शिक्षा ही प्रदान करती है। इसके साथ ही इस रचना में घूस की अपेक्षा खून–पसीने और हक़–हलाल की क्या है से अपना जीवन जीने का भी महान् सन्देश दिया गया है। इस प्रकार यह कहानी ईश्वरीय भय के नाम पर अमानवीय कृत्य कर रहे दानवनुमा मानवों की करतूतों का पर्दाफ़ाश करती है।

2.4.2 यशपाल का जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व

यशपाल क़लम के धनी साहित्यकार हैं। उनके विषय में यह उल्लेख किया जा सकता है कि उन्होंने लेखन को एक व्यवसाय के रूप में अपना रखा था तथा इसमें मिली सफलता का प्रत्यक्ष प्रमाण उनका लखनऊ स्थित आधुनिक साज–सज्जाओं से सुसज्जित भवन और अपना प्रैस था।

यशपाल का जीवन–वृत्त ः

श्री यशपाल का जन्म 3 दिसम्बर सन् 1903 ई॰ मे फ़ीरोज़पुर छावनी में एक खत्री परिवार में हुआ था। उनके पिता लाला हीरालाल काँगड़ा के निवासी थे, परन्तु माता श्रीमती प्रेमवती द्वारा फ़ीरोज़पुर के एक अनाथालय में अध्यापिका के रूप में कार्य करने के कारण आपका पालन–पोषण फ़ीरोज़पुर छावनी में ही हुआ था। यह बात अलग है कि वे स्वयं को 'पहाड़ी क्षत्री' कहने में गर्व का अनुभव करते रहे। अपने पिता के बारे में वे कहते हैं, "मैं जब काँगड़े गया, अपने पिता की स्थिति मुझे असम्मानजनक ही प्रतीत हुई, परन्तु जाने क्यों लोग उनको लाला के सम्मानजनक नाम से ही सम्बोधित करते थे, चाहे वे कैसी भी नौकरी क्यों न कर रहे हों।"

इनके पिता जी आरम्भ में ब्याज पर धन उठाया करते थे और बाद में उन्होने छोटी–सी नौकरी भी कर ली, परन्तु परिवार की आर्थिक दशा फिर भी अच्छी नहीं थी। इनकी माता जी का काँगड़ा से दूर नौकरी करना भी इसी तथ्य की पुरूिट करता है। इनके पिता जी का देहावसान इनके नेशनल कॉलिज में पढ़ते समय ही हो गया था, अतः यह कहनापूरी तरह से सही है कि यशपाल के व्यक्तित्व के निर्माण में प्रमुख रूप से इनकी माता का ही हाथ था, जिनके बारे में डॉ॰ सरोजगुप्त के ये विचार द्रष्टव्य हैं ः "यशपाल की माता सहनशील, परिश्रमी एवं साहसी स्त्री थीं। वे स्वयं साधन–सम्पन्न कुल की सन्तान थी। उनके पूर्वज शाम चौरासी के राजाओं के राजमंत्री थे। विवाह के समय माता और पिता की अवस्था में पर्याप्त अन्तर था। प्रौढ़ावस्था में विवाह होने के कारण पति–पत्नी अधिक दिन साथ नहीं रह सके। उनकी माता ने अपने पति की मृत्यु के बाद यशपाल और धर्मपाल (यशपाल के छोटे भाई) दोनों पुत्रों का पोषण किया। उन्होंने अनेक कष्ट सहन करके तथा अपने कठिन परिश्रम के बल पर ही दोनों पुत्रों को उच्च शिक्षा दिलाई।"

– ('यशपाल का व्यक्तित्व और कृतित्व', पृ॰ 3)

इनके पिता का देहावसान हो जाने पर माता पंजाब में आकर रहने लगीं। उन दिनों यहाँ आर्य समाज का बहुत ज़ोर था और उनके लगभग सभी सगे–संबंधी आर्य समाजी हो गए थे। फलतः यशपाल की माता का भी आर्य समाज की ओर झुकाव होता चला गया। पंजाब में उन्होंने आर्य समाज द्वारा चलाए जाने वाले आर्य कन्या–विद्यालय में नौकरी कर ली थी और अपने कड़े परिश्रम के कारण उसकी प्रिंसिपल बन गयी थी। यशपाल को यह पसन्द नहीं था कि स्कूल से थकी–हारी आने वाली माँ घर पर भी अधिकाधिक कार्यों के झँझट में पड़े, अतः वे अपने स्कूल जाने से पहले ही चौका–बर्तन कर जाते थे और पानी लाने का स्थान घर से दूर होने के कारण पानी भी स्वयं ही ला देते थे। 15 अगस्त सन् 1964 ई॰ में उनकी माता का स्वर्गवास हो गया।

शिक्षा ः

यशपाल की माता अपने पुत्र को आर्य समाज के तेजस्वी प्रचारक के रूप में देखना चाहती थी, इसलिए उन्होंने इन्हें (यशपाल को) गुरुकुल काँगड़ी में प्रविष्ट करा दिया था। यशपाल अस्वस्थता के कारण वहाँ से स्नातक की उपाधि प्राप्त नहीं कर पाए। यशपाल को स्वदेश–प्रेम और विदेशी शासन के प्रति घृणा की भावनाओं की थाती गुरुकुल के वातावरण से प्राप्त हुई थी, जहाँ विद्यार्थियों को क्रान्ति के लिए प्रोत्साहित किया जाता था। इनका प्रवेश लाहौर के डी॰ ए॰ वी॰ कॉलेज में कराया गया। बाद में उन्होंने फ़ीरोज़पुर छावनी के सरकारी मिडिल स्कूल में प्रवेश लिया और मिडिल परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। इसके बाद उन्होंने मनोहर लाल मेमोरियल हाई स्कूल में प्रवेश लिया और अपनी पढ़ाई का ख़र्च चलाने के लिए ट्यूशन भी करने लगे। इसी प्रकार अध्ययन करते हुए ये सन् 1925 ई॰ में नेशनल कॉलिज से बी॰ ए॰ की परीक्षा उत्तीर्ण हुए तथा उसी वर्ष पंजाव विश्वविद्यालय से प्रभाकर की भी परीक्षा उत्तीर्ण हुए। सन् 1925 ई॰ के लगभग शिक्षा का अत्यल्प प्रचार होने की स्थिति में यशपाल की यह शिक्षा पर्याप्त ही कही जाएगी।

मृत्यु ः

आपकी मृत्यु सन् 1976 ई॰ में हो गई।

यशपाल का व्यक्तित्व ः

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' यशपाल के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में लिखते हैं, "बढ़िया सूट पहने हुए, मँझोले कद और साँवले रंग का एक युवक सफ़ाई से कटे–छँटे बाल, चौड़े खुले वक्ष, मोटे होंठ, धनी भँवें और चिपके हुए कल्ले। किसी क्रान्तिकारी के बदले मुझे यशपाल किसी बिगड़े हुए ईसाई युवक–से लगे।"

– ('यशपाल ः अभिनन्दन ग्रंथ', पृ॰ 17)

श्री महेन्द्र ने यशपाल की वेश–भूषा और उनके व्यक्तिगत के प्रभाव के विषय में लिखा है ः

"गैबरडीन की खाकी पेंट और बूट, शरीर पर नीले रंग की कमीज़ सफ़ाचट दाढ़ी–मूँछ, घनी भौंहें, जो आधी–से–अधिक सफ़ेद थी, नंगा सिर, मुँह में सिगार – इस वेश में वे मुझे ज़्यादा आतंकित करने वाली उनकी भौंहें हैं। आँखें उनकी बड़ी पैनी और दूर तक अन्दर घुसने वाली हैं।"

– ('यशपाल ः अभिनन्दन ग्रंथ', पृ॰ 18)

नारी–स्वातन्त्र्य के समर्थक यशपाल ने माता–पिताओं द्वारा आयोजित किए जाने वाले विवाहों को व्यंग्य से

लाटरी–विवाह की संज्ञा देते हुए और उनका परिणाम अधिकांशतया निराशाजनक बताकर ही अपने कर्त्तव्य की इतिश्री नहीं समझ ली है, वरन् अपने व्यक्तिगत जीवन में भी स्वपुत्री माण्टा को स्वेच्छानुसार अपना पति चुनने की छूट दी है। उन्होंने 'मार्क्सवाद' और 'गांधीवाद की शव–परीक्षा' शीर्षक कृतियों में तो 'मार्क्सवाद' का मण्डन और गांधीवाद का खण्डन किया है, 'देखा–सोचा समझा', 'बात–बात में बात', आदि निबन्ध–संग्रहों में भी जो विचार व्यक्त किए हैं, उनमें मार्क्सवादी सिद्धान्तों की स्पष्ट अनुगूँज मिलती है। उनकी कहानियों और उपन्यासों में भी उनकी इसी विचारधारा ने कहीं प्रकट और कहीं प्रच्छन्न रूप में अभिव्यक्ति पाई है।

यशपाल ने यह धारणा व्यक्त की है कि द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का सिद्धान्त जड़ या स्थिर नहीं है, अपितु उसमें देश–काल और परिस्थिति के अनुकूल संशोधन–परिवर्तन किया जा सकता है और अपने अंशतया परिवर्तित रूप में प्रेरणा का शाश्वत और सार्वभौमिक स्रोत बन सकता है।

साहित्य के प्रयोजन के बारे में यशपाल के विचार हैं, "उपन्यास लिखने में मेरा अभिप्राय यह स्पष्ट करना है कि मनुष्य–समाज परम्परागत विचारधाराओं का दास नहीं है, बल्कि वह अपनी घटनाओं को उपन्यास के परीक्षण–पात्र में रख कर यह दिखाना चाहता हूँ कि किस प्रकार इन घटनाओं से हमारी विचारधारा मे परिवर्तन आ जाता है या समाज के नए अनुभव कैसे नई विचारधारा को जन्म दे देते हैं। साधारणतया यह देखा जाता है कि विचारों की स्वतन्त्र सत्ता है और मनुष्य–समाज की विचारधारा मनुष्य–समाज के जीवन का क्रम निश्चित करती है।"

– ('देखा, सोचा, समझा', निबन्ध–संग्रह, पृ॰ 97–98)

यशपाल का कृतित्व ः

(क) कहानी–संग्रह ः

1. पिंजरे की उड़ान (सन् 1939 ई॰),
2. वह दुनिया (सन् 1942 ई॰),
3. ज्ञान–दीप (सन् 1943 ई॰),
4. अभिशप्त (सन् 1944 ई॰),
5. तर्क का तूफ़ान (सन् 1944 ई॰),
6. भस्मावृत चिनगारी (सन् 1946 ई॰),
7. फूलों का कुर्ता (सन् 1949 ई॰),
8. धर्मयुद्ध (सन् 1950 ई॰),
9. उत्तराधिकारी (सन् 1951 ई॰),
10. चित्र का शीर्षक (सन् 1951 ई॰),
11. तुमने क्यों कहा था, मैं सुन्दर हूँ (सन् 1954 ई॰),
12. उत्तमी की माँ (सन् 1955 ई॰),
13. ओ भौरवी (सन् 1968 ई॰),
14. सच बोलने की भूल (सन् 1962 ई॰),
15. खच्चर और आदमी (सन् 1965 ई॰)

इत्यादि कहानी–संग्रहों में अनेक कहानियाँ संकलित हैं।

(ख) निबन्ध–साहित्य ः

यशपाल के प्रकाशित निबन्ध अग्रलिखित हैं ः–

1. न्याय का संघर्ष (सन् 1940 ई॰)
2. मार्क्सवाद (सन् 1941 ई॰)
3. गांधीवाद की शव–परीक्षा (सन् 1942 ई॰)
4. बात–बात में बात (सन् 1944 ई॰)
5. रामराज्य की कथा (सन् 1950 ई॰)
6. देखा, सोचा, समझ (सन् 1951 ई॰)
7. जग का मुजरा (सन् 1962 ई॰)
8. बीवी जी कहती हैं मेरा चेहरा रोबीला है।(1961 ई॰)

(ग) उपन्यास–साहित्य ः

यशपाल के अद्यावधि प्रकाशित उपन्यास अग्रलिखित हैं ः

1. दादा कामरेड (1 मई सन् 1941 ई॰)
2. देश–द्रोही (1 मई सन् 1943 ई॰)
3. दिव्या (1 मई सन् 1945 ई॰)
4. पार्टी कामरेड (24 जून सन् 1946 ई॰)
5. मनुष्य के रूप (मार्च सन् 1949 ई॰)
6. अमिता (सन् 1956 ई॰)
7. झूठा सच {भाग – 2} (क्रमशः सन् 1958, 1960 ई॰)
8. बारह घंटे (सन् 1963 ई॰)
9. अप्सरा का श्राप (सन् 1965 ई॰)

आपकी विभिन्न कृतियों पर राजनीति का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। आप कई वर्षों तक 'विप्लव' नामक पत्र का सम्पादन करते रहे। मनुष्यों की कोमल और यथार्थ अनुभूतियों तथा स्वाभाविक तथ्यों के दर्शन आपकी कृतियों में होते हैं।

आपकी भाषा और शैली प्रसाद गुण से सम्पन्न तथा कलात्मक है। 'झूठा सच' उपन्यास पर आपको साहित्य अकादमी का पुरस्कार प्राप्त हुआ था।

2.4.3 कहानी 'खुदा का ख़ौफ़.....' की तात्विक समीक्षा

कथावस्तु ः

इस कहानी की कथावस्तु जटिल न हो कर सरल और सहज है। कहानी में आदि से ले कर अन्त तक घटनाओं का धीरे–धीरे विकास होता चलता है।

कहानी के आरम्भ में जब कथावक्ता अपने मित्र कर्नल रल्ली से पूछता है कि वह अफ़गानिस्तान की पाँच हज़ार रुपये मासिक की अच्छी–ख़ासी नौकरी क्यों छोड़ आया है, क्या वहाँ की जलवायु उसके स्वास्थ्य के लिए ठीक नहीं बैठी थी ? तब कर्नल व्यंग्यपूर्ण मुस्कान से नौकरी छोड़ने के कारण स्वरूप 'खुदा का खौफ़' इन तीन शब्दों का उच्चारण करता है। कथावक्ता के न समझने पर अतीत की समूची घटनाएँ, प्रत्यक्ष विवरण और कथा की पूर्वदीप्ति पद्धति (Flash Back System) के माध्यम से वर्तमान काल की तरह घटित दिखाई जाती है।

कर्नल रल्ली ने मिलिट्री इंजीनियरिंग सर्विस से सात महीने पहले अवकाश ग्रहण किया था। यू॰ एन॰ ओ॰ (संयुक्त राष्ट्र संघ) की ओर से उन्हें अफ़गानिस्तान में तीन वर्षों तक सड़कों के निर्माण के लिए परामर्शदाता की पाँच हज़ार रुपये मासिक वेतन की नौकरी करने का प्रस्ताव भेजा जाता है, जिसे वे सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं। जलालाबाद में उनका कैम्प था। ख़ैबर दर्रे से जलालाबाद तक सड़क बनाने की योजना थी। यह सड़क किन–किन इलाक़ों से हो कर गुज़रेगी, लोगों में चर्चा का यही विषय बना हुआ था। वहाँ छोटे–छोटे ख़ान,ठेकेदार आदि उनसे भेंट करने के लिए आते, तो तरह–तरह के मेवे, कस्तूरी के नाफ़े, शिलाजीत, कढ़े हुए रुमाल, कालीन आदि लाया करते थे। वास्तव में वे उस निर्माणाधीन सड़क के मार्ग के चुनाव को अपने लाभ हेतु प्रभावित करना चाहते थे। कर्नल रल्ली दूसरी प्रकार की नैतिकता और आचार–विचार के व्यक्ति थे।

उनके अधीनस्थ कर्मचारियों ने कर्नल रल्ली को समझा दिया था कि उन अफ़गानों की भेंट स्वीकार न करना मानो उन्हें बैठने के लिए आसन न देने जैसा ही अपमानजनक माना जाता था। कर्नल रल्ली इसलिए भेंट ले कर प्रतिदान में किसी दूसरे से मिली हुई भेंट ही दे डाला करते थे। इस प्रकार वे घूस न लेने के नियम का निर्वाह किए जा रहे थे। वे सभी को इस बात के लिए आश्वस्त करते थे कि वही मार्ग निश्चित किया जाएगा, जिससे सारे देश की जनता को सबसे अधिक लाभ पहुँचेगा।

कर्नल रल्ली को पता लग गया था कि प्रांत के गवर्नर, वूजा के अमीर चाहते थे कि निर्माण की जाने वाली सड़क चिन्ना और मज्जई के इलाक़े की अपेक्षा वूजा के टीले पर से ही निकाली जाए। उनसे पहले के जर्मन इंजीनियर मार्ख़मान ने वैसा करना पहले ही अव्यावहारिक घोषित किया हुआ था। वूजा के अमीर को गढ़ी से कोई भी सड़क न होने के कारण अपनी मोटरें ओर जीपें विवश हो कर जलालाबाद में ही रखनी पड़ती थी, सो वह जलालाबाद से ही अपनी सुविधा का मार्ग निकालने की सिफ़ारिश करना चाहता था। इसके विपरीत कर्नल चिन्ना और मज्ज्ई के लोगों की माँग को ही ठीक समझ कर पूरा करना चाहता था। जब कर्नल रल्ली गवर्नर से भेंट करने गए तो बातचीत मौसम और स्थानीय वातावरण से प्रारम्भ हुई।

गवर्नर ने कर्नल रल्ली से कहा कि यदि वे वहाँ किसी भी तरह की तकलीफ़ छुपायेंगे, तो वे उसे अफ़गान मेहमानबाज़ी की तौहीन समझेंगे। यह देख कर कर्नल रल्ली को उनका निःसंकोच, सौजन्य और मित्रतापूर्ण व्यवहार बहुत भला लगा। इसके बाद उन्होंने कर्नल से सुर्ख़ाब पक्षी का शिकार करने के लिए एक 12 बोर की शॉट गन, एक विन्चेस्टर राइफ़ल और शिकारी कारतूसों का एक बॉक्स दिलवाया। कर्नल रल्ली के यह कहने पर कि उन्हें अब शिकार का कोई शौक़ नहीं रहा है, वे उन्हें शिकार का यह सुनहरा मौक़ा न चूकने की बात कह कर अपने साथ शिकार पर ले गए।

मार्ग में एक चट्टान पर खुर्राटे लेते हुए सिपाही को गवर्नर ने अपने ए॰ डी॰ सी॰ को बूट से ज़ोर की ठोकर

माने का आदेश दिया। इस पर उस सिपाही ने गवर्नर से यह फ़रियाद की कि उसकी एवजी (विकल्प) नहीं आयी थी। वह पिछने दिन सुबह से ड्यूटी पर खड़े–खड़े थक गया था। ए॰ डी॰ सी॰ के आदेश से उसकी पहले राइफ़ल ले ली गई। फिर उसके जबड़ों, नाक, माथे, होठों और कानों पर पूरी शक्ति से घूँसे जड़वा दिए। प्रहारों के बीच–बीच में वह सिपाही लड़खड़ाने के बाद अटेंशन की मुद्रा में खड़ा हो जाता था। थकने पर फ़ौजी सिपाहियों ने उसे अपने भारी भरकम बूटों से पीटना जारी रखा। फिर राइफ़ल के कुन्दे मारे। गवर्नर की देखादेखी ए॰ डी॰ सी॰ ने भी उसे डाँटते हुए कहा, "फ़रियाद करता है !"

उस सिपाही के लहुलुहान हो जाने पर ही उसकी पिटाई रोक दी गई। ए॰ डी॰ सी॰ ने उससे पूछा, "अब थकने की फ़रियाद करेगा।" सिपाही ने नकार में सिर हिलाया। गवर्नर के कहने पर उसे उसकी राइफ़िल लौटा इी गई। यह यातना देख कर कर्नल रल्ली के शरीर के रोंगटे खड़े हो गए।

अब गवर्नर ने उन्हें हुई असुविधा के लिए क्षमा–याचना की। साथ ही यह भी कहा कि सैनिकों मे अनुशासन की शिथिलता की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। फिर यह भी पूछा कि वे भी सैनिक अफ़सर रहे हैं, ऐसी स्थिति में उनके यहाँ कौन–सा उचित पग उठाया जाता है ?

कर्नल रल्ली ने उत्तर दिया कि सैनिक से उसकी राइफ़िल और नम्बर पेटी ले ली जाती है और सैनिक अदालत में ही उसे उचित दण्ड दिया जाता है। इस पर गवर्नर ने अपना यह मत व्यक्त किया कि उसी स्थान पर तत्काल न्याय और दण्ड हो जाना चाहिए, क्योंकि आतंक आगे दूसरों के लिए शिक्षाप्रद उदाहरण बन सकता है। कर्नल रल्ली ने कहा कि इस तरह से अपमानजनक दण्ड देने के बाद अपमानित सिपाही के हाथों में उनके यहाँ संगीन, लगी राइफ़िल कभी नहीं दी जाती है इस पर कर्नल ने कहा, "हूँ ! शुक्र है परवरदिगार का, हमारी रियाया में ख़ुदा का खौफ़ कायम है।

इसके बाद जब कर्नल रल्ली ने बताया कि उसके द्वारा निशाना साधे बिना ही सुर्ख़ाब पक्षी नीचे गिर गए, तो गवर्नर ने पूछा, "तो फिर परिन्दे कैसे गिर गये ?"

कर्नल ने कहकहा लगा कर कह दिया, "ख़ुदा के खौफ़ से।"

यह व्यंग्यपूर्ण उत्तर सुन कर गवर्नर की आँखों में रोष और असन्तोष उभर आया। वापसी पर उन्होंने कर्नल से कहा, "आशंका है, शायद यहाँ का जलवायु आपको अनुकूल नहीं बैठेगा।"

इसके बाद कर्नल रल्ली आतंक के उस वातावरण का दबाव अपने ह्रदय और मस्तक पर अनुभव करने लगे। अगले दिन वे यू॰ एन॰ ओ॰ के दफ़्तर में पूरी घटना की सूचना दे कर भारत लौट आए। यहीं कहानी समाप्त होती है।

पात्रों का चरित्र-चित्रण ः

इस कहानी में कथावक्ता लेखक तो एक माध्यम भर है। मुख्य पात्र तो दो ही हैं – कर्नल रल्ली और वूजा का अमीर गवर्नर।

कर्नल के चरित्र की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं ः निम्नवर्गीय व्यक्तियों के प्रति करुणा और संवेदना, न्यायप्रियता, सत्यनिष्ठा, ईमानदारी, जनहितैषिता, क्रूर अधिकारियों से घृणा, देशभक्ति, दूरदर्शिता, स्पष्टवादिता। वे एक स्थिर या स्थायी चरित्र (Flat Character) हैं, जबकि उन्हें प्रतिनिधि (Typical) और व्यक्तित्व–सम्पन्न (Individual) चरित्र का एक मिश्रण भी माना जा सकता है।

गवर्नर के व्यक्तित्व के प्रमुख लक्षण या प्रवृत्तियाँ इस प्रकार हैं ः– एकाधिपत्य की भावना, तानाशाही स्वभाव, स्वार्थ–भावना, अवसरवादिता, सहजकोपिता, अमानवीयता, निर्ममता, कठोरह्रदयता, आतंकप्रियता, अतिथि–सत्कार की ाावना, अनुशासनप्रियता इत्यादि।

ये अपने वर्ग के एक प्रतिनिधि चरित्र (Typical Character) हैं। कर्नल रल्ली की ही तरह ये सभी गतिशील न हो कर स्थिर पात्र (Flat Character) ही माने जा सकते हैं। इन्हें एक व्यक्तित्व सम्पन्न चरित्र (Individual Character) इसलिए नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि भारत–समेत अनेक देशों में ऐसे कठोर स्वभाव के तानाशाह सैलिक अफ़सर मिल जाएँगे।

समग्रतः चरित्र–निरूपण की कसौटी पर यह एक सशक्त कहानी ठहरती है। शोषक–शोषित के वर्ग–संघर्ष की भावना से ओत–प्रोत प्रगतिशीलता इस रचना के कथ्य में समाविष्ट हैं।

संवाद–योजना :

इस कहानी के संवाद सुदीर्घ न हो कर संक्षिप्त, चुस्त–दुरुस्त और पात्रानुकूल ही हैं। उनमें स्थितियों, मनःस्थितियों आदि के पूर्ण प्रकाशन की शक्ति भरी पड़ी है। प्रत्येक कथोपकथन नपी–तुली शब्दावलि में ही नियोजित हुआ है। जहाँ कर्नल के कथोपकथन उनकी हृदयगत कोमलता, भावुकता और दूरदर्शिता से ओतप्रोत हैं, वहाँ गवर्नर साहब के संवाद पद, सत्ता, अधिकार आदि के रौब से भरे पड़े हैं। गिने–चुने शब्दों से वक्ता का पूरा व्यक्तित्व हमारे सामने मानो चक्षु–मूर्त हो उठता है।

अपने–अपने इलाक़े से निर्माणाधीन सड़क का मार्ग निकलवाने के लिए ठेकेदार आदि कर्नल रल्ली पर जब निरन्तर दबाव डालते थे, तब वे उन्हीं सुझावों को स्वीकार–अस्वीकार करने के स्थान पर यह गोलमोल आश्वासन दिया करते थे, "यक़ीन रखिये, सड़क आप सभी लोगों के लिए होगी। वही रास्ता निश्चित किया जाएगा, जिससे मुल्क की रियाया को सबसे अधिक फ़ायदा हो सके।"

गवर्नर का यह कथन ही उनकी उच्चपदोचित अधिकार–भावना और कठोरहृदयता का ही रेखांकन करने में पूर्ण रूप से सक्षम है, "न्याय और दण्ड तो तत्काल उसी जगह हो जाना चाहिए। तभी तो उसके उदाहरण का आतंक उपयोगी होता है।"

संवादों के द्वारा चरित्र–चित्रण की जो शैलियाँ इस कहानी में अपनाई गई हैं, उनके सटीक निदर्शन आगे प्रस्तुत किए जा रहे हैं :–

1. एक पात्र द्वारा अन्य पात्र का चरित्र–चित्रण :

गवर्नर कर्नल रल्ली के निशाने की प्रशंसा करते हुए कहते हैं, "वल्लाह ! वाह, वाह ! ऐसा फ़ौरन और अचूक निशाना, कमाल है !"

2. एक पात्र द्वारा समूह पात्रों का चरित्र-चित्रण :

1. गवर्नर गर्व से कर्नल की आँखों में देखते हुए कहते हैं, "हूँ ! शुक्र है परवरदिगार का, हमारी रियाया में खुदा का खौफ़ क़ायम है।"
2. इससे पहले भी वे कहते हैं, "सैनिकों में अनुशासन के शैथिल्य की अपेक्षा नहीं की जा सकती।"
3. गवर्नर अफ़गानियों के आतिथ्य–सत्कार की जातीय भावना की प्रशंसा करते हुए भारत से आए कर्नल रल्ली से स्पष्ट शब्दों में कहते हैं, "यहाँ किसी क़िस्म की तकलीफ़ तो नहीं है, आप को ? यहाँ आप हमारे दोस्त और मेहमान हैं। आप तकल्लुफ़ होगी। हम इस अपनी ज़रुरत और तक़लीफ़ हमसे छिपाइएगा, तो हमें बहुत तकलीफ़ होगी। हम इस अफ़गान मेहमानबाज़ी की तौहीन समझेंगे।"

3. एक पात्र द्वारा आत्म-चरित्र :

1. कर्नल सुर्ख़ाव पक्षियों पर निशाना न साधने के लिए गवर्नर महोदय से क्षमा–याचना करते हुए कहता है, "अनाभ्यास के कारण मेरा निशाना ठीक नहीं बैठेगा। पक्षी व्यर्थ में भटक जायेंगे।"
2. आगे भी दो पक्षी गिर जाने पर कर्नल कहता है, "श्रेय मुझे नहीं है, निशाना तो लिया भी नहीं था।"

समग्रतः कहानी की संवाद–योजना संगड़ित, चरित्र और स्वभाव–सूचिका कही जायेगी।

देशकाल और वातावरण :

इस कहानी में प्रकृति, बाज़ार, मैदान, आदि का अत्यन्त यथार्थपरक चित्रण हुआ है, जिससे इस तत्त्व के आधार पर यह कहानी समुचित पृष्ठभूमि वाली कही जा सकती है।

कहानी के प्रारम्भ में ही दिल्ली की गर्मी आदि का एक शब्द–चित्र प्रेक्षणीय है : "मई का अन्तिम सप्ताह। दोपहर ढाई बजे का समय। लू कलॉट प्लेस की हैसियत की उपेक्षा करके दूकानों के गोल चक्कर के चौड़े–चौड़े बरामदों में हू–हू कर रही थी। दिल्ली में दूकानें दोपहर एक से तीन बजे के लिए बन्द रहती हैं। फुटपाथ पर सौदा बेचने वालों ने भी अपने सौदे को धूल से बचाने के लिए अख़बार और चादरें फैला कर ढक दिया था।"

इसी प्रकार अफ़गानिस्तान के एक प्रदेश का प्राकृतिक वर्णन द्रष्टव्य है, "वूजा की विस्तृत टीला पहाड़ी नदी 'बरनी' की दो शाखाओं से घिरा हुआ था। प्रत्येक शाखा का विस्तार दो–ढाई सौ फुट था और दोनों ओर काफ़ी दूर तक समतल रेतीले पठार चले गये थे। टीले के चारों ओर इलाक़ा बयावान था। वहाँ किसी प्रकार की उपज नहीं होती थी। इसलिये बस्ती भी न थी।"

इसी प्रकार सर्पीले मार्गों और सड़कों का यह वर्णन देखिए ः "गर्वनर की जीप और उसके पीछे चलती जीपें पहाड़ की पसलियों पर बहुत ऊबड़–खाबड़ कच्ची सड़क पर अनेक मोड़ लेती हुई, प्रायः आधे घंटे तक चलती रही। गवर्नर का काफ़िला ख़ूब बड़ी गार में से हंसिये के फलके की तरह घूमी हुई सड़क पर से जा रहा था। जीप अर्धचन्द्राकार सड़क के बीचोंबीच थी, तो गवर्नर ने मोटर रोकी जाने का आदेश दिया।"

गवर्नर और उसका ए॰ डी॰ सी॰ जब सुर्ख़ाब पक्षियों का शिकार करने के लिए निकलते हैं, उस समय का वर्णन चित्रोपम गन पड़ा है, "झील के किनारे समीप ही झाड़ियों में छः–सात सुर्ख़ाब बसेरा ले रहे थे।.......बिना लक्ष्य साधे ही बन्दूक सुर्ख़ाबों के झुण्ड की ओर दाग़ दी। जंगल में 'धांय' की गूँज के साथ दो सुर्ख़ाब नीचे गिर गये।"

फिर भी इस तरह के प्राकृतिक वर्णन संख्या में अधिक नहीं हैं। इन्हीं संक्षिप्त बखानों से यशपाल की लेखनी का लोहा मानना पड़ता है, क्योंकि इन वर्णनों की ऐतिहासिकता और भौगोलिक शुद्धता असन्दिग्ध ही ठहरती है।

भाषा–शैली ः

इस कहानी की भाषा सरल, सहज और मुहावरेदार हिन्दी है। उसमें पात्रों की शिक्षा, स्वभाव, मनःस्थिति और परिस्थिति के अनुसार शब्दों और वाक्यों की नियोजना देखने को मिलती है। इस भाषा में शब्द विविध कोटियों के प्रयुक्त हुए हैं। इनके निदर्शन आगे प्रस्तुत हैं ः–

1. संस्कृत तत्सम शब्द ः

आदर, पुकार, प्रभाव, देश, आचार, विचार, वातावरण, अपमान, आसन, प्रतिदान, पत्र, परिथिति, उपेक्षा, उत्तर, अन्तिम, सप्ताह, गोल, उपयोग, समय, आनन्द, पर्वत, व्यर्थ, अतिरिक्त, सशरीर, साक्षात्, विश्वास, व्यक्तित्व, सूचक, धूप, भ्रम, विस्मय, प्रकट, कारण, जलवायु, मास, दुम्ह, ख्याति, कौशल, साधन, निर्वाह, प्रायः, चिन्तित, केवल, निर्माण, वर्ष, मुख्य, परामर्शदाता, सहर्ष, स्वीकार, प्रदेश, सम्पर्क, राजधानी, विषय, अनुमान, प्रतीक्षा, कस्तूरी, सम्भावित, नदी, अतिरंजित, भयंकर, वर्णन, अभ्यास, नियम, ग्लानि, प्रयोजन, निश्चय, अव्यावहारिक, विस्तार, उपज, पूर्वज, गढ़ी, समतल इत्यादि।

2. तद्भव शब्द ः

चक्कर (सं॰ चक्र), कर्नल (अं॰ Colonel), उंगली (सं॰ अंगुलि), काम (सं॰ कर्म), सात (सं॰ सप्त), ऊपर (सं॰ उपरि), निबाह (सं॰ निर्वाह), मील (अं॰ Mile), बक्स (अं॰ Box), हिरन (सं॰ हरिण), बाँह (सं॰ बाहु), सूरज (सं॰ सूर्य)।

3. देशज शब्द ः

खप, पठार, टीले, छड़ी, सड़क, छनबानों, घाटी, थैलों।

4. अरबी–फ़ारसी–उर्दू शब्द ः

मुकम्मल, शादी, मौक़े, महीने, पसन्द, दोपहर, हैसियत, प्याला, आराम, सौदा, महफूज, सफ़ाई, ख़ाली, जगह, तलाश, नज़र, आहट, माफ़िक, आख़िर, ज़रुरी, माहवार, जल्दी, रुतवा, शाह, बेत कल्लुकी, दौनात, मतलग, कम, आमदनी, मातहत, ख़बर, इलाक़े, चर्चा, आदमी, जनाब, सलामी, ख़ान, मुलाक़ात, क़िस्म, नाफ़े, रास्ते, मालूम, तैयारी इत्यादि।

5. अग्रेज़ी शब्द ः

जून, रजिस्टर्ड–सेक्रेटरी, कनॉट प्लेस, लाईसंस, फुटपाथ, टी हाउस, शॉपिंग, कॉफ़ी, आर्डर, सिगार, इंजीनियरिंग, पेंशन, कॉलेज, मैडिकल, आफ़र, कैम्प, सर्वे, टेंडर, ओवरसियर, वायरलेस, टेलीफ़ोन, फुट, कौन्सिल, मेम्बर, जनरल, फ्रेंच, ट्वेल्व, नोर, शॉट गन, लंच, मार्च, हिज़ मैजेस्टी, सर इत्यादि।

कर्नल का यह कथन पात्रानुकूल ही है, "सर, वूजा के दोनों और बरनी पर दोनों पुल और सड़े हमेशा ख़तरे में रहेंगे। चिन्ना और मज्जई की रियाया को दरअस्ल सड़क की बहुत ज़रुरत है। वूजा के ग़ैर–आबाद इलाक़े से सड़क ले जाने से रियाया को क्या फ़ायदा ?"

गवर्नर का यह कथन उसके तानाशाही निर्मम स्वभाव का ही सूचक है, "न्याय और दण्ड को तत्काल उसी जगह हो जाना चाहिये, तभी तो उसके उदाहरण का आतंक उपयोगी होता है।"

अंग्रेज़ी वाक्य–विन्यास से प्रभावित हिन्दी भाषा का स्वरूप द्रष्टव्य है, "आप पसन्द कीजिये, आपके लिए ढालने का सुख मैं पाना चाहता हूँ।"

समग्रतः कहानी की भाषा सरल, स्वाभाविक और पात्रानुकूल कही जा सकती है।

उद्देश्य ः

यशपाल एक प्रगतिशील कथाकार हैं। उनकी अन्य कहानियों के ही समान 'खुदा का खौफ़' भी एक सशक्त सोद्देश्य कहानी है।

सैनिक उच्च पदाधिकारियों के माध्यम से यहाँ तानाशाही प्रवृत्ति के लोगों की छोटे और भोले–भाले लोगों के प्रति क्रूरता, संवेदनशीलता, अमानवीयता, अहम्मन्यता, चतुरता, स्वार्थपरता आदि पर गहरा कटाक्ष किया गया है। इसके साथ ही सैनिक शासन की अनुशासन–संबंधी कठोरता, हृदयहीनता, निम्न वर्गीय जनों के प्रति अपार घृणा, सजातीय लोगों के प्रति आत्मीयता के साथ–साथ आतिथ्य–सत्कार की भावना के निर्वाह का भी रेखांकन करना इस कहानी का प्रयोजन और अभीष्ट रहा है। कथ्य की कसौटी पर यह कहानी अत्यन्त सशक्त ठहरती है। इसके अतिरिक्त घूसखोरी की दुष्प्रवृत्ति पर प्रकाशन डालना भी यशपाल का लक्ष्य रहा है।

फ़ौज से रिटायर्ड कर्नल रल्ली को यू॰ एन॰ ओ॰ (संयुक्त राष्ट्र संघ) की ओर से अफ़गानिस्तान में पाँच हज़ार रुपये मासिक वेतन पर सड़क–निर्माण–योजना के मुख्य परामर्शदाता के लिए नियुक्त कर दिया गया। स्वार्थी ठेकेदार उन्हें सलामियाँ (नज़राने, भेंटें) देने के लिए आते थे। ख़ान भी अपने इलाक़े से हो कर सड़क निकलवाने के लिए आ–आ कर सिफ़ारिशें किया करते थे। कर्नल रल्ली घूस न लेते के अपने सिद्धान्त पर अडिग और दृढ़ थे।

ऐसी स्थिति में वूज़ा के अमीर और प्रान्त के गवर्नर ने कर्नल रल्ली को अपने यहाँ दावत पर बुलाया। वे चाहते थे कि ख़ैबर से जलालाबाद जाने वाली सड़क उनकी गढ़ी से ही हो कर निकले। वे हर तरह से उनसे सिफ़ारिश कर रहे थे और साथ ही उन का ख़ूब आदर और अतिथिजनोचित सत्कार भी कर रहे थे।

कर्नल ने उन्हें दबी ज़बान से बताया कि गढ़ी की ओर से सड़क निकालने पर दो पुल और सड़क हमेशा ख़तरे में रहेंगे। इसके विपरीत चिन्ना और मज्जहे की जनता को सड़क के निर्माण की बहुत आवश्यकता है, जबकि वूज़ा के ग़ैर–आबाद सुनसान इलाक़े से सड़क ले कर जाने में कोई भी लाभ न होगा। वैसे भी कर्नल को पता था कि भूतपूर्व जर्मन इंजीनियर मार्खमान ने पहले भी ऐसे प्रस्ताव को अव्यावहारिक बता कर ठुकरा दिया था।

गवर्नर ने कर्नल से कहा कि सरकारी प्रश्नों का निर्णय सरकार स्वयं करती है, जनता कदापि नहीं।

इसी बीच वे कर्नल को शिकार के लिए उनके न चाहते हुए भी अपने साथ ले जाते हैं। मार्ग मे वे एक सिपाही को ड्यूटी पर खुर्राटें लेते देख कर ए॰ डी॰ सी॰ से उसकी ख़ूब पिटाई करवा कर उसके लहुलुहान हो जाने पा ही पिटाई रुकवाते हैं। गवर्नर की ऐसी अमानवीयता देख कर कर्नल रल्ली स्तब्ध रह जाते हैं। इसके बाद जब गवर्नर पीड़ित सिपाही को अपनी रायफ़िल लौटाने का कारण यह बताते हैं कि भारत के सैनिकों (जैसा कि कर्नल ने बताया था) की तुलना में वहाँ खुदा के शुक्र से अभी तक जनता में उसका खौफ़ सलामत है।

इससे शर जब निशाने साधे बिना भी कर्नल से दो सुर्खाण पक्षी नीचे गिर जाते हैं, तब वे (कर्नल) गवर्नर के विस्मित होने पर "कैसे ?" का व्यंग्यपूर्ण उत्तर देते हैं, "खुदा के खौफ़ से।"

कर्नल के आचरण और व्यवहार से गवर्नर अत्यन्त रुष्ट और असन्तुष्ट हो जाते हैं और उनसे बिछुड़ते समय उन्हें चेतावनी–रूप में यह कहते हैं, "आशंका है, शायद यहाँ की जलवायु आपको अनुकूल नहीं बैठेगा।"

कहानी से पता चलता है कि भारत की ही तरह से अफ़गानिस्तान में भी स्वार्थी ठेकेदार सरकार के उच्च पदाधिकारियों को रिश्वत चढ़ाया करते थे। यह और बात है कि भारत से ही गए ईमानदार अवकाशप्राप्त अभियन्ता कर्नल रल्ली अफ़गानी सत्यता को ध्यान में रख कर ठेकेदारों की भेंटें तो स्वीकार कर लेते हैं, परन्तु किसी ठेकेदार द्वारा लाई गई भेंट को दूसरे ठेकेदार को दे कर घूस न लेने के अपने सिद्वान्त का अपने ढंग से निर्वाह किए जा रहे थे।

समग्रतः इस कहानी में यशपाल ने इस प्रकार के प्रमुख और गौण उद्देश्यों को सफलतापूर्वक चरितार्थ किया

है, ऐसा कहें तो इसमें कोई भी अत्युक्ति नहीं होगी।

2.4.4 महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्यायें

1. यहाँ किसी क़िस्म की तकलीफ़...की तौहीन समझेंगे।

प्रसंग ः

कर्नल रल्ली के प्रति अफ़गान के एक प्रान्त के गवर्नर का यह कथन यशपाल की कहानी 'खुदा का खौफ़' से उद्धृत किया गया है। यह कहानी पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला की बी॰ ए॰ प्रथम वर्ष कक्षा के हिन्दी विषय की निर्धारित पाठ्य–पुस्तक 'सात कहानियाँ' (सम्पादक ः डॉ॰ ईश्वरदास जौहर) में संकलित है।

इस गद्यांश में वक्ता गवर्नर साहब अफ़गान की आतिथ्य सत्कार की परंपरा के अनुसार भारत से पधारे नवनियुक्त इंजीनियर कर्नल रल्ली से वहाँ कोई किसी प्रकार का कष्ट होने की बावत पूरी सहृयदता से पूछताछ करते हैं। यह और बात है कि उनके समूचे आतिथ्य सत्कार का उद्देश्य कर्नल को रह कर अपनी गढ़ी से हो कर सड़क ले जाने के स्वार्थ की पूर्ति करना ही है।

व्याख्या ः

गवर्नर साहब कर्नल रल्ली से पूछते हैं कि आपको भारत से यहाँ आ कर किसी प्रकार की कोई कष्ट तो नहीं है, क्योंकि वे उनके मित्र और अतिथि हैं। यदि वे औपचारिक व्यवहार करेंगे और अपनी आवश्यकता को उनसे छिपायेंगे, तो उन्हें बहुत कष्ट होगा। इससे वे अफ़गानी लोग अपने आतिथ्य–भाव का अपमान समझेंगे, जोकि नैतिकता और सभ्यता की दृष्टि से उचित नहीं होगा।

गद्य-सौष्ठव ः

यहाँ गवर्नर साहब के कथन से प्रतीत होता है कि उनके देशवासी अपने देश में बाहर से आए हुए अतिथियों का भोजन, रहन–सहन आदि दृष्टियों से बहुत सत्कार किया करते हैं। यह बात देश–काल के अनुसार ठीक हो सकती है, परन्तु गवर्नर साहब द्वारा भारत से आए हुए अभियन्ता के आतिथ्य के पीछे अपनी गढ़ की ओर से ख़ैबर–जलालाबाद की सड़क को ले जाने की स्वार्थपरकता ही लुकी–छिपी है। कर्नल रल्ली उनके इस स्वार्थ–पूर्ति वाले मन्तव्य को भली प्रकार हृदय से समझते हैं, पर शिष्टाचारवश अपने मुख से कुछ भी नहीं कहते और प्रशंसा–भाव से अपनी बातें चुपचाप सुनते रहते हैं।

2. न्याय और दण्ड तो तत्काल...आतंक उपयोगी होता है।

प्रसंग ः

यह गद्यांश यशपाल द्वारा रचित हिन्दी कहानी 'खुदा का खौफ़' से चुना गया है और ये शब्द वूजा के अमीर और अफ़गानिस्तान से आए हुए अभियंता कर्नल रल्ली को कहे गए हैं। इससे पहले कर्नल के ही सामने ड्यूटी पर खर्राटे लेते हुए एक सिपाही को वे अपने एक ए॰ डी॰ सी॰ को कह कर बुरी तरह से मुक्कों, राइफ़ल के कुन्दों, फ़ौजी बूटों आदि से बुरी तरह पिटपाते हैं। जब वह सिपाही बुरी तरह से लहु–लुहान हो जाता है, तभी वे उसकी पिटाई रोकने का आदेश देते हैं।

इसके बाद वे कर्नल से पूछते हैं कि उनके यहाँ भारत में सैनिक के द्वारा आचरण और व्यवहार–सम्बन्धी ऐसी शिथिलता होने पर क्या किया जाता है। कर्नल बताता है कि ऐसी स्थिति में उस सैनिक की राइफ़िल और नम्बर–पेटी ले ली जाती है और उसके बाद सैनिक अदालत में उनका मामला ले जा कर उसे उचित दण्ड दिया जाता है। यह सुन कर गवर्नर महोदय उससे ये शब्द कहते हैं ः–

व्याख्या ः

गवर्नर अपने देश के तानाशाही–भरे सैनिक शासन के सम्बन्ध में अपने कठोर स्वभाव के अनुसार कर्नल रल्ली से अपना विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि न्याय की कोई बात या व्यवस्था हो या फिर दण्ड देने का कोई निर्णय हो, दोनों को ही अपराधी को अपराध के स्थान पर ही दे देना उचित रहता है। उन्हीं के अनुसार इस प्रकार का उदाहरण आगे भविष्य में अपराध करने वाले सैनिकों के लिए एक आतंकदायक उदाहरण सिद्ध होने के कारण विशेष लाभप्रद सिद्ध हो सकता है।

गद्य-सौष्ठव ः

इस कथन से भारतीय और अफ़गानिस्तान दोनों देशों की न्याय–प्रणाली और दण्ड–व्यवस्था की तुलना अपने आप हो जाती है। भारत में सैनिक अपराधियों के सभी मामलों का निर्णय सैनिक अदालतों में 'कोर्ट–मार्शल' जैसी दण्ड–व्यवस्था द्वारा किया जाता है। इसके विपरीत घटना–स्थल पर ही उन्हें दंडित करके दूसरों के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत करने का गवर्नर का ढंग बेहद अमानवीय, क्रूर और आतंकपूर्ण ही माना जाएगा। यहाँ गवर्नर साहब ने कम–से–कम शब्दों में अधिकतम भावों को समेटा है। अतः यहाँ गद्य की समास शैली का प्रयोग हुआ है।

2.4.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न ः

1. 'खुदा का ख़ौफ' कहानी का कथासार (कथानक) लिख कर इस रचना की कथावस्तु (Plot) की भी समीक्षा करें।
2. 'खुदा का ख़ौफ' कहानी के शीर्षक (नामकरण) के औचित्य या सार्थकता का तर्कसंगत विवेचन करें।
3. 'खुदा का ख़ौफ' कहानी के कथ्य (प्रतिपाद्य, मूल संवोदना, उद्देश्य) पर विस्तार से प्रकाश डालें।
4. 'खुदा का ख़ौफ' कहानी किस कोटि (श्रेणी, वर्ग) की कहानी है और इसमें लेखक और वर्तमान काल के सैनिक शासन का कैसा चित्रण हुआ है ?
5. 'खुदा का ख़ौफ' कहानी में कर्नल रल्ली और गवर्नर का चरित्र–चित्रण करें।
6. 'खुदा का ख़ौफ' कहानी में चरित्र–चित्रण और संवाद–योजना की किन शैलियों का प्रयोग हुआ है। उदाहरण–सहित विश्लेषण करें।
7. 'खुदा का ख़ौफ' रचना के कथा–शिल्प के विभिन्न आयामों की सोदाहरण समीक्षा कीजिए।
8. 'खुदा का ख़ौफ' कहानी में देशकाल और वातावरण के चित्रण पर विस्तार से प्रकाश डालें।
9. 'खुदा का ख़ौफ' कहानी की भाषा के विविध आयामों का सोदाहरण विश्लेषण कीजिए।
10. कहानी के तत्त्वों की दृष्टि से 'खुदा का ख़ौफ' कहानी की समीक्षा करें।
11. 'खुदा का ख़ौफ' कहानी को यशपाल की एक प्रतिनिधि कहानी मान कर यशपाल की कहानी–कला पर एक लेख लिखें।

पाठ संख्या ः 2.5 लेखिका ः डॉ॰ हरिसिमरन कौर

'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल'
(उषा प्रियम्वदा)

इकाई की रूप—रेखा ः

2.5.0 उद्देश्य
2.5.1 प्रस्तावना
2.5.2 उषा प्रियम्वदा का जीवन—वृत्त
2.5.3 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी की तात्त्विक समीक्षा
कथावस्तु
पात्रों का चरित्र—चित्रण
संवाद—योजना
देशकाल और वातावरण
भाषा—शैली
उद्देश्य
2.5.4 प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्याएँ
2.5.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न

2.5.0 उद्देश्य ः

हिन्दी कथा—साहित्य की प्रारम्भिक लब्धप्रतिष्ठ लेखिकाओं में उषा प्रियंवदा का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय रहा है। इनकी कहानियों और उपन्यासों में पारिवारिक जीवन की आर्थिक, नैतिक, सामाजिक समस्याओं का नए ढंग से निरूपण देखने को मिलता है। बेकारी, प्रेम में सफलता, असफलता, अनैतिक यौन—संबंध (विवाह से पहले और बाद) नारियों की परस्पर ईर्ष्या, प्रतिशोध भावना, पिता, पुत्र, पुत्री, पत्नी, पति आदि सम्बन्धों का उत्तरोत्तर बढ़ रहे विघटन आदि समस्याओं को विशेष रूप से वर्ण्य विषय बनाया गया है।

आज के जीवन में भौतिकतावादी दृष्टि की प्रधानता होती जा रही है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने विभिन्न देशों में 'उपभोक्तावाद' और 'बाज़ारवाद' को विशेष रूप से प्रोत्साहित किया है। पुरुषों की अर्थलोलुपता और स्त्रियों की स्वातन्त्र्य—चेतना और अस्मिता—बोध ने नई समस्याओं को जन्म दिया है। उषा प्रियंवदा ने भी अपनी वापसी, मछलियाँ, ज़िन्दगी और गुलाब के फूल, झूठा दर्पण, मोह—बन्ध जैसी कहानियों में इन्हीं बातों को प्रतिपाद्य बनाया है। 'वापसी' कहानी में पति—पत्नी, पिता—पुत्र, भाई—बहन के संबंध प्रदर्शित किए गए हैं। जहाँ दाम्पत्य और पिता के साथ सम्बन्धों में विघटन है, वहाँ नई पीढ़ी के भाई, बहन परस्पर आत्मीयता की डोर से बँधे हैं। 'मछलियाँ' कहानी में दो प्रेमिकाओं की एक प्रेमी को ले कर परस्पर ईर्ष्या और प्रतिशोध—भावना का मनोविश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। 'झूठा दर्पण' कहानी में जीवन—यथार्थ के आगे समर्पण है और साथ ही दाम्पत्य—सम्बन्धों का स्वतः समायोजन है। 'छुट्टी का दिन' कहानी में दैनन्दिन जीवन की ऊब है। 'कितना बड़ा झूठ' कहानी में दाम्पत्य सम्बन्धों का ठण्डापन है। 'मोह—बन्ध' कहानी में दूसरी नारी के प्रेमी को छीनने के सन्दर्भ में एक भुक्तभोगिता युवती की वेदना से साक्षात्कार कराया गया है। 'टूटे हुए शीर्षक' कहानी में मानव के मनोरोग और यौन—विकृतियाँ व्यक्त हुई हैं। 'पिघलती हुई बर्फ़' कहानी में अपराध—बोध के घटने की मनोदशाएँ हैं। इसी प्रकार इनके उपन्यासों में भी हमें विषयगत विविधता मिलती है।

प्रस्तुत पाठ में छात्र जिन तथ्यों से परिचित हो सकेंगे, वे अग्रलिखित हैं :–

1. उषा प्रियंवदा का जीवन और कृतित्व।
2. 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी की तात्त्विक समीक्षा ः कथावस्तु, पात्रों का चरित्र–चित्रण, संवाद–योजना, देशकाल और वातावरण, भाषा–शैली और उद्देश्य – इन सभी तत्त्वों का समीक्षापरक विवेचन।
3. महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की व्याख्यायें।
4. अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न।

2.5.1 प्रस्तावना ः

'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' नामक कहानी में उषा प्रियंवदा ने आज के परिवार की बदलती हुई परिस्थिति का चित्रण किया है। आर्थिक पराधीनता के कारण ही नारी पुरुष पर आश्रित थी और पुरुष के कमाऊ होने के कारण सब कुछ उसके अनुसार चलता था। नारी के कमाऊ और पुरुष के आर्थिक दृष्टि से पराश्रित होने पर उसी परिवार में सभी कुछ उलट गया। भावुकता में बह कर, आत्मसम्मान के नाम पर नौकरी छोड़ देने वाला सुबोध 'कम्पलीट फ़ेलियर' है। शोभा की सगाई दूसरी जगह हो जाती है। "प्यार से बड़ी एक और आग होती है, भूख की। वह आग धीरे–धीरे–धीरे सब कुछ लील लेती है।" प्रस्तुत कहानी का नायक सुबोध कभी अच्छी ख़ासी नौकरी पर लगा था। शोभा से उसका विवाह भी होने वाला था, परन्तु अफ़सर की अपमानजनक बात सुन कर उसने नौकरी छोड़ दी। शोभा की सगाई कहीं और हो गई। पहले घ में सब कुछ उसके अनुसार होता था। अब वृन्दा के मुताबिक चलने लगा – वह अब नौकरी करती थी। उसके कमरे का सारा सामान वृन्दा के कमरे में पहुँच गया था। उसे अपने आत्म–सम्मान को ताक में रख कर वृन्दा के टुकड़ों पर जीना पड़ रहा था। ज़िन्दगी ने उसे भी गुलाब के फूल दिये थे, परन्तु उसने स्वयं ही उन्हें ठुकरा दिया।

2.5.2 उषा प्रियंवदा का जीवन और कृतित्व

उषा प्रियंवदा का जीवन ः

नई कहानी–लेखकों में उषा प्रियंवदा का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनका जन्म सन् 1931 ई॰ में हुआ। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी विषय में एम॰ ए॰ की। वहीं पर इन्होंने कुछ वर्षों के लिए अंग्रेज़ी प्राध्यापिका का काग्र भी किया। इसके बाद इन्होंने संयुक्त राज्य अमेरिका के इडियाना विश्वविद्यालय से आधुनिक साहित्य पर भी विशेष शोध–कार्य किया। पिछले वर्षों में ये अमेरिका की विस्कॉंसिन विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग की अध्यक्षा भी रही हैं।

उषा प्रियवंदा का कृतित्व ः

उषा प्रियंवदा के कृतित्व का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है ः–

(क). उपन्यास–साहित्य ः

इनके अब तक **तीन उपन्यास** प्रकाशित हो चुके हैं, जिनके नाम अग्रलिखित हैं ः–

1. पचपन खंभे, लाल दीवारें (सन् 1961 ई॰)
2. रुकोगी नहीं राधिका (सन् 1967 ई॰)
3. शेष यात्रा (सन् 1984 ई॰)

(ख). कहानी–संग्रह ः

इनके अब तक सात कहानी–संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, जिनका विवरण आगे प्रस्तुत किया जा रहा है ः–

1. फिर वसंत आया (सन् 1961 ई॰)
2. ज़िन्दगी और गुलाब के फूल (सन् 1961 ई॰)
3. एक कोई दूसरा (सन् 1966 ई॰)
4. कितना बड़ा दूसरा (सन् 1972 ई॰)
5. प्रतिध्वनियाँ (राजकमल प्रकाशन) (सन् 1990 ई॰)
6. मेरी प्रिय कहानियाँ (कहानी–संकलन)(सन् 1990 ई॰)
7. श्रेष्ठ कहानियाँ (कहानी–संग्रह)

उषा प्रियंवदा जी ने अपनी कहानियों में जीवन के अकेलेपन, निरर्थकता, टूटन, द्वन्द्व आदि का स्वाभाविक चित्रण किया है। इनकी अधिकतर कहानियों चित्रण मिलता है। नारी पुराने और नये युग के सन्धि–स्थल पर खड़ी है। उन्होंने जीवन के विभिन्न पक्षों का अत्यन्त सबल चित्रण किया है, परन्तु उनकी कहानियों में पुरुष पात्रों का चित्रण भी अत्यंत जीवन्त और स्वाभाविक बन गया है। आज के बदलते हुए युग में पुरुष और नारी के अहं की परस्पर टकराहट को भी इनकी कहानियों में देखा जा सकता है।

कहानी–लेखिका के रूप में इनकी प्रसिद्धि का मूलाधार इनकी कहानी 'वापसी' है। प्रस्तुत कहानी में लेखिका ने खंडित हो रहे दाम्पत्य जीवन और विघटित हो रहे पारिवारिक जीवन–मूल्यों का करुण दुःखान्त चित्रण किया है। 'वापसी' कहानी में कदाचित् गजाधर बाबू नौकरी के लिए 'प्रोविडेंट फ़ण्ड' के हज़ारों रुपये ले कर घर लौटते हैं। सन् 1962 ई॰ में चण्डीगढ़ के 'अरोमा होटल' में एक साहित्यिक गोष्ठी में डॉ॰ नामवर सिंह ने इस कहानी की मार्क्सवादी व्याख्या करते हुए कहा था, "25 हज़ार रुपये ले कर लौटने की बात कहानी के नए पाठ से नदारद है। फिर भी यह कहानी राजेन्द्रसिंह बेदीकी 'गुलामी' कहानी से संवेदनागत धरातल पर काफ़ी सादृश्य रखती है।"

इनकी एक अन्य प्रसिद्ध कहानी 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' का नायक सुबोध कभी अच्छी–ख़ासी नौकरी पर लगा था। शोभा से उसका विवाह होने वाला था, परन्तु एक दिन अपने आफ़िसर की अपमानजनक बातें सुन कर उसने वह नौकरी छोड़ दी, जिससे शोभा की सगाई कहीं और हो गई। उसके घर में उसकी नौकरीपेशा बहन वृन्दा का उससे अधिक सम्मान होने लगा। उसे आत्म–सम्मान का ताक पर रख कर वृन्दा के टुकड़ों पर जीना पड़ रहा था। ज़िदगी ने उसे भी 'गुलाब के फूल' दिए थे, जिसे उसने स्वयं ही ठुकरा दिया था।

इस कहानी में लेखिका ने आज के परिवार की बदलती हुई परिस्थितियों का सशक्त चित्रण किया है। आर्थिक प्रधानता के कारण ही नारी पुरुष पर आरित थी और पुरुष के कमाऊ होने के कारण सब कुछ उसकी मर्ज़ी के अनुसार चलता था, किन्तु अब सुशिक्षित और अपने पैरों पर खड़ी होने के कारण वह पुरुष पर आश्रित होना पसन्द नहीं करती, जिसके कारण परिवार की टूटन या बिखराव बढ़ जाता है। श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' ने भी इस कहानी की प्रशंसा करते हुए लिखा है, "स्वतन्त्रता–प्राप्ति के बाद बहनों (सामान्य नारियों) में नौकरी करने के कारण परिवार में उनकी स्थिति में परिवर्तन को यह कहानी बख़ूबी रेखांकित करती है।"

उषा प्रियंवदा ने अपने उपन्यासों में प्रेम और विवाह से जुड़ी विभिन्न समस्याओं को उठाया है। इसके साथ ही प्रायः विदेशी सभ्यता और परिवेश का भी देखा–भोगा यथार्थ उकेरा गया है।

समग्रतः इनके कथा–साहित्य पर अंग्रेज़ी कथा–साहित्य के अध्ययन, विदेशी सभ्यता, संस्कृति और परिवेश के वास्तविक वर्णन एवं विदेशी विचारधाराओं–विषयक चिन्तन–मनन की भी स्पष्ट छाप दृष्टिगोचर होती है।

2.5.3 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी की तात्त्विक समीक्षा

कथावस्तु ः

'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी में जब स्वाभिमानी नायक युवक सुबोध ने अपनी लगी–लगाई नौकरी साहिब से झगड़ा हो जाने के कारण छोड़ी थी, तभी उसकी वाग्दत्ता शोभा के साथ उसकी सगाई गई थी। इतना ही नहीं, तभी से सुबोध के लिखने–पढ़ने की मेज़, अलार्म–घड़ी, आराम–कुर्सी, कालीन, छोटी मेज़ आदि सब–के–सब एक–एक करके अब उसके कमरे में कमाऊ बन चुकी बहन वृन्दा के कमरे में 'शिफ़्ट' होते चले गए। यहाँ तक कि अब दैनिक समाचार–पख भी पहले उसी के पास पढ़ने के लिए भेजा जाता था, चूँकि सुबोध अब बेकार हो चुका है और कोई भी काम–काज नहीं करता, इसलिए उसके भोजन आदि में उसकी माँ, बहन, कोई भी अब पहली–सी रुचि नहीं लिया करतीं। यहाँ तक कि घर की तरकारी जैसी वस्तुएँ भी बाज़ार से लाने का नौकरों का काम भी उसी को करना पड़ता है। तभी तो वह सोचता है, "वह कहाँ–से–कहाँ आ पहुँचा है।" अब कहाँ है आत्मसम्मान ! वही आत्मसम्मान, जब उसकी दिनचर्या के ही अनुसार घर के सब क्रिया–कलाप हुआ करते थे। अन्तर केवल यही तो था, "तक वृन्दा नौकरी नहीं करती थी, तब सुबोध बेकार न था।"

इस प्रकार इस कहानी में आधुनिक जीवन के बीच हुए सुख–भोग के आर्थिक आधारों का एक मार्क्सवादी प्रचार का मुल्लमा चढ़ाए बिना ही प्रस्तुत किया जा सका है। ज़िन्दगी ने कभी सुबोध को 'गुलाब के फूल' दिए थे, परन्तु उसने

स्वयं ही स्वाभिमान की रौ में वह कर उन्हें ठुकरा दिया था। जब उसकी प्रेमिका और वाग्दत्ता शोभा की सगाई उसके पिता ने कहीं और तय कर दी, तब मिलने पर वह शोभा से कहता है, "तुम्हारे फ़ादर ने ठीक ही किया। तुम सुखी रहोगी। प्यार से बड़ी एक और आग होती है – भूख की, पेट की। वह आग धीरे–धीरे सब कुछ लील लेती है।"

इस प्रकार इस कहानी में वृन्दा जैसी युवतियों के नौकरी करने पर सुबोध जैसे बेकार भाइयों की घर में प्रतिष्ठा घटने की सीमा के द्वारा स्वतन्त्रता के बाद नई आर्थिक समस्याओं के साथ पारिवारिक उलझनों की वृद्धि की भी गहराई से व्यंजित की गई है।

पात्रों का चरित्र–चित्रण ः

इस कहानी में कुछ पात्रों के माध्यम से उन परिवारों की स्थितियों और परिवार के सदस्यों के टूटते हुए संबंधों को चित्रित किया गया है, जिनमें पुरुष निकम्मे और नाकारा हो कर घर में बैठ गए और परिवार की लड़कियाँ कमा कर घर चलाने लगीं। सुबोध नाकारा और निखट्टु पुरुष–समाज का प्रतिनिधित्व करता है। उसका पुरुष–हृदय घर में वृन्दा की सत्ता स्वीकार नहीं कर पाता, परन्तु विवशता से वह अपमान, उपेक्षा और तिरस्कार को सह रहा है। पेट की भूख उसके स्वाभिमान को चूर–चूर कर देती है। माँ, बहन और प्रेमिका की उपेक्षा एवं तिरस्कार उसे भीतर–ही–भीतर से पूरी तरह से तोड़ कर रख देते हैं।

वृन्दा में कमाने वाली लड़कियों की सभी विशेषताओं को अत्यन्त मार्मिकता से उभारा गया है। कमाने और अपनी ही कमाई से घर के चलने के कारण उनमें जो अभिप्राय, अधिकार की भावना, निखट्टु भाई के प्रति अवहेलना और आक्रोश की भावना उत्पन्न हो जाती है, वह अत्यन्त स्वाभाविक और यथार्थ है। माँ की पुत्र के प्रति उपेक्षा, हर बात में उसका वृन्दा का पक्ष लेना, घर छोड़कर जाने वाले बेटे को रोकने या ढूँढने की चिन्ता मत करना, बेटे की अपेक्षा बेटी की सुविधाओं का ही विशेष ध्यान रखना आदि सब कुछ उसके चरित्र को स्वाभाविक और यथार्थ रूप प्रदान करता है। जब सुबोध कमाता था, तब उसकी ही सुख–सुविधाओं का ध्यान रखा जाता था, परन्तु अब जब वह नहीं कमाता है, केवल उसकी बहन वृन्दा ही कमाती है, तो माँ अपनी इस बेटी की ही सुख–सुविधाओं का ध्यान रखती है। उसकी ममता भी पैसों के तराजू में तुलती है। शोभा भी निखट्टु सुबोध के स्थान पर अच्छे वेतन पाने वाले व्यक्ति से विवाह करना अपने लिए हितकर समझती है। आज सभी संबंधों का मापदण्ड केवल धन ही हो कर रह गया है।

कुल मिला कर सभी पात्रों का चारित्रिक विकास यथार्थ धरातल पर चित्रित कर दिया गया है।

माँ और बहन के चरित्र वर्गीय और प्रतिनिधि (Typical Characters) हैं। इन्हे परिवर्तनशील चरित्र (Round Characters) कहा जा सकता है। इसके विपरीत सुबोध कथानायक एक व्यक्तिसम्पन्न चरित्र (indivisual Characters)है इसे स्थायी चरित्र (Flat Characters) ही कहा जाएगा।

1. एक पात्र द्वारा आत्मचरित्र–चित्रण ः

सुबोध कहता है, "मैं ज़िन्दगी में फ़ेलियर हूँ, कम्पलीट फ़ेलियर। कुछ नहीं कर सका। जैसे मेरी ज़िन्दगी में अब फुलस्टॉप लग गया है।"

2. एक पात्र द्वारा अन्य पात्र का चरित्र–चित्रण ः

सुबोध अपनी माँ और बहन (वृन्दा) पर कटाक्ष करते हुए कहता है, "आज मैं बेकार हूँ, तो मुझसे नौकरों–सा बर्ताव किया जाता है।

संवाद–योजना ः

प्रस्तुत कहानी के संवाद सरस, सरल और पात्रों की मनःस्थिति के अनुकूल हैं। संवाद छोटे–छोटे हैं। कहीं–कहीं लम्बे संवादों की भी योजना की गई है। आगे दोनों के उदाहरण द्रष्टव्य हैं ः–

1. "वह कहाँ से कहाँ आ पहुँचा है !" **(आत्मगत संवाद)**
2. "तब वृन्दा नौकरी नहीं करती थी, तब सुबोध बेकार न था।"
3. "तुम्हारे फ़ादर ने ठीक ही किया। तुम सुखी रहोगी। प्यार से बड़ी एक और आग होती है, भूख की, पेट की।

वह आग धीरे–धीरे सब कुछ लील लेती है।"

4. "मैंने तो पिता जी से बहुत कहा !...............फिर आख़िर मैं क्या करती ?"

5. "तुम माँ–बेटी जानती हो ? आज मैं बेकार हूँ, तो मुझसे नौकरों–सा बर्ताव किया जाता है। लानत है ऐसी ज़िन्दगी पर !..............अब मैं समझ गया हूँ कि मेरी इस घर में क्या कद्र है ?"

इन संवादों की भाषा सरल और मुहावरेदार है। यह पात्रों की शिक्षा, मानसिक और सामाजिक स्तर के सर्वथा अनुरुप है।

माँ के इस कथन से स्थूल दृष्टि में तो अपने इकलौते बेटे सुबोध के प्रति गहरे वात्सल्य भाव का ही प्रमाण मिलता है, परन्तु भीतर–ही–भीतर उसका सारा वात्सल्य अब नौकरी करने वाली कमाऊ बेटी वृन्दा के प्रति स्थानान्तरित हो गया है। साँझ देर से घर लौटने पर जब सुबोध अपनी माँ को सेब का मुरब्बा परोसते देख कर आज बड़ी ख़ातिर करने का कारण पूछता है, तो मतामयी माँओं के–से स्वर में वह स्नेह–कातर कण्ठ से यह उत्तर देती है, "तुम कभी ठीक वक़्त से आते भी हो। रात को दस–ग्यारह बजे आए। ठण्डा सूखा खा लिया। सुबह देर से उठे, दोपहर को फिर ग़ायब। कब बनाऊँ, कब दूँ ?" यद्यपि सुबोध की यही दिनचर्या पहले भी थी, परन्तु तब वह आज की तरह से पूरी तरह बेकार न था।

कमाऊ बहन उससे यह कह कर उसके कमरे से मेज़ अपने कमरे में ले जाती है, "दादा, आप क्या करेंगे मेज़ का ? मुझे काम पडेगा।"

इस प्रकार कुल मिला कर इस कहानी के छोटे–बड़े क्थोपकथन (संवाद) पात्रों की मनःस्थितियों, घरेलू स्थितियों, आर्थिक विवशताओं आदि का ही शानदार चित्रण करने वाले कहे जायेंगे।

देशकाल और वातावरण ः

प्रस्तुत कहानी में बदलते हुए युग में परिवारों के सदस्यों के पारस्परिक संबंधों के टूटन की स्थितियों को चित्रित किया गया है। यह टूटन आर्थिक कारणों से है। लड़कियों के कमाने से पारिवारिक ढाँचे बदलने लगे। घर में कमाऊ लड़की को अधिकार और सुविधाएँ मिलती चली गईं। न कमाने वाले पुरुष की परिवार में दयनीय और अपमानजनक स्थिति होने लगी। माँ, भाई, बहन, प्रेमिका आदि के सभी संबंधों का आधार 'धन' होने लगा है। कमाई का कोई साधन न होने के कारण पुरुष–सदस्य की घर में एक नौकर जैसी स्थिति हो गई। पेट की समस्या उसके अभिमान को तोड़ती चली गई और उसे समझौते करने के लिए विवश होना पड़ गया। इससे रिश्तों की पवित्रता नष्ट होने लगी है। ये सभी बातें आधुनिक युग के पारिवारिक वातावरण को अत्यन्त यर्थाथता से उभारती है। सभी सम्बन्धों के भीतर से टूटने का अत्यन्त कौशल से चित्रण हुआ है। वर्तमान काल का सामाजिक और मध्यवर्गीय पारिवारिक परिवेश आर वातावरण ही कहानी के केन्द्र में हैं।

कहानी में सुबोध के लिखने–पढ़ने की मेज़, अलार्म–घड़ी, आराम–कुर्सी, कालीन छोटी मेज़, तश्तरी में चाँदी के वर्क लगे सेब के मुरब्बे, गुलाब के फूल आदि के उल्लेख अवलोकनीय हैं।

कहानी में धूल–भरी साँझ, थके–चेहरे, पानी का खौलना, दरी की सिकुड़नों का पीठ में गड़ना, हल्के पीले फूलों वाली गुलाबों की धनी बेल देख कर दर्द बढ़ना जैसे प्राकृतिक आर भौतिक प्रतीक एक 'मैनरिज़्म' (Mannerism) की तरह प्रयुक्त किए गए हैं। ये सभी सुबोध की मानसिक कसक, खलिश, चुभन, टीस या मनोवेदना को ही संकेतित करते हैं।

इसी प्रकार पार्क में शाम के समय – "हरी घास पर बच गए मूँगफली के छिलके, पुड़ियों के काग़ज़ के टुकड़े, तोड़े गये फूलों की मसली हुई पँखुड़ियों – सभी सुबोध के खंडित व्यक्तित्व, हृदय में जन्मे वैराग्य–भाव के साथ जीवन और जगत् के प्रति उदासीनता भी अंकित करने में सहायक काल और 'वातावरण' का निर्माण करते हैं। एक शब्द–चित्र देखें, जो लेखिका की सिद्धहस्त लेखनी का प्रमाण है – "हाथ शिथिल और कान अन्दर और बाहर के विभिन्न स्वर सुनते रहे। खिड़की के पास से गुज़रते दो बच्चे, सड़क पर किसी राही की बेसुरी बजती बाँसुरी, 'खटखट' करते दो भारी जूते, अंदर बर्तनों की हल्की 'खटपट' तरकारी में पानी पड़ने की 'छन्न' और खींची जाती चारपाई के पायों की फ़र्श से रगड़.........." इत्यादि।

ऐसे उदाहरणों से यही निष्कर्ष निकलता है कि उषा प्रियंवदा घर और बाहर के कालगत, स्थानगत और परिवेशगत आयामों के विषयगत चित्रण में सिद्धहस्त लेखिका हैं।

भाषा–शैली ः

उषा प्रियंवदा द्वारा अपनाया गया 'नई कहानी' का शिल्प उनका निजी है। घटनाओं का यथार्थ और वास्तविक चित्रण इनकी प्रमुख विशेषता रही है। आर्थिक स्थितियाँ किस प्रकार घरों के, भाई–बहन के, माँ–पुत्र के संबंधों को तोड़ रही है – यह कहानी इसी टूटन को वास्तविक रूप में चित्रित करती है। कहीं भी भावुकता या आदर्श को ग्रहण नहीं किया गया है। संवादों का प्रयोग 'नई कहानी' के अनुरूप कथा–विकास के लिए नहीं, अपितु चरित्र या स्थिति के यथार्थ उद्घाटन के लिए हुआ है। भाषा व्यावहारिक और बोलचाल की है।

सुप्रसिद्ध अमेरिकन नाटककार टैनेसी विलियम्स का सन् 1955 ई॰ में प्रकाशित नाटक – 'गुलाब गोदना' (The Rose Tattoo) यहाँ प्रतीकसाम्य के लिए विशेष रूप से विचारणीय है। यह एक प्रहसन नाटक ही है, जिसमें प्रत्येक काम–क्रीड़ा के समय एक बकरी मिमिया उठती है। मिस्टर बैम्बर गैस कोइने नामक एक समीक्षक के अनुसार, "गुलाब शीर्षक का शब्द, जोकि एक काम–सम्बन्ध भी रखता है, प्रायः प्रत्येक पृष्ठ पर उभर आता है। कभी गुलाबों के रूप में, कभी गुलाबाकार गोदने के रूप में, कभी 'गुलाब' नाम के तौर पर, कभी गुलाब–जल या गुलाबी शीशों के रूप में, तथा गुलाबी रेशमी की कमीज़ के रूप में। यह 'कमीज़' प्रतीक के अन्तिम दैवीकरण या मुक्ति में विशेष योगदान करती है।"

वास्तव में पूर्वोक्त नाटक की ही तरह 'गुलाबों के फूलों' की प्रतीक के धरातल पर अनेक बार आवृत्तियाँ उषा प्रियंवदा की समीक्ष्य कहानी 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' में भी होती रही है। सच तो यह है कि टैनेसी विलियम्ज़ की 'सोच' एक प्रतीकवादी कवि–की–सी और 'पावलोवियन' बताई गई है। उसका उद्देश्य ही है – "एक प्रतीक की स्थापना करना और जब कभी मुक्ति या अनिवार्यता महसूस की जाए, उसे प्रस्तुत कर देना, नाटक 'गुलाब–गोदना' में लेखक अपनी कथावस्तु में प्रतीकों के लिए प्रतयक्षतः कारण या प्रयोजन की खोज कर रहा है।" लेखक के ही शब्द हैं, ".........establish a symbol and present it whenever Salvation is required. In the 'Rose-Tattoo' he is still ostensibly finding motivation for symbols in his plot." – ('The Lover finds a shirt')

लगभग पूर्वोक्त प्रतीकारोपण जैसा ही दोषारोपण उषा प्रियंवदा की प्रस्तुत कहानी पर भी किया जाता है। वस्तुतः इस एक शिल्पगत दोष के ही कारण कहानी–कला के कसाव में कुछ–न–कुछ ढिलाव तो आया ही है। वैसे भाषा–शैली की दृष्टि से यह कहानी भी 'वापसी' कहानी की–सी गर्भभेदिन कही जा सकती है। उषा प्रियंवदा की कथा–यात्रा में कहानी को भी एक मील–पत्थर की तरह अचल–अडिग खड़े हुए देखा जा सकता है। खण्डित पारिवारिक सम्बन्धों, विशेषतः भाई और बहन के परस्पर सम्बन्धो में उत्तरोत्तर बढ़ रही दरारों की दृष्टि से यह कहानी श्री मोहन राकेश की कहानी 'काला रोज़गार' और देवकी अग्रवाल की कहानी 'काली लक़ीर' से विशेष रूप से तुलनीय हो सकती है।

समग्रतः इसमें हम लेखिका की एक प्रतिनिधि कहानी मान सकते हैं। यह और बात है कि इस कहानी की सफलता का समस्त श्रेय इनकी निर्विवाद वस्तु या कथ्य–सत्य को ही जाता है, न कि इसके विवादास्पद और शिथिल शिल्प या प्रतीक–योजना को। यही इस कथा–शिल्प के धरातल पर इस कहानी की उपलब्धि और सीमा रही है।

इस कहानी में विभिन्न प्रकार के जो शब्द प्रयुक्त हुये हैं, वे आगे प्रस्तुत हैं ः –

1. संस्कृत तत्सम शब्द ः

कोण, क्षण, कोमलता, भावी पति, मूर्ति, आश्चर्य, पुरुष, नेत्र, दूर, हृदय, अभ्यास, यद्यपि, सत्तर, स्वीकार, मौन, अन्तराल, विषाद, चिन्ता, आत्म सम्मान, रक्षा, अपमानजनक, स्पष्ट, स्वाभिमानी इत्यादि।

2. तद्भव शब्द ः

आग (सं॰ अग्नि), माँ (सं॰ मातृ), पत्थर (सं॰ प्रस्तर), बात (सं॰ वार्त्ता), मील (अं॰ Mile), कुछ (सं॰ किंचित, कश्चित), हाथ (सं॰ हस्त), अंदर (सं॰ अन्तर), रात (सं॰ रात्रि), मोर (सं॰ मयूर), अब (सं॰ अद्य)।

3. देशज शब्द ः

चारपाई, खूँटी, पतीला, पल्ला, धोती, सहेली, ढँकना, घूँट, तरकारी, निठल्ला, ताँगाा, तिपाई।

4. अरबी–फ़ारसी–उर्दू शब्द ः

काफ़ी, शाम, रोशनी, गुलदस्ता, काग़ज़, गुलदान, चेहरे, ज़रुर, इस्तीफ़ा, ज़रा, तैयार, सुबह, शाम, बाज़ार,

सौदा, बदसूरत, राज़ी, ज़िन्दगी।

5. अंग्रेज़ी शब्द :

पार्क, कट, ग्लास, कोट, एलबम, बी॰ ए॰ एल॰ टी॰, अलार्म, बार्डर, कम्पलीट, फ़ेलियर।

6. ध्वन्यात्मक शब्द :

खटखट, छन्न इत्यादि।

समग्रतः भाषा–शैली के आधार पर यह एक स्तरीय कहानी ही ठहरती है।

उद्देश्य :

'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' उषा प्रियंवदा की प्रतिनिधि कहानियों में से एक मानी जाती रही है। यह एक प्रतीकात्मक कहानी है। इसमें लेखिका ने आर्थिक आधार पर विशेषतः भारत में स्वतंत्रता–प्राप्ति के अनन्तर परिवर्तमान पारिवारिक सम्बन्धों की एक प्रगतिवादी विवेचना प्रस्तुत की है। जब तक आज के मनुष्य के पास 'अर्थ' (= धन) रहता है, तब तक ही उसके जीवन का भी कुछ 'अर्थ' (= अभिप्राय, आशय) बना रहता है और ज़िन्दगी भी उसे इस कहानी के नायक सुबोध की तरह से ही 'गुलाब के फूल' प्रदान करती रहती है। इसके विपरीत 'अर्थ' का अभाव होते ही ज़िन्दगी उसे दिए हुए सभी 'गुलाब के फूल' एक–एक करके लौटा लेती है और वह रिक्त हस्त रह जाया करता है। यही आज के मनुष्य की एक कारुणिक त्रासदी है, जिसका आख्यान उषा प्रियंवदा ने अपनी इस कहानी के माध्यम से बखूबी किया है। दूसरे शब्दों में, 'फूल' सुख–वैभवों और सुविधाओं के भी 'प्रतीक' बन कर उभारे गए हैं। इनका और 'अर्थ' (= धन) का 'चोली–दामन का साथ' शुरु से ही रहता आया है।

इतने पर भी जीवन में 'धन' की प्रमुखता और महत्ता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। इसी सन्दर्भ में सूफ़ी कवि उसमान के 'चित्रावली' ग्रंथ का यह कथन प्रस्तुत कहानी पर प्रमुख रूप से चरितार्थ होता है, *"दरबहिं ते यह राज पसारा। दरब लागि जग आइ जोहारा।"* यहाँ पर 'दरब' अर्थात् 'द्रव्य' से ही समस्त जग के राजकाज होने की बात की गई है। स्वतन्त्रता–प्राप्ति के बाद 'पश्चिमीकरण' की लहर के प्रभावस्वरूप भारत में भी भौतिकवादी प्रवृत्तियों के निरन्तर बढ़ने रहने का प्रमाण पग–पग पर मिलता रहा है।

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' ने उषा प्रियंवदा की इस कहानी की समीक्षा करते हुए यह भी लिखा था कि आज़ादी के बाद जब से बहनें नौकरियाँ करने लगीं हैं, तब से घरों में उनके सम्मान में विशेष रूप में वृद्धि देखने को मिलती है। उदाहरण के लिए अब वे बेराजग़ार भाइयों से पहले जैसा निश्छल स्नेह नहीं करती हैं और न ही वे उनसे पहले जैसा भावुक स्नेह करते हैं। अतः आज़ादी के बाद भाई–बहन के परस्पर पवित्र सम्बन्धों की उष्मा और आत्मीयता पहले से बहुत कम हो कर रह गई है और उत्तरोत्तर कम ही होती चली जा रही है। सच तो यह है कि स्वातन्त्र्योत्तर भारत में खण्डित पारिवारिक संबंधों की वृद्धि का एक मुख्य कारण यह आर्थिक प्रधानता या समस्या ही रही है। संयुक्त परिवार–प्राप्ति के उत्तरोत्तर विघटन के पीछे भी यही आर्थिक कारण रहे हैं। मानो अर्थ (धन) ही आज के सम्बन्ध रूपी पवनों का एक मात्र 'भार–मापक यंत्र' बनकर रह गया है और सम्बन्ध संबंध आज इसी यंत्र के अनुसार मापे जाने लगे हैं।

'नई कहानी' में सोद्देश्यता नहीं होती। यह किसी मार्ग का स्पष्ट निर्देश नहीं करती है। समस्याओं को सुलझाना या जीवन की सही दिशा बतलाना इसका कार्य नहीं है। इसमें तो एक विचार, भाव या स्थिति–विशेष के चित्रण पर ही लेखक का मुख्य ध्यान केन्द्रित रहता है। इस कहानी में आर्थिक स्थितियों में परिवर्तन के कारण, परिवार के सदस्यों के संबंधों की स्थितियों में भी परिवर्तन होने का यथार्थ चित्रण हुआ है।

अमरकान्त की 'ज़िन्दगी और जोंक' कहानी की ही तरह से प्रस्तुत कहानी में भी 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' दोनों की समान्तरता स्थापित करने के लिए अति सरलीकरण की पद्धति अपनाई जा सकी है। यहाँ पर 'गुलाब के फूलों' का उल्लेख या वर्णन इतनी बार हुआ है कि ऐसा लगता है, मानो लेखिका को पाठकों की व्यंजना–ग्रहिणी प्रतिभा पर बिल्कुल भरोसा ही न रह गया हो। यह और बात है कि फ़िल्मों की 'मांताज' तकनीक के नज़रिये से देखने पर यह प्रयोग कुछेक गुण भी अपने में लिये हुए है। "हाँ, ज़िन्दगी ने उसे 'गुलाब के फूल' दिये थे, लेकिन उसने स्वयं ही उन्हें ठुकरा दिया, "जैसे वाक्यों की एकाधिक आवृत्तियों से कहानी की अपेक्षित कलात्मकता को अवश्य क्षति पहुँची है। इस प्रतीक का एकाध बार उल्लेख ही कहानी के कथ्य–सत्य को गहन कर सकता था, उसकी पाँच–छह बार आवृत्तियों की कोई आवश्यकता ही

नहीं थी।

फिर भी इस कहानी में धूल–भरी साँझ, थके–चेहरे, बुझे हुए मन, पानी का खौलना, दरी की सिकुड़नें पीठ में गड़ना, घोड़े की एकरस टापें, खुरदरी सड़क से कोहनियाँ छिलना, बेंच का उठा हुआ कोना पीठ में गड़ना, हल्के–पीले फूलों वाली गुलाबों की घनी बेल देख कर दर्द बढ़ना इत्यादि सब सशक्त 'मैनरिज़्म' तो हैं ही, साथ ही लेखिका के प्रकृति–प्रेम और जग–निरीक्षण की गवाही दे रहे हैं। 'नयी कहानी' इन्हीं सूक्ष्मातिसूक्ष्म चित्रणों के ही कारण तो अपनी पूर्ववर्ती कहानी से अलग अलग पहचानी जाती है। ये सब सुबोध की कसक, ख़ालिश, चुभन और मनोवेदना को ही गहराते हैं। इसी प्रकार 'मुँह में कड़वहाट' और 'पैर में जैसे एक भारी पत्थर बँधे होने की सूक्ष्मानुभूति' भी उसकी विभक्तमनस्कता का ही परिचायक है।

इसी प्रकार पार्क में शाम के समय – "हरी घास पर बच गए मूँगफली के छिलके, पुड़ियों के काग़ज़ के टुकड़े, तोड़े गये फूलों की मसली हुई पँखुड़ियाँ" – ये सब सुबोध के खण्डित व्यक्तित्व, हृदयगत निर्वेद भाव और तज्जन्य शान्त रस के साथ–साथ नेपथ्य के लुके–छिपे उस 'सामाजिक शोषण' को भी ण्वनित कर रहे हैं, जो लेखन का मुख्य अभिप्रेत रहा है और जिसकी ओर इस लेखिका ने भी अपनी अंगुलि से निर्देश किया है। यहाँ यदि सपाटबयानी है भी, तो उतनी नहीं है, जितनी कि प्रेमचन्दीय कहानियों में प्रायः पाई जाया करती है। लेखिका के कथा–शिल्प में 'सांकेतिकता की मात्रा' कुछ कम चाहे नज़र आ रही हो, परन्तु उसका नितान्त अभाव कदापि नहीं कहा जा सकता।

वास्तव में 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी में आर्थिक शोषण पर 'फ़ोक्स' करना ही लेखिका का मुख्य लक्ष्य था ही नहीं, इसलिए उसका स्वर चाहे गौण ही रह गया है, फिर भी लेखिका द्वारा वह एकदम अनिश्छित भी नहीं किया जा सकता है। सच पूछें, तो यही तो वह तो वह अभीष्ट विषय है, जिस गाहे–बगाहे अभिव्यक्ति समकालीन कहानीकार करते आए हैं, जिसकी यहाँ भी उसकी अभिव्यक्ति के लिए चित्रविध घटनाओं का ताना–बाना बुना गया है, समस्त सँाार एकत्र किया गया है।

उषा प्रियंवदा की ही 'वापसी' कहानी के अन्त में उभरने वाली 'फालतू' हो गई या महसूस की जाने वाली 'चारपाई' की ही तरह से यहाँ भी कथांत में कोने में पड़ा हुआ मैले कपड़ों का ढेर, ढीली, चारपाई, गन्दा बिस्तर और तिपाई पर ढँका रखा भोजन – ये सब अपने ही घर मे कथानायक सुबोध के उपेक्षित हो चुके या किये जा रहे व्यक्तित्व की कहानी एक सर्द, किन्तु जानलेवा चुप्पी की ज़बानी सुना रहे हैं। यहाँ ऊपर से देखने पर तो घर का वातारवरण अत्यन्त शानत जान पड़ता है, परन्तु मानो भीतर–ही–भीतर एक 'ज्वालामुखी' नायक के मन–प्राणों में धधक रहा है और वह किसी भी समय फट सकता है, इसलिए यह चुप्पी मानो आने वाले किसी तूफ़ान का ही पेशेख़ेमा आज पड़ती है।

समग्रतः वर्तमान काल मे आर्थिक परिस्थितियों के दबावों को गहराने के लक्ष्य को भी इस कहानी में देखा जा सकता है।

2.5.4 महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्यायें

1. तुम्हारे फ़ादर ने ठीक ही किया...सब कुछ लील लेती है।

प्रसंग ः

यह सेवादांश (गद्यांश) उषा प्रियंवदा की कहानी 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' से उद्धृत किया गया है। ये शब्द कथानायक सुबोध द्वारा अपनी प्रिया और भूतपूर्व बाग्दत्ता (मंगेतर) शोभा को कहे गए हैं।

यह कहानी पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला की बी॰ ए॰ प्रथम वर्ष की कक्षा की हिंदी विषय की पाठ्य–पुस्तक 'सात कहानियाँ' (सम्पादक ः डॉ॰ ईश्वर दास जौहर) मे संकलित है।

सुबोध उस शोभा को तांगे में बिठा कर उसके घर दोड़ने जाता है, जिसमें अब बेकार हो जाने के कारण उसकी सगाई तोड़ कर अन्यत्र किसी ठीक काम धँधे वाले युवक से कर दी जाती है। इन पंक्तियों से पहले शोभा उसे अपनी सफ़ाई देती हुई बताती है कि सगाई तोड़ने से उसने अपने पिता को मना भी किया था, परन्तु आख़िर उनके निर्णय के आगे वह भला क्या करती ? उसके उत्तर में सुबोध उसे स्पष्ट शब्दों में कहता है कि मैं तो कुछ भी नहीं कह रहा हूँ। तुम्हें भी अब यह बात स्वीकार कर लेनी चाहिए कि मैं अपनी ज़िन्दगी में 'कम्पलीट फ़ेलियर' हूँ और आगे भी ऐसे ही रहूँगा। आगे भी वह शोभा से कहता है ः–

व्याख्या ः

सुबोध धैर्यपूर्वक अपनी भूतपूर्व वाग्दत्ता (मंगेतर) से कहता है कि उसके पिता ने उस (सुबोध) की उससे सगाई तोड़ कर ठीक ही किया है। वह अपने जीवन में सुखी रहेगी, इस बात का उसे पूरा निश्चय और आश्वास्ति है। जीवन में प्रेम से बड़ी आग तो भूख (या पेट) की हुआ करती है, जोकि धीरे–धीरे प्रेम जैसी कोमल और भावुक भावनाओं को पूरी तरह से निगल लिया करती है।

सुबोध के कहने का अभिप्राय यह है कि जीवन और जगत् में मानव के लिए 'अर्थ' (= धन) का महत्त्व सर्वाधिक हुआ करती है।

2. तुम माँ बेटी चाहती..लानत है ऐसी ज़िन्दगी पर।

प्रसंग ः

यह कथन सुबोध का है और अपनी माँ और बहन से सम्बोधित है। ये पंक्तियाँ उषा प्रियंवदा की कहानी 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' से उद्घृत है। यह कहानी पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला की बी॰ ए॰ प्रथम वर्ष कक्षा के हिन्दी विषय की पाठ्य–पुस्तक 'सात कहानियाँ' (सम्पादक ः डॉ॰ ईश्वर दास जौहर) में संकलित है।

इन पंक्तियों से पहले जब सुबोध कमरे में घुसते ही अपने उन्हीं मैले कपड़ों का ढेर देखता है, जिन्हें वह छोड़ गया था और जो धुलाने के लिए धोबी को नहीं दिए गए थे। पूछने पर माँ उसे बताती है कि उसने बेटी वृन्दा से उसके भी कपड़े धोबी को दे देने की बात कही थी। सुबोध क्रोधावेश में चिल्ला कर कहता है कि कितने ही दिनों से वह वहीं गन्दे कपड़े पहन रहा है। 15 दिनों के बाद अब धोबी कपड़े लेने के लिए आया भी, तो भी जान–बूझ कर उसके कपड़े धोने के लिए उसे नहीं सौंपे गए हैं। आगे वह सीधे शब्दों में अपने मन में चिरदमित आक्रोश को प्रकट करता है ः–

व्याख्या ः

सुबोध चिल्ला कर पूछता है कि उसकी माँ और बहन दोनों ही अब उससे क्या करना कराना चाहती हैं। आजकल वह त्याग–पत्र देने के बाद बेकार हो गया है, तो इसी कारण उससे अपने ही घर में घर के एक सदस्य की अपेक्षा नौकर जैसा ही व्यवहार किया जाता है। ऐसा कहते समय उसका संकेत सब्ज़ी ख़रीद का लाने जैसे घरेलू काम करवाने की ओर था। अंत में वह अपनी तुच्छ–सी ज़िन्दगी जीने के लिए अपने आप को धिक्कारता है।

उसके कहने का आश्रय यही है कि जब तक उसके पास नौकरी थी, केवल तभी तक घर के एक सदस्य के रूप में उसका पूरा सम्मान किया जाता था। एक बार अपने अफ़सर की अपमानजनक बात सुन कर उनसे आत्मसम्मान की रक्षा के लिए नौकरी से त्याग–पत्र क्या दिया; घर में उसकी हैसियत कौड़ियों के बराबर हो गई है। इस प्रकार सुबोध अपने प्रति किए जाने वाले अनुचित व्यवहार पर ही प्रश्न–चिह्न लगाता है और अपनी माँ और बहन दोनों को ही खरी–खरी सुना कर अपने दिल की पूरी भड़ास निकालता है।

2.5.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न ः

1. 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी का कथासार (कथानक) लिख कर इस रचना की कथावस्तु (Plot) की भी समीक्षा करें।
2. 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी के शीर्षक (नामकरण) के औचित्य या सार्थकता का तर्कसंगत विवेचन करें।
3. 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी के कथ्य (प्रतिपाद्य, मूल संवोदना, उद्देश्य) पर विस्तार से प्रकाश डालें।
4. 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी किस कोटि (श्रेणी, वर्ग) की कहानी है और इसमें लेखिका ने आधुनिक काल की किस सामाजिक और आर्थिक समस्या का निरूपण किया है ?
5. 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी में कथा–नायिका वृन्दा और कथा–नायक सुबोध का चरित्र–चित्रण करें।

6. 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी में वर्तमान निम्न मध्यवर्गीय सामाजिक परिवेश का बखूबी चित्रण हुआ है। तर्कपूर्वक विवेचन कीजिए।
7. 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' रचना के कथा–शिल्प के विभिन्न आयामों का सोदाहरण खुलासा करें।
8. 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी में नौकरी, प्रेम और विवाह की समस्याओं की यथार्थ और सशक्त प्रस्तुति हुई है। सिद्ध करें।
9. 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी की भाषा–शैली पर एक लेख लिखें।
10. 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी की तात्त्विक समीक्षा करें।
11. " 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी के मुख्य स्वर हैं ः नारी–चेतना और युवा–विद्रोह।" इस कथन की तर्कसंगत विवेचना कीजिए।

पाठ संख्या ः 2.6 लेखिका ः डॉ॰ हरिसिमरन कौर

'परमात्मा का कुत्ता' (मोहन राकेश)

इकाई की रूप–रेखा ः

2.6.0 उद्देश्य
2.6.1 प्रस्तावना
2.6.2 मोहन राकेश का जीवन–वृत्त
2.6.3 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी की तात्त्विक समीक्षा
कथावस्तु
पात्रों का चरित्र–चित्रण
संवाद–योजना
देशकाल और वातावरण
भाषा–शैली
उद्देश्य
2.6.4 प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्याएँ
2.6.4.1 अन्य प्रमुख गद्यांश
2.6.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न

2.6.0 उद्देश्य ः

श्री मोहन राकेश का नाम कहानीकार, नाटककार, उपन्यासकार और निबन्धकार के रूप में हिन्दी साहित्य में एक विशेष और महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। वे एक ओर तो प्रेमचन्दीय कथा–शैली अपनाने के कारण परम्परा से जुडे रचनाकार हैं और श्री निर्मल वर्मा की–सी आधुनिक भाव–बोध की कहानियाँ लिखने के कारण आधुनिकता का भी प्रतिनिधित्व करते हैं। वास्तव में वे न तो अपने सम्पूर्ण साहित्य में पूरी तरह से परंपरावादी रचनाकार हैं और न ही आधुनिकतावादी। उनकी रचनाएँ इन दोनों के बीच की किसी रेखा पर खड़ी हैं। यही कारण है कि इनमें जहाँ कहीं भारतीय सभ्यता और संस्कृति का ग्रहण हुआ है, वहाँ परंपरा का स्वीकार और समादर है। इसके विपरीत जहाँ इन्होंने परिवर्तित युग के सपन्दनों को आत्मसात् किया है, वहाँ इनका रचनाकार पौराणिक कथाओं, घटना, प्रसंगों और प्रतीकों में भी प्रासंगिकता और समय–संगति खोजता है। इसी प्रकार मोहन राकेश को आजीवन सुखी दाम्पत्य जीवन कम ही नसीब हो सका था। यही कारण है कि इनके नाटकों में चन्द ('लहरों के राजहंस'), कालिदास ('आषाढ़ का एक दिन') और महेन्द्रनाथ ('आधे–अधूरे') – तीनों कथानायक 'घर की खोज' में हैरान–परेशान भटकते मिलते हैं। इनकी कहानियों में भी 'एक और ज़िन्दगी', 'ग्लास टैंक', 'पहचान', 'जख़्म', 'मिस पाल', 'पाँचवों माले का फ़्लैट', सुहागिनें, क्वाटर इत्यादि में भी घर की यही तलाश खण्डित दाम्पत्य और अनमेल वैवाहिक सम्बन्धों में विशेष रूप से रेखांकित होती है।

इसी प्रकार श्री मोहन राकेश ने अपनी कहानियों में खण्डित पारिवारिक सम्बन्धों को जंगला, उर्मिल जीवन, काला रोज़गार जैसी कहानियों में गहराई से उकेरा है। पुत्र–वात्सल्य को 'आद्रा', 'पहचान', 'एक छोटी–सी चीज़' जैसी

कहानियों को प्रतिपाद्य बनाया गया है। अनैतिक यौन–संबंधों का प्रकाशन 'जानवर और जानवर', 'सेफ़्टीपिन', 'आख़िरी सामान' शीर्षक कहानियों में है। दफ़्तरी मशीनरी में जो लाल फ़ीताशाही दीर्घ सूत्री (Red Tapist) प्रवृत्ति आम तौर से देखी जाती है, उसकी जितनी सशक्त अभिव्यक्ति 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी में हुई है, उतनी किसी और हिन्दी कहानी में दुर्लभ ही रही है।

प्रस्तुत अध्याय में विद्यार्थी जिन तथ्यों से परिचित हो सकेंगे, वे अग्रलिखित हैं :–

1. मोहन राकेश का जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व।
2. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी की तात्त्विक समीक्षा ः कथावस्तु, पात्रों का चरित्र–चित्रण, संवाद–योजना, देशकाल और वातावरण, भाषा–शैली और उद्देश्य – इन सभी तत्त्वों का समीक्षापरक विवेचन।
3. महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की व्याख्यायें।
4. अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न।

2.6.1 प्रस्तावना ः

दफ़्तरों में प्रचलित अफ़सरशाही (Bureaucracy) पर ऐसी सशक्त कहानी हिन्दी साहित्य में और नहीं मिलती है। भ्रष्ट व्यवस्था के कारण भारतीय दफ़्तरों में जो दीर्घसूत्री वृत्ति या 'लाल फ़ीताशाही (फ़ीतावाद)' (Red Tapism) सब कहीं छाया हुआ है, वह "नौ दिन चले अढ़ाई कोस' की प्रसिद्ध कहावत को ही पूरी तरह से चरितार्थ करता है।

डॉ. सुषमा अग्रवाल ने इस कहानी के संबंध में यह मत व्यक्त किया है, "लेखक ने अन्याय, अत्याचार, शोषण और ऐसे ही अमानुषिक कृत्यों और तत्त्वों के प्रति अपनी झुँझलाहट व्यक्त की है। इतना ही नहीं, इस अभिव्यक्ति में लेखक ने अत्यन्त साफ़ जुबान में सरकारी व्यवस्था के खोखलेपन, निष्क्रियता, घूसख़ोरी और अन्याय से ग्रस्त वातावरण में उपेक्षित, मर्दित आदमी का चित्रण व्यंग्यात्मक शैली में किया है........भौंकने से व्यवस्था की जड़ता टूटती है, कान में तेल डाल कर सोये हुए अफ़सर की तन्द्रा टूट जाती है।" वास्तव में अधिकारी तन्त्र पर लिखी गई गिनी–चुनी हिन्दी कहानियों में यह रचना सर्वोपरि ठहरती है।

2.6.2 मोहन राकेश का जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व

श्री मोहन राकेश नई पीढ़ी के कथाकारों में से हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं के आधार पर बहुत थोड़े समय में ही प्रसिद्धि प्राप्त की है और साहित्यिकों की श्रेणी में अद्वितीय स्थान पाया है।

मोहन राकेश का जीवन–वृत्त ः

श्री मोहन राकेश जी का जन्म 8 जनवरी सन् 1925 ई. में जंडी वाली गली अमृतसर में हुआ। आपका पूरा नाम मदन मोहन गुगलानी था, परन्तु 'मोहन राकेश' के नाम से ही अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की। आपके पिता वैष्णव भक्त और वकील थे, परन्तु इनकी साहित्य में अभिरुचि थी, इसीलिए इन्हें बचपन से ही पर्याप्त साहित्यक वातावरण प्राप्त हुआ। सोलह वर्ष की अवस्था में इनके पिता का देहान्त हो गया और तभी से इनका जीवन–संग्राम आरम्भ हो गया। आत्मनिर्भर रह कर उन्होंने सन् 1944 ई. में संस्कृत में एम. ए. और सन् 1952 ई. में हिन्दी में एम. ए. पास की। ये एक दैनिक पत्र के सम्पादक बने, परन्तु पत्र के घाटे में चले जाने के कारण वहाँ से आपकी छुट्टी कर दी गई। फिर सन् 1945 ई. दो पत्रों में स्थान मिला, परन्तु यहाँ भी निःशुल्क लेख न लिखने एवं उग्र विचारों के कारण त्यागपत्र देने के लिए विवश होना पड़ा। इन्होंने पत्रकारिता के कार्य से ऊब कर एक स्कूल में नौकरी कर ली, परन्तु वहाँ भी अधिक समय तक टिक न पाए और अन्त में त्यागपत्र दे दिया। आत्म–सम्मान आर स्वाभिमान की इस प्रेरणा ने ही इन्हें एम. ए. करने के लिए प्रेरित किया। दो वर्ष की बेकारी की मार सहने के बाद सन् 1947 ई. में इन्हें बम्बई शिक्षा विभाग मे लेक्चररशिप मिली। वहीं पर आपका परिचय गिरध ारी लाल वैद से हुआ, विज्ञान का विद्यार्थी होने पर भी जिसकी हिन्दी में रुचि थी।

विवाह ः

छह महीने पश्चात् ये सन् 1950 ई. में 'टीचर्ज़ यूनियन' के गठन के लिए सक्रिय हुए। इसी साल भाभी की मौसेरी बहन से इनकी पहली शादी हुई, परन्तु यह शादी आपकी इच्छा के प्रतिकूल थी और यही कारण था कि बाद में सम्बन्ध–विच्छेद हो गया। इस पत्नी से एक लड़का भी हुआ, जो उनकी 'एक और ज़िन्दगी' और 'पहचान' शीर्षक कहानियों में आता है। इसके बाद एक विक्षिप्त महिला से इनका विवाह हो गया। उससे भी मन को कोई शान्ति नहीं मिली। 17 अक्तूबर सन् 1961 ई. में फिर से फ़कीर की तरह बम्बई पहुँचे।

आजीविका और नौकरियाँ ः

15 अगस्त सन् 1947 ई॰ को जब भारत स्वतन्त्र हुआ, तब मोहन राकेश अमृतसर में थे। वे आजीविका की खोज़ में दिल्ली होते हुए भी बम्बई पहुँचे। वहाँ वे कई मास तक बेकार रहे और उन्हें फुटपाथ पर भूखे पेट ही सोना पड़ा। इसी बीच इन्हें शिमला से अपनी पुरानी प्रिया का पत्र मिला, जिसमें इन्हें जीवन–विषयक निर्णय हेतु शीघ्र बुलाया गया था। मोहन राकेश अर्थाभाव के कारण वहाँ जा भी नहीं पाये। उन्होंने प्रिया को जो पत्रोत्तर लिखा, उसमें अपनी आर्थिक विवशता छिपा कर कुछ दूसरी बातें लिख दीं। बाद में इन्हें प्रिया के किसी रोग से अकस्मात् चल बसने का दुःखद समाचार ही मिला। मोहन राकेश ने स्वाभिमान की ख़ातिर कई नौकरियाँ छोड़ दीं। एम॰ ए॰ में उत्तीर्ण होने के बाद इन्होंने सन् 1947 ई॰ से सन् 1951 ई॰ तक इन शिक्षण–संस्थाओं में अध्यापन–कार्य किया ः सिडनहम कॉलेज ऑफ़ कॉमर्स, बम्बई, एनफ़िस्टन कॉलेज, बम्बई, बिशप कॉटन स्कूल, शिमला, डी॰ ए॰ वी॰ कॉलेज, जालन्धर। अन्तिम कॉलेज में उनके द्वारा की गई अध्यापन की नौकरी की कालावधि उनके जीवन की सर्वाधिक लम्बी अवधि थी.......चार वर्ष और चार महीने।

पुनः नौकरी न करने का इनका निश्चिय आर्थिक विषमता के कारण सन् 1960 ई॰ में टूटा, जब वे दिल्ली विश्वविद्यालय में एक वर्ष के लिए लैक्चरार रहे। सन् 1962 ई॰ में वे 'सारिका' पत्रिका के सम्पादक नियुक्त हुए। यद्यपि एक वर्ष तक उन्होंने पत्रिका के स्तर पर उन्नयन का कार्य किया, तथापि सन् 1963 ई॰ के आरम्भ में ही इन्हें स्वाभिमान के कारण उस नौकरी से भी त्यागपत्र देना पड़ा।

मृत्यु ः

श्री मोहन राकेश का स्वर्गवास 3 दिसम्बर सन् 1972 ई॰ में हो गया। उस सन्ध्या में वे 'एशिया 72' के मेले में जाने के लिए बाक़ायदा तैयार हुए। तभी वे दूसरे लोक की ओर महाप्रस्थान कर गए।

मोहन राकेश का व्यक्तित्व ः

श्री मोहन राकेश जी स्वयं कहा करते थे, "मैं असम्भव व्यक्ति हूँ, उसके साथ मैं यह भी कहना चाहता हूँ कि मैं बहुत ईमानदार आदमी भी हूँ।" इसी ईमानदारी और असम्भव व्यक्तित्व की खोज में ही इनकी ज़िन्दगी गुज़र गई।

मोहन राकेश का व्यक्तित्व अन्तर्विरोधों से परिपूर्ण था। अलग–अलग लोगों के सामने इनकी अलग–अलग 'इमेज' थी, इसीलिए शायद इनके बारे में एक साथ कई विरोधी बातें प्रचलित थीं, जैसे मोहन राकेश अपने दोस्तों के लिए जीते हैं। वे बहुत आत्मकेन्द्रित हैं। उनकी दोस्तियाँ निभती हैं, तो दूसरों की वजह से, ये तो एक क़दम भी न चल सके। राकेश को एक घर की तलाश है, जहाँ सही मायनों में कोई उनका अपना हो, जहाँ उन्हें सुकून मिले। यही 'घर की तलाश' उनके पूरे साहित्य की खोज है – उस सारी रात राकेश जो एक ही बात बोलते रहे – मुझे घर चाहिए, अपना घर। मुझे ज़िन्दगी में और सब कुछ मिला.........सिर्फ़ एक घर ही नहीं मिला। मैं कहाँ–कहाँ इसके लिए भटका........क्या–क्या इसक लिए नहीं किया.........बहुत ही दुखी आदमी हूँ..........एक बहुत ही थका हुआ आदमी हूँ। मैं चाहता हूँ कि मुझे अब तुम केवल सँभाल लो..........मुझ और मेरे घर को...........।" – (अनीता राकेश, 'चन्द सतरें और', पृ॰ 75)

मोहन राकेश का कृतित्व ः

श्री मोहन राकेश के साहित्य में तीन रूप देखने को आए हैं ः –

1. *उपन्यासकार* मोहन राकेश
2. *नाटककार* मोहन राकेश और
3. *कहानीकार* मोहन राकेश

मोहन राकेश ने 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरों के राजहंस', 'आधे–अधूरे' नाटक लिखे। इनके पूर्ण साहित्य का परिचय आगे दिया जा रहा है ः–

(क) उपन्यास ः

अंधेरे बन्द कमरे, न आने वाला कल, अन्तराल, काँपता हुआ दरिया, स्याह और सफ़ेद, कई एक अकेले।

(ख) यात्रा–वृत्त ः

आख़िरी चट्टान तक।

(ग) नाटक और एकांकी नाटक ः

लहरों के राजहंस, आधे–अधूरे, पैर तले ज़मीन, अण्डे के छिलके, आषाढ़ का एक दिन।

(घ) निबन्ध–संग्रह ः

'परिवेश', 'बकलम खुद', 'मोहन राकेश ः साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टि'।

(ङ) डायरी ः

व्यक्तिगत।

(च) अनुवाद ः

शाकुन्तल, एक औरत का चेहरा।

2.6.3 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी की तात्त्विक समीक्षा

कथावस्तु ः

कहानी के आरम्भ में एक कमिश्नर साहब के दफ़्तर का वर्णन हुआ है। धड़ाधड़ एक व्यक्ति अर्ज़ियाँ टाईप करता है और लम्बे ऊँचे जाट अपनी बारी की प्रतीक्षा कर रहे हैं। तभी कंपाउण्ड में एक अधेड़ व्यक्ति का आगमन होता है। सरकार ने उसे 7 वर्ष पहले किए हुए क्लेम पर उसके द्वारा इतनी लम्बी भुखमरी भोगने के बाद, अब जा कर केवल सौ मरले ज़मीन दी है, जो बंजर होने के कारण एकदम बेकार–सी ही है। बूढ़ा चाहता है कि भले वर्तमान सरकार उसे इससे आधी जमीन ही 'अलॉट' कर दे, पर वह ढंग की तो हो। दो वर्षों से इसी प्रयोजन के लिए एउस बूढ़े पंजाबी जाट ने जो अर्ज़ी दे रखी है, उसका नंबर है बारह सौ छब्बीस बटा सात। अब अनेक चक्कर लगाते रहना पर वह बूढ़ा अपना नाम पूछे जाने पर यही नम्बर बोल दिया करता है। उसका यह कथन उसका चुकी हुई सहनशक्ति को ही सूचित करता है, "लो मैं आ गया हूँ आज यहीं पर अपना सारा घर–बार ले कर। ले लो, जितना वक़्त तुम्हें लेना है।"

बूढ़े के साथ उसकी विधवा भाभी भी है और तपेदिक का रोगी भतीजा है, एक विवाह–योग्य भतीजी है। वह आदमी कम्पाउण्ड में खड़े हो कर मजमें वालों की तरह–से तक़रीर–सी करता चला जा रहा है लाल बेल्ट कमर में लगाए हुए चपरासी के द्वारा लताड़े जा कर वह कर्मचारियों को 'सरकार के कुत्ते' कह कर अपमानित करता है, साथ ही अपने आप को 'परमात्मा का कुत्ता' घोषित करता है। उसके ये शब्द उसके दिलों में जमी अथाह खीझ की ही अक्क़ासी करते हैं; तुम लोग सरकार के कुत्ते हो – हम लोगों की हड्डियाँ चूसते हो और सरकार की तरफ़ से भौंकते हो। मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ। उसकी दी हुई हवा खा कर जीता हूँ और उसकी तरफ़ से भौंकता हूँ।"

आगे भी वह कमिश्नर साहब से कहता है, "वह गड्ढा आपको वापस करना चाहता हूँ, ताकि सरकार उसमें एक तालाब बनवा दे और अफ़सर लोग शाम को वहाँ जा कर मछलियाँ मारा करें। या उस गड्ढे में सरकार एक तहख़ाना बनवा दे और मेरे जैसे सारे कुत्तों को उसमें बंद कर दे।"

आगे जब वह अपने शरीर पर दो कपड़ों के चार बाद न रहने की बात कर उन्हें भी आज उतार देने का मज़ाक करता है, तब उसकी धमकी से घबरा कर अफ़सर उससे कहता है, "यह बकवास बंद करो और मेरे साथ अंदर आओ।"

आख़िर उस बिचारे आदमी की सुनवाई हुई और आध धंटे के बाद दो सालों से रुका हुआ उसका काम सम्पन्न हो गया यह और बात है कि वह काम निर्लज्जता से ही पूरा करवा पाया था, अन्यथा वह दो वर्षों से उस दफ़्तर के चक्कर लगा–लगा कर बुरी तरह से थक–हार चुका था। वह कर्मचारियों की खुशामदें करता रहा था, उन्हें रब्ब के वास्ते देता रहा था, किन्तु किसी ने भी उस बेचारे बूढ़े की अर्ज़ी उचित कार्यवाही के लिए आगे नहीं बढ़ाई। उसके आज अचानक सफल हो कर लौटने पर सभी लोग विस्मित हो जाते हैं। वह आज अचानक सफल हो कर लौटने पर सभी लोग विस्मित हो जाते हैं। वह अपनी ही तरह के पीड़ित प्रार्थियों को चूहों की तरह कर्मचारियों और अफ़सरों की ओर चूहों की तरह 'बिटर–बिटर' ताकते की बजाए 'भौंकने' का सत्परामर्श देता है, ताकि अपने आप उन सालों के कान फट जाएँ।

कहानी के अन्त में उस बूढ़े के ये शब्द समस्या के साथ–साथ उसका एक अत्यन्त व्यंग्य–विद्रूपपूर्ण समाधान भी प्रस्तुत करते हैं, "कहादार हो, तो सालहा–साल मुँह लटकाये हुये खड़े रहो। अर्ज़ियाँ टाइप कराओ और नल

का पानी पीओ। सरकार वक़्त ले रही है। नहीं तो बेहया बनो। बेहयाई हज़ार बरकत है।

उस वृद्ध के काम पूरा हो चुकने के बाद उसके बाहर आते ही पुनः कंपाउण्ड में मातमी वातावरण छा जाता है।। चपरासी पहले की ही तरह फिर स्टूल पर जा बैठता है। अब पुनः कमरे में चाय के 'सेट' ले जाए जाने लगते हैं। अर्ज़ीनवीस एक बार फिर टाइप राइटर पर 'टिक–टिक' करता हुआ अर्ज़ियाँ टाइप करने में व्यस्त हो जाता है। इसी प्रकार उसका लड़का भी पूर्ववत् पाठ याद करने में तल्लीन हो जाता है। इस प्रकार वह 'क़लम', 'मुर्ग़ी' और 'अंधेरी गुफ़ा' के समानक अंग्रेज़ी शब्दों के हिज्जे (वर्तनियाँ) रट रहा है। यह सारा क्रिया–कलाप कहानी में समाज में यथास्थिति के जारी रहने का एक अर्थपूर्ण 'मैनरिज़्म' है, जिसमें निहित व्यंग्य बेहद प्रखर और प्रभावशाली बन पड़ा है। घटनाओं और स्थितियों की नाटकीयता अत्यंत प्रशंसनीय है।

पात्रों का चरित्र–चित्रण ः

यह कहानी मुख्यतः पंजाबी बूढ़े सिक्ख को ही केन्द्र में रख कर उसका अत्यन्त यथार्थ चरित्र–चित्रण करती है। वह एक वर्गगत प्रतिनिधि चरित्र (Typical Character) होने के साथ–साथ स्थिर चरित्र (Flat Character) भी है।

गुरु गोबिन्द सिंह ने फ़ारसी में यह प्रेरणादायक कथन कहा था ः

चूं कार आज हमा हीलते दरगुज़श्त, हलाल अस्त वुर्दन व शमशीर दस्म

अर्थात् – "अन्याय का विरोध्स करने के लिएजब अन्य सभी साधन काम न आयें, तो अपने हाथ में तलवार उठा लेना ही जायज़ हुआ करता है।"

कहानी के नायक बूढ़े सिक्ख की सहज–शक्ति दफ़्तर में। दो साल पहले ज़मीन बदलने के लिए दी हुई अर्ज़ी बिना कार्यवाही के पड़ी रहती है। उसे उसके बारे में पूछने पर 'शायद काम हो चुका है', 'तकरीबन होने ही वाला है' जैसे झूठे लटकाऊ, उत्तरों से टाल दिया जाता है। कहानी में उसके चरित्र की ये स्वभावगत विशेषताएँ उभर कर सामने आती हैं – व्यंग्यकटाक्षप्रियता, स्पष्टवादिता, दूरदर्शिता, दीर्घसूत्री कार्य–प्रणाली से घृणा, पारिवारिक बन्धुओं से प्रेम, प्रतीकप्रियता, कर्कशता, हठवादिता इत्यादि।

'गुरुवाणी' में भी 'राजे सींह मुकद्दम कुत्ते' कथन के द्वारा प्रशासकों के लिए 'कुत्ते' जैसी कठोर संज्ञा दी गई है। गुरु गोबिन्द सिंह जी की पूर्वोक्त उक्ति भी इस कहानी के अन्त का प्रेरक घटक हो सकती है और 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी के इस शीर्षक और बीच में कर्मचारियों को 'सरकार के कुत्ते' कहने में गुरवाणी की उक्ति भी पृष्ठभूमि में प्रेरणादायी सूत्र हो सकता है।

बूढ़े को बेताज 'बादशाह' कहा गया है। वह अड़ियल और हठी स्वभाव के पंजाबी सिक्खों का पूरी तरह से प्रतिनिधित्व करने वाला एक बेहद सशक्त चरित्र है। उसके चरित्र को स्थूल अर्थों में लेने से अर्थ का अनर्थ भी हो सकता है, क्योंकि उसे आदर्श मान कर दूसरे पीड़ित, शोषित और अन्यायग्रस्त लोग उसी की तरह बेहाई में ही हज़ार बरक्त मान कर निर्लज्ज होने लगेंगे। यह और बात है कि इस दूषित और क्रूर व्यवस्था को अपनी बात सुनवाने के लिए अन्य कोई विकल्प आज भी कहीं नज़र नहीं आता है। फिर भी बूढ़े सिक्ख का यह चरित्र समस्याओं के समाधान के लिए कदापि सभी के लिए एक अनुकरणीय आदर्श (Ideal) नहीं ठहराया जा सकता है।

एक बाबू का संक्षिप्त कथन दफ़्तरों में कार्यरत सफ़ेदपोश बाबुओं के चरित्र की रेखाएँ गहराने में सक्षम है। ऐसा ही चपरासी के बारे में भी है। अफ़सर का चरित्र भी उसके एक वाक्य में सिमट जाता है।

कुल मिला कर शील–निरूपण या चरित्र–चित्रण के निकष पर यह कहानी एक सशक्त रचना ठहरती है ।

संवाद–योजना ः

इस कहानी के संवाद दीर्घ कम है और संक्षिप्त अधिक। उनमें पंजाबी सिक्खों की अक्खड़ता, सहजकोपिता, विद्रोह–चेतना, कटाक्षपरक्ता, अधीरता और पारिवारिक, स्नेहशीलता जैसी स्वभागत विशेषताएँ झलकती हैं। समग्रतः हरेक संवाद पात्रानुकूल बन पड़े हैं और बेहद नाटकीय हैं। छोटे–से कथन में बला की शक्ति और प्रभाव मिलता है। यथा ः "बूढ़ा नायक अन्य पुरुष शैली में यह घोषणा करता है; आज वह बूटों की ठोकर खा कर प्राण देगा, लेकिन किसी की मिन्नत नहीं करेगा। किसी को पैसा नहीं चढ़ाएगा। किसी की पूजा नहीं करेगा।"

यह कथन वक्ता की अहम्मन्यता, स्वाभिमान, सिद्धान्तप्रियता और दुर्धर्ष संघर्ष–शक्ति और अपराजेय ऊर्जा का

सूचक है। उसकी हठधर्मिता, दृढ़निश्चयता, आस्तिकता आदि भावनाओं का सूचक उसी का यह कथन चपरासी के प्रति इस प्रकार पूरी सरकारी व्यवस्था पर कराराघात करने वाला है।

"उसका घर इन्साफ़ का घर है। मैं उसके घर की रखवाली करता हूँ। तुम सब उसके इन्साफ़ की दौलत के लुटेरे हो। तुम पर भौंकना हमारा फ़र्ज़ है, मेरे मालिक का फ़रमान है। मेरा तुम से अज़ली बैर है।.....मैं अकेला हूँ, इसलिए तुम सब मिल कर मुझे मारो। मुझे यहाँ से निकाल दो। लेकिन मैं फिर भौंकता रहूँगा। तुम मेरा भौंकना बंद नहीं कर सकते। मेरे अन्दर मेरे मालिक का नूर है, मेरे वाहगुरु का तेज़ है। मुझे जहाँ बन्द कर दोगे, मैं वहाँ भौंकूँगा और भौंक कर तुम सबके कान फाड़ दूँगा।"

संवादों की इसी नाअकीयता के कारण इस कहानी का नाट्यरूपान्तर 'बारह सौ छब्बीस बटा सात जैसे नामों से अनेक बार मंचों पर प्रस्तुत होता रहा है। एक व्यक्ति का यह कथन आजकल की दफ़्तरशाही की पोल खोल देता है, 'अरे बाबा, शान्ति से काम ले। यहाँ मिन्नत चलती है। पैसा चलता है। धौंस नहीं चलती।"

जिस प्रकार श्री मोहन राकेश के आधुनिक भाव–बोध के सशक्त नाटक 'आधे अधूरे' का प्राण उसकी सशक्त संवाद–योजना मानी जाती है, ठीक उसी प्रकार दफ़्तरी कार्य–प्रणाली की बखिया उघेड़ने वाली इस कहानी के सशक्त होने का आधार भी इसके प्रखर व्यंग्यपूर्ण और सार्थक संवादों की योजना ही कही जा सकती है।

देशकाल और वातावरण ः

श्री मोहन राकेश ने कहानी के इस तत्त्व के आधार पर भी प्रस्तुत कहानी के एक सशक्त देशकालगत पृष्ठपीठिका प्रदान की है। कहानी के आरम्भ में ही कमिश्नर के दफ़्तर का वातावरण साकार करके रख दिया गया है। यथा ः –

1. "बहुत–से लोग यहाँ–वहाँ सिर लटकाए बैठे थे, जैसे किसी का मातम करने आए हो। कुछ लोग अपनी पोटलियाँ खोल कर खाना खा रहे थे।........कमेटी के नल के पास एक छोटा–मोटा क्यू लगा था। नल के पास कुरसी डाल कर बैठा अर्ज़ीनवीस धड़ाधड़ अर्ज़ियाँ टाइप कर रहा था।........सफ़ेद दाढ़ियों वाले दो तीन लम्बे–ऊँचे जाट अपनी लाठियों पर झुके हुए उसके ख़ाली होने का इंतज़ार कर रहे थे।" यहाँ कमिश्नर का दफ़्तरी वातावरण सवाक् हो उठा है।
2. "कमीज़ों के आधे बटन खोले और बग़ल में फ़ाइलें दबाए कुछ बाबू एक दूसरे से छेड़खानी करते रजिस्ट्रेशन ब्राँच की तरफ़ जा रहे थे। लाल बेल्ट वाला चपरासी आसपास की भीड़ से उदासीन, अपने स्टूल पर बैठा मन–ही–मन कुछ हिसाब कर रहा था।....."
3. "दो चार बाबू बीच की मेज़ के पास जमा हो कर चाय पी रहे थे। उनमें से एक दफ़्तरी काग़ज़ पर लिखी अपनी ताज़ा ग़ज़ल दोस्तों को सुना रहा था और दोस्त इस विश्वास के साथ सुन रहे थे कि वह ज़रुर उसने 'शमा' या 'बीसवीं सदी' के किसी पुराने अंक से उड़ाई है।" यहाँ बाबुओं की ख़रमस्तियों, समययापन के ढंग आदि पर पैना कटाक्ष करना ही अभीष्ट रहा है।
4. बाल–प्रकृति के यथार्थपरक चित्रण में भी श्री मोहन राकेश को कमाल हासिल है यथा ः –

"थोड़ी देर मोढ़े पर बैठा उसका लड़का अंग्रेज़ी प्राइमर का रट्टा लगा रहा था। 'सी ए टी कैट......कैट माने बिल्ली. ....बी ए टी......बैट.....बैट माने बल्ला, एफ़ ए टी फ़ैट– फ़ैट माने मोटा' इत्यादि।" कथान्त में उसका यह पाठ सार्थक और व्यंग्य विद्रूपपूर्ण हो उठता है – 'पी ई एन.......पेन माने कलम, एच ई एन – हैन माने मुर्ग़ी, डी ई एन – डैन माने अंधेरी गुफ़ा।

यहाँ कहने की व्यंजना यह है कि दफ़्तर के बाबू लोग अपनी कलम से यहाँ आने वाले भोले–भाले लोगों–रूपी मुर्ग़ियों को हलाल करते हैं और उनकी जेबों पर डाके डाल कर अपनी जेबें भरते हुए दफ़्तर को एक अंधेरी गुफ़ा में बदल कर खलनायक की भूमिका निभा रहे हैं।

समग्रतः देशकालगत परिवेश नामक तत्त्व के निकष पर भी यह कहानी सशक्त रचना कही जाएगी।

भाषा–शैली ः

इस कहानी में श्री मोहन राकेश की भाषा–शैली पूर्णतः पात्रानुकूल सरल, सशक्त और व्यंग्य विद्रूपपूर्ण है। बूढ़े कथानायक की भाषा में गद्य की व्यास शैली के दर्शन होते हैं। यथा ः

"क्या महात्मा गांधी ने इसलिए इन्हें आज़ादी दिलाई थी कि ये आज़ादी के साथ इस तरह सम्भोग करें ?

उसकी मिट्टी ख़राब करें ? उसके नाम पर कलंक लगाएँ ? उसे टके–टके की फ़ाइल में बाँध कर ज़लील करें ? लोगों के दिलों में उसके लिए नफ़रत पैदा करे ?"

भाषा में पंजाबी जाति के चिन्तन–मनन और विचार–पद्धति की छाप सर्वत्र परिलक्षित होती है। यथा ः

1. "मैं पुलिस के सामने नंगा हो जाऊँगा और कहूँगा कि निकालो मेरी बादशाही। हममें से किस–किस की बादशाही निकालेगी पुलिस ?"
2. "अब देखना यह है कि पहले कार्रवाही पूरी होती है कि पहले मैं पूरा होता हूँ ?"

अनेक कथनों में अधूरे वाक्यों द्वारा भाषा–शैली को नाटकीय बनाया गया है। यथा ः

1. हाकिमों का कहा मानना पड़ता है, वरना............
2. मैं अभी तुझे दिखा देता कि.................
3. तो वाहेगुरू का नाक ले कर............

कहीं भाषा प्रकृति का आलम्बन रूप में भी चित्रण करती है। यथा ः

"सारे कम्पाउंड में सितम्बर की खुली धूप फैली थी। चिड़ियों के कुछ बच्चे डालों से कूदने और फिर ऊपर को उड़ने का अभ्यास कर रहे थे और कई बड़े–बड़े कोए पोर्च के सिरे से दूसरे सिरे तक चहलक़दमी कर रहे थे।"

रूपगत बिम्ब ः

कहानी में रूपगत बिम्बों की भरमार से भाषा सरस और मर्मभेदिनी बन गई है। यथा ः

1. उस (अर्ज़ीनबीस) के माथे से बह कर पसीना उसके होंठों पर आ रहा था।
2. कभी उस (चपरासी) के होंठ हिलते थे और कभी सिर हिल जाता था।
3. बुढ़िया, जिसका सिर काँप रहा था, चेहरा झुर्रियों के गुंझल के सिवा कुछ नहीं था।

रूपममयी भाषा की रचना में तो कहानीकार को पूर्व दक्षता प्राप्त है। पात्रानुकूल भाषा के उदाहरण हैं। चपरासी से कथन हैं ः

1. ऐ मिस्टर ! चल हियाँ से बाहर......
2. कमीना आदमी, दफ़्तर में आ कर गाली देता है। मैं अभी तुझे दिखा देता कि............
3. तुझे अभी पता चल जाता है कि कौन साला कुत्ता है ! मैं तुझे मार–मार कर..............

कहानी में पात्रों के चरित्र–चित्रण की अनेक शैलियाँ प्रयुक्त की गई हैं ः–

1. एक पात्र द्वारा अन्य पात्र का चरित्र-चित्रण ः

1. चपरासी बूढ़े जाट से कहता है, "अभी पुलिस के सुपुर्द कर दिया जाएगा, तो तेरी सारी बादशाही निकल जाएगी।"
2. "साले आदमी के कुत्ते..................."

2. एक पात्र द्वारा समूह-चित्रण ः

"बूढ़ा बाबुओं से कहता है, "तुम सब उसके इन्साफ़ की दौलत के लुटेरे हो।"

3. एक पात्र द्वारा आत्म चरित्र-चित्रण ः

1. तुम पर भौंकना हमारा फ़र्ज़ है।
2. लेकिन मैं फिर भौंकता रहूँगा। मेरे अन्दर मेरे मालिक का नूर है, मेरे वाहगुरु का तेज़ है। मुझे जहाँ बन्द कर दोगे, मैं वहाँ भौंकूगा और भौंक–भौंक कर तुम सब के कान फाड़ दूँगा।
3. मैं आज शायद और तकरीबन दोनों घर पर छोड़ आया हूँ।

इस कहानी की शब्दावली में कई प्रकार के शब्दों के निदर्शन देखें ः–

1. संस्कृत तत्सम शब्द ः

नाम, व्यक्ति, अंक, स्त्री, लेख, ह्रदय, अस्थि, देश, परमात्मा, सन्त, ग्राहक, तेज़, सम्भोग, उत्सुक, वातावरण इत्यादि।

2. तद्भव शब्द ः

काम (सं॰ कर्म), कुछ, सिर, सितम्बर (September), पूँछ (सं॰ श्मश्रु), गड्ढा (सं॰ गर्त), पचास बहन (सं॰

भगिनी), कुंवारी (सं॰ कुमारी), कान (सं॰ कर्ण), घर (सं॰ गृह), डंडे (सं॰ दण्ड), नंगा (सं॰ नग्न), मुँह (सं॰ मुख), पीठ (सं॰ पृष्ठ), बात (सं॰ वार्त्ता), आँख (सं॰ अक्षि) इत्यादि।

3. देशज शब्द ः

ठगी, पोटलियाँ, पगड़ी, नल, जाट, मोढ़े, रट्आ, झुर्रियों, हियाँ, ठोकर।

4. अरबी-फ़ारसी-उर्दू शब्द ः

बदमाशी, महीने, कार्रवाई, रहम, लेकिन, दौलत, शायद, तक़रीबन, अर्ज़ीनवीस, मातम, मालिक, इन्साफ़, हवा, मर्ज़, कमीना, रोज़गार, चपरासी, ज़मीन, सिवा, चहलकदमी, हक़दार, ताज़ा, ग़ज़ल, रिसर्चदाँ, दीवान, ग़ज़लगो, याद, अज़ीज़, साहब, मरीज़, हुक्म, यारम, खुद, बेताज, बादशाह, बाप, मगर, हज़ार, बरकत, चेहरा, वल्द, मर्द, दतालवी, आदमी, उम्र, तरफ़ जवान, वक़्त, हलफ़िया ब्यान, चीज़, नूर, बल्द, तकरीर, मजमे इत्यादि।

5. अंग्रेज़ी शब्द ः

टाइपराइट, कैट, बैट, फ़ैट, पेन, डेन, कम्पाउण्ड, कमेटी, रीडर्ज़ डाइजेस्ट, ऑपरेशन, मिस्टर, बूट, सूट, रिकार्ड, पोर्च, एलॉट, ब्रान्च, कमिश्नर, बेल्ट, रजिस्ट्रेशन, प्राइमर, कमेटी इत्यादि।

6. ध्वन्यात्मक शब्द ः

धड़ाधड़, बिटर–बिटर, टिक–टिक इत्यादि।

7. मुहावरे ः

पूरा होना (पंजाबी मुहावरा), मिट्टी ख़राब करना, कलंक लगाना।

8. शब्दों और वाक्यांशों की पुनरावृत्तियाँ ः

शब्दों और वाक्यांशों की पुनरावृत्तियों से कहानी में स्थल–स्थल पर नाटकीयता का गुण भरा गया है। यथा ः "इस **कमरे** से उस **कमरे** में अर्ज़ी के **जाने में वक़्त लगता है**। इस **मेज़** से उस **मेज़** तक **जाने में** भी **वक़्त लगता है** ! सरकार **वक़्त** ले रही है !..........ले लो जितना **वक़्त** तुम्हें लेना है........"

9. पंजाबी शब्द ः

वाहेगुरु, गुंझल, मरले, पूरा होना (मुहावरा)

उद्देश्य ः

यह एक सोद्देश्य सामाजिक कहानी है। इसमें दफ़्तरों में चींटी की–सी चाल से चलने वाली कार्य–पद्धति पर गहरा कटाक्ष किया गया है। इसके अतिरिक्त अधिकतर कार्यालयी कर्मचारियों की निष्क्रियता, घूसख़ोरी निर्धनों के प्रति निर्ममता, अमानवीयता, संवेदनशीलता इत्यादि स्वभावगत विशेषताओं का पर्दाफ़ाश करना भी कहानीकार को अभीष्ट रहा है। इसके साथ ही पंजाबी जातीय चरित्र का उरेहन करना भी रचना का लक्ष्य रहा है।

सरकारी व्यवस्था में जनसाधारण के प्रति होने वाले अन्याय का तो यहाँ ख़ाका खींचा ही गया है, परन्तु बूढ़े नायक द्वारा समस्या के समाधान के रूप में जो निर्लज्जता का व्यवहार किया गया है, वह प्रत्येक व्यक्ति के लिए कदापि अनुकरणीय आदर्श स्वीकार नहीं किया जा सकता है। यद्यपि वर्तमान भ्रष्टाचार से ग्रस्त व्यवस्था को सुधारने का कोई भी सार्थक विकल्प हमारे सामने कोई नहीं है, तथापि ऐसा समाधान प्रत्येक रचना से अपेक्षित भी नहीं हुआ करता है। यह रचना 'भोगे हुए यथार्थ' को सशक्त भाषा–शैली और संवादों के माध्यम से रेखाँकित करने के कारण एक सोद्देश्य रचना कही जाएगी।

2.6.4 महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्यायें

1. फ़र्क इतना है कि ....मेरे मालिक का फ़रमान है।

प्रसंग ः

ये शब्द श्री मोहन राकेश द्वारा रचित 'परमात्मा का कुत्ता' नामक कहानी के बूढ़े सिक्ख द्वारा दफ़्तरी चपरासी को सम्बोधित करके कहे गए हैं। इससे पहले बूढ़ा दो साल पहले बंजर मिली हुई ज़मीन बदलवाने के लिए दफ़्तरी कर्मचारियों को जब ख़ूब गालियाँ देते हुए बकवास करता चला जाता है, तब वहाँ का एक चपरासी उसे मार–मार कर बाहर खदेड़ देने की धमकी देता है। बूढ़े व्यक्ति पर उस धमकी का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता है। वह सभी सरकारी कर्मचारियों

को सरकार के कुत्ते घोषित करता हुआ अपने को 'परमात्मा का कुत्ता' ठहराता है। इतने से ही उसे पूरा सन्तोष नहीं होता, अपितु वह आगे भी चपरासी को माध्यम बना कर सभी कर्मचारियों के चरित्र की शल्य–चिकित्सा करना जारी रखता है।

व्याख्या ः

बूढ़ा शरणार्थी चपरासी से कहता है कि एक वही नहीं, यहाँ सभी कुत्तें हैं और वह स्वयं भी एक कुत्ता है। दोनों पक्षों में मुख्य अन्तर यह है कि कर्मचारी सरकार के कुत्ते हैं और इसीलिए जनसाधारण पर सरकार की ओर से भौंकनते हुए उनकी हड्डियाँ चूसने अर्थात् घूस आदि भ्रष्टाचारपूर्ण कार्यों से उन्हें लूटा जाता है। इस प्रकार वे सरकार के आदेशों और इच्छाओं की पूर्ति करने वाले साधन भर हैं।

दूसरी ओर बूढ़ा पंजाबी सिक्ख अपने को 'परमात्मा का कुत्ता' घोषित करता है और प्रभुप्रदत्त पवन खा कर जीने की बात करता है। साथ ही वह ईश्वर की ओर से भौंकने अर्थात् उसकी इच्छानुसार सरकारी कर्मियों के अन्याय का भरपूर विरोध करने की बात प्रतीक द्वारा करता है। जहाँ यह संसार न्याय का घर है, वहाँ वह अपने को न्याय का रक्षक ठहराता है। इसके विपरीत वह सरकारी कर्मचारियों को न्याय के धन के लुटेरे भी घोषित करता है। इसी कारण वह उन पर 'भौंकना' अर्थात् आक्रोश आदि व्यक्त करना अपना प्रभु के द्वारा सौंपा हुआ एक नैतिक कर्त्तव्य मानता है।

2. हयादार हो, तो सालहा–साल...हज़ार बरकत है।

प्रसंग ः

ये कथन श्री मोहन राकेश की प्रसिद्ध कहानी 'परमात्मा का कुत्ता' के अन्त से कुछ पहले का है। यह कथानायक बूढ़े सिक्ख द्वारा किसी विशेष व्यक्ति को सम्बोधित न हो कर भी अदृश्य रूप से सभी अपने जैसे सरकारी कर्मचारियों और दूषित कार्य–प्रणाली के शिकार लोगों को ही सम्बोधित है।

इस कथन के पहले भाग में लोक–लाज रखने वाले लोगों के प्रयासों की निरर्थकता पर कटाक्षपूर्ण टिप्पणी की गई है। इसी प्रकार दूसरे भाग में लोगों को क्रूर और भ्रष्टाचारी कर्मचारियों से अपना काम निकलवाने के लिए एकदम बेहया बन जाने की सलाह दी गई है। यह परामर्श कदापि गंभीर ढंग से नहीं दिया गया है, अपितु केवल सरकारी दफ़्तरशाही और उसकी दीर्घसूत्री कार्य–प्रणाली को व्यंग्य–विद्रूप का निशाना ही बनाया गया है। यह जनसाधारण के लिए किसी भी स्थिति में एक अनुकरणीय आदर्श के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

व्याख्या ः

बूढ़ा सरदार सड़क पर चलते हुए यद्यपि स्वगत संवाद में लीन नज़र आता है, तथापि वह अदृश्य रूप में व्याख्या की क्रूरता और अन्याय के शिकार लोगों को सम्बोधित करते हुए उनसे अपने ये अन्तिम शब्द कहता है।

वह कहता है कि यदि तुम लज्जा जैसे नैतिक और मानवीय मूल्यों के पूर्ण समर्थक बने रहना चाहते हो, तो तुम्हें अनेक बरस तक ऐसे दफ़्तरों से अपना काम निकलवाने के लिए निराश मुद्रा में मुख लटकाए हुए लम्बी–लम्बी पंक्तियों में खड़े हो कर व्यर्थ प्रतीक्षा–पत्र टंकित करवाते रहोगे। भूखे पेट रह कर केवल पानी ही पीते रहोगे। तुम्हें भी तुम्हारे प्रार्थना–पत्रों के बारे में प्रगति के बारे में पूछताछ करने पर केवल यही सरकारी तकियाक़लाम सुनाया जाता रहेगा कि सरकार वक़्त ले रही है।

यदि तुम सब लोग सरकार की इस ढकोसलेवाज़ी और छद्म तन्त्र का शिकार नहीं होना चाहते हो तो मेरी ही तरह से पूर्णतया निर्लज्ज बन जाओ, क्योंकि इस भ्रष्ट दफ़्तरशाही के क्षेत्र में निर्लज्जता ही कार्य–सिद्धि का एक मात्र बीज–यन्त्र है। निर्लज्ज हो कर ही कदाचित् तुम सरकारी अधिकारियों पर भौंक सकते हो – अर्थात् उप पर अपने मनोगत अथाह आक्रोश का प्रकाशन करके उन्हें अपना काम करने के लिए ठीक उसी प्रकार से बाध्य कर सकते हो, जिस प्रकार से मैंने किया है।

2.6.4.1 अन्य प्रमुख गद्यांश ः

3. अरे परमात्मा के हुक्म से आज......................................तो वाह गुरु का नाम ले कर..........

4. क्या महात्मा गांधी ने इसलिए.....................................मैं इन्सान नहीं कुत्ता हूँ.......

5. सौ मरले का एक गड्ढा......................................कुत्तों को उसमें बंद कर दे।

6. तेरी पुलिस मेरी बादशाही निकालेगी.................................तपेदिक का मरीज़ है।

7. दो साल से अर्ज़ी दे रखी है...वक़्त ले रही है।

8. मेरा केस मेरे पास..हुजूर में भेज दिया जाएगा।

2.6.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न ः

1. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी का कथासार (कथानक) लिख कर इस रचना की कथावस्तु (Plot) की भी समीक्षा करें।
2. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी के शीर्षक (नामकरण) के औचित्य या सार्थकता का तर्कसंगत विवेचन करें।
3. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी के कथ्य (प्रतिपाद्य, मूल संवोदना, उद्देश्य) पर विस्तार से प्रकाश डालें।
4. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी किस कोटि (श्रेणी, वर्ग) की कहानी है और इसमें श्री मोहन राकेश ने पंजाबी सभ्यता का कैसे चित्रण किया है ?
5. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी के बूढ़े कथानायक का चरित्र–चित्रण करें।
6. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी में दफ़्तरी परिवेश और वातावरण के यथार्थ उरेहन की विशेषताओं का विवेचन कीजिए।
7. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी की संवाद–योजना की विशेषताओं का उदाहरण–सहित खुलासा करें।
8. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी में दफ़्तरों में व्याप्त लालफ़ीताशाही या दीर्घसूत्री प्रवृत्ति का जो समाधान सुझाया गया है, उसके पक्ष अथवा विपक्ष में तर्कपूर्ण विवेचन कीजिए।
9. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी की भाषा–शैली की विशेषताओं का सोदाहरण विश्लेषण कीजिए।
10. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी की तात्त्विक समीक्षा करें।
11. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी एक चरित्र–प्रधान व्यंग्य–कथा है।' – इस कथन के औचित्य की पुष्टि करते हुए मूल्याकंन कीजिए।
12. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी को श्री मोहन राकेश की एक प्रतिनिधि कहानी मान कर उनकी कहानी–कला की प्रमुख विशेषताओं पर विचार करें।

पाठ संख्या ː 2.7 लेखिका ː डॉ॰ हरिसिमरन कौर

'सज़ा'
(मन्नू भण्डारी)

इकाई की रूप—रेखा ː

2.7.0 उद्देश्य

2.7.1 प्रस्तावना

2.7.2 मन्नू भण्डारी का जीवन—वृत्त

2.7.3 'सज़ा' कहानी की तात्विक समीक्षा

- कथावस्तु
- पात्रों का चरित्र—चित्रण
- संवाद—योजना
- देशकाल और वातावरण
- भाषा—शैली
- उद्देश्य

2.7.4 प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्याएँ

2.7.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न

2.7.0 उद्देश्य ː

विगत 20वीं शताब्दी के पाँचवें दशक से ले कर आज तक प्रतिष्ठित कथा—लेखिकाओं में मन्नू भण्डारी का नाम प्रथम पंक्ति में दर्ज़ किया जाता रहा है। इन्होंने प्रेमचन्दीय कथा—शैली और कथ्यगत वैविध्य की परम्परा को आगे बढ़ाया है। इनकी सभी कहानियों में सामाजिक सरोकार और समस्याओं का ताना—बाना गूँथा गया है। चूँकि इनकी कहानियों और उपन्यास कथा—तत्त्व अर्थात् घटनात्मकता का दामन निरन्तर थामा गया है, इसलिए इनमें एक ओर तो मोहन राकेश, यशपाल, कमलेश्वर आदि लब्धप्रतिष्ठ रचनाकारों की तरह परंपरा और भारतीय सभ्यता और संस्कृति का समर्थन मिलता है, दूसरी ओर बन्द दराज़ों का साथ, नई नौकरी, यही सच है, एखाने आकाश नाईं, आते—जाते यायावर, शायद जैसी कहानियों में आधुनिक भाव—बोध के स्वर मुखर हुए हैं। परम्परावादी कहानियों में अकेली, मज़दूरी, खोटे सिक्के जैसी प्रेमचन्दीय कथ्य और शिल्पगत बनावट वाली कहानियाँ कहीं जा सकती हैं। 'अकेली' कहानी पर तो मुंशी प्रेमचन्द की कहानी 'बूढ़ी काकी' की स्पष्ट छाप परिलक्षित होती है और काफ़ी सीमा तक उसके कथ्य से प्रेरित भी है।

बाल—मनोविज्ञान पर इनका उपन्यास 'आपका बंटी' बहुत चर्चित रहा है। इनके 'महाभोज' उपन्यास का नाट्य रूपान्तर अनेक स्थान पर भारत में मंचित किया जा चुका है। इसी प्रकार इनकी अकेली, चश्मे, त्रिशंकु जैसी कहानियों का भी मंचन सफलतापूर्वक किया जाता है। 'त्रिशंकु' को आधार बनाकर तो टी॰ वी॰ चलचित्र भी बनाया गया था। 'एखाने आकाश नाईं' कहानी के बंगला शीर्षक का अर्थ है, 'आकाश यही नहीं है'। इस कहानी को आधार बना कर प्रसिद्ध बंगाली चलचित्र—निर्देशक वासु चटर्जी ने 'जीना यहाँ' नाम से एक टेलीफ़िल्म बनाई थी, जिसमें मुख्य भूमिका शबाना आज़मी और अमोल पालेकर ने अभिनीत की थीं। इसी प्रकार इनकी सर्वाधिक प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक कहानी 'यही सच है' के आधार पर 'रजनीगन्धा' नाम से एक हिन्दी चलचित्र भी बनाया गया था। इन सभी उदाहरणों से इनकी रचनाओं

में विद्यमान नाटकीय तत्त्व, कौतूहलवर्द्धकता, सरलता, सरसता, सामाजिक सोद्देश्यता आदि गुणों के ही प्रमाण मिलते हैं। सन् 1966 ई॰ में इनका एक नाटक 'बिना दीवारों का घर' भी प्रकाशित हुआ था। ल्यो टाल्स्ताय की एक रूसी कहानी का अंग्रेज़ी अनुवाद '***God sees the truth but waits***', चाहे इसका हिन्दी अनुवाद 'भगवान् के घर देर है, अंधेर नहीं' कर दिया जाए, परन्तु एक अंग्रेज़ी सूक्ति है ः ***Justice delayed is justic denied.*** । मन्नू की कहानी 'सज़ा' में यह सूक्ति चरितार्थ होती है।

प्रस्तुत पाठ में छात्र जिन तथ्यों से परिचित हो सकेंगे, वे अग्रलिखित हैं :–

1. मन्नू भण्डारी का जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व।
2. 'सज़ा' कहानी की तात्त्विक समीक्षा ः कथावस्तु, पात्रों का चरित्र–चित्रण, संवाद–योजना, देशकाल और वातावरण, भाषा–शैली और उद्देश्य – इन सभी तत्त्वों की आलोचनात्मक विवेचना की जाएगी।
3. महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की व्याख्यायें।
4. अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न।

7.1 प्रस्तावना ः

मन्नू भण्डारी की कहानी 'सज़ा' भारतीय न्याय–प्रणाली में व्याप्त दीर्घसूत्री, अर्थाभावजन्य घ्झ्रुटन, निराशा, निर्विकतल्पता, भाग्यवाद, ज्योतिष जैसे अन्धविश्वासों में जनता की गहरी आस्था, आस्तिकता का पात्रों के क्रियाकलापों, घटनाओं आदि के माध्यम से चित्रण करती है। साथ ही यह ईश्वरीय न्याय पर भी एक बड़ा प्रश्न–चिह्न लगाए बिना नहीं रहती है।

मन्नू भण्डारी की कहानियों और उपन्यासों में बालकों, किशोरों और शिशुओं के मनों की गहराइयों में उतर कर उनके विचारों, चिन्तन, मनन, प्रतिक्रियाओं, अनुभवों, आशा–निराशा, सुख–दुःख आदि के चित्रण के प्रति विशेष रुचि दिखाई देती रही है। इस तरह मन्नू भण्डारी का रचना–संसार एक व्यापक परिधि तक फैला हुआ कहा जा सकता है। बच्चों से ले कर जवानों और बूढ़ों तक प्रत्येक अवस्था के पात्र उनके वर्ण्य विषय के धरातलों पर उतरते हैं। उन सबका चित्रण इतने सरल, सहज और स्वाभाविक ढंग से हुआ है कि वे हमें हाड़–मांस के जीते–जागते और देखे–भोगे व्यक्ति ही प्रतीत होते हैं। इनकी रचनाओं में 'भोगे हुए यथार्थ' की इसी अभिव्यक्ति को इनकी सफलता का आधार घोषित किया जा सकता है। कथा की प्रस्तुति का अनूठा शिल्प भी इनकी कहानी–कला का सर्वप्रमुख गुण ठहराया जा सकता है।

2.7.2 मन्नू भण्डारी का जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व

नई पीढ़ी की श्रेष्ठ कथा–लेखिकाओं में मन्नू भण्डारी का अपना एक विशिष्ट स्थान है। इनकी कहानियों में आधुनिक नारी के मानसिक द्वन्द्व, पारिवारिक संबंध और सामाजिक दायित्वों का बड़ी गहराई और मार्मिकता से चित्रण हुआ है। नारी–मनोविज्ञान को स्वानुभूति के रूप में ढाल कर पूर्ण हार्दिक संवेदनशीलता एवं सहजता के साथ श्रीमती मन्नू भण्डारी ने अपनी कहानियों में कुछ इस प्रकार से प्रस्तुत किया है कि वे अत्यन्त प्रभावशाली प्रतीत होती हैं। इनकी कहानियों में शिल्प की सफ़ाई और सादगी तो है ही, साथ–ही–साथ अभिव्यक्ति का इनका अपना एक निजी ढंग है। यह बात अलग है कि इनकी कहानियों में प्रत्येक पात्र के साथ सहानुभूति और भावुकता दिखाई देती है, जोकि नारी–सुलभ विशेषता है।

मन्नू भण्डारी का जीवन ः

मन्नू भण्डारी का प्रारम्भिक तथा पूरा नाम 'महेन्द्र कुमारी' है। घर के सदस्य उन्हें लाड़–प्यार से 'मन्नू' कह कर संबोधित किया करते थे। उन्हें 'महेन्द्र कुमारी' नाम नहीं जँचा, इसलिए फिर से उन्होंने अपना घरेलू नाम ही स्वीकार कर लिया। राजेन्द्र यादव को पति–रूप में प्राप्त करने के बाद भी उनका मोह उसी नाम से बना रहा। इस प्रकार 'महेन्द्र कुमारी' न तो 'महेन्द्र कुमारी' रही और न ही 'मन्नू' यादव ही बन सकीं। उन्हें तो केवल 'मन्नू भण्डारी' ही बनना था।

जन्म ः

श्रीमती मन्नू भण्डारी का जन्म 3 अप्रैल सन् 1931 ई॰ में मध्यप्रदेश के भानुपुरा नामक एक साधारण गाँव में हुआ था इनके पिता श्री सुखसम्पत राय एक प्रतिष्ठित विद्वान् थे। वे 'हिन्दी पारिभाषिक कोश' के आदि रचनाकार थे। उस कोश की रचना उन्होंने आठ भागों में की थी। बाद में उन्होंने 'विश्वकोश' का भी कार्य सम्पन्न किया। कठिन परिश्रम करने

के कारण वे कैंसर के शिकार हुए और फिर उसी कारण उनकी मृत्यु हो गई।

श्री सुखसम्पत राय मारवाड़ी होने के साथ ही पूरी तरह से मर्यादावादी और पुरातन संस्कारों के व्यक्ति थे। उन पर जातिगत संस्कार बहुत हद तक हावी थे। शायद इसी कारण उनकी सुपुत्री 'मन्नू' को उन्होंने राजेन्द्र यादव से विवाह करने की अनुमति प्रदान नहीं की। विवाह हो जाने के बाद भी वे उनसे मिल न सके।

श्री सुखसम्मत राय जी व्यक्तित्व के धनी और प्रभावशाली थे। साहित्य के साथ–साथ वे राजनीति में भी बहुत सक्रिय थे। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि इन्दौर कॉंग्रेस की स्थापना उन्हीं के घर पर हुई थी। जैन धर्मावलम्बी होने के बावजूद वे आर्य समाज से बहुत प्रभावित थे। उनमें राष्ट्रीय भावना कूट–कूट कर भरी हुई थी, इसीलिए वे परिवार से भी अधिक देश को प्रेम करते थे। मन्नू भण्डारी के व्यक्तित्व के विकास में उनके पिता का बहुत बड़ा हाथ रहा था।

श्रीमती अनूप कुँवारी मन्नू भण्डारी की माता थीं। ये पुराने विचारों की एक अनपढ़ महिला थीं। ये उदार मन की स्वामिनी थीं। शायद इसीलिए अपनी सुपुत्री की प्रसन्नता के लिए उन्होंने अन्तर जातीय विवाह के विषय में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप कभी नहीं किया। वे अपनी देवरानियों को अपनी छोटी बहनों के समान ही मानती थीं। मन्नू जी के मन पर मातृत्व की सहज सरलता, स्नेह और ममता का सघन प्रभाव अपनी माँ का ही पड़ा था।

प्रसन्न कुमार और बसन्त कुमार इनके दो भाई थे। स्नेहलता नवरत्नमल बोडिया और सुशीला पराक्रमसिंह भण्डारी उनकी दो बहनें थीं। मन्नू भण्डारी अपनी दूसरी बहन सुशीला जी के साथ कुछ दिनों तक कलकत्ता में भी रहीं।

शिक्षा ः

मन्नू भण्डारी की प्रारम्भिक शिक्षा 'सावित्री गर्ल्स हाई स्कूल, अजमेर' में हुई। सन् 1945 ई॰ में इन्होंने वहीं से इन्टरमीडिएट किया। उसके पश्चात् इन्होंने स्वतन्त्रता–आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। सन् 1949 ई में इन्होंने कलकत्ता से बी॰ ए॰ कक्षा पास की। बाद में इन्होंने काशी विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम॰ ए॰ किया।

अध्यापन–कार्य ः

सन् 1952 ई॰ से सन् 1961 ई॰ तक इन्होंने 'बालीगंज़ शिक्षा सदन विद्यालय' में अध्यापन–कार्य किया। वहीं पर विद्यालय के पुस्तकालय में इनकी पहली मुलाकात श्री राजेन्द्र यादव (उस समय शोध–छात्र) से हुई। उनकी प्रारंम्भिक चर्चा का विषय तो साहित्य–संसार ही था, परन्तु धीरे–धीरे जीवन की चर्चा की शुरुआत भी होने लगी।

विवाह ः

सन् 1959 ई॰ आपका विवाह राजेन्द्र यादव से हुआ। उनका यह एक अन्तर जातीय विवाह था।

सन्तान ः

सन् 1961 ई॰ में श्रीमती मन्नू भण्डारी माँ बनीं। इन्होंने एक पुत्री को जन्म दिया, जिसका नाम 'रचना' रखा गया। उसे घर के सभी सदस्य 'टिंकू' कह कर पुकारते थे। यह वर्ष मन्नू भण्डारी के लिए एक क्रान्तिकारी वर्ष सिद्ध हुआ। वे स्कूल की अध्यापकीय वृत्ति छोड़कर कॉलेज की प्राध्यापिका बन गईं। सन् 1961 ई॰ से ले कर सन् 1964 ई॰ तक वे कलकत्ता के 'रानी बिड़ला कॉलेज' में प्राध्यापन कार्य करती रहीं। इसके बाद सन् 1964 ई॰ में ही वे दिल्ली आ गईं तथा दिल्ली विश्वविद्यालय के एक प्रसिद्ध कॉलेज 'मिराण्डा हाऊस' में प्राध्यापिका नियुक्त हो गई। काफ़ी समय तक वे वहीं पर कार्यरत रहे।

पुरस्कार ः

वृत्ति से मन्नू भण्डारी अध्यायन और रुचि से कहानी, उपन्यास लिखना–पढ़ना अपना पवित्र कार्य समझती हैं। उनके 'महाभोज' नामक उपन्यास पर 'रामकुमार मुबालका' (ग्यारह हज़ार रुपये की नकद राशि का) पुरस्कार प्राप्त हुआ। यह उपन्यास सन् 1976–80 अवधि में प्रकाशित एक सर्वश्रेष्ठ कृति स्वीकार की गई। यही उपन्यास उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा छह हज़ार रुपये की नकद राशि के रूप में पुरस्कृत हआ। सन् 1980–81 ई॰ के अन्तर्गत केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय (शिक्षा और संस्कृति मंत्रालय) की ओर से 'अहिन्दीभाषी क्षेत्र की हिन्दी लेखिका' के रूप में सम्मानित की गई। शिमला के 'आल इण्डिया आर्टिस्ट्स एसोसियेशन' द्वारा 'अखिल भारतीय बलराज साहनी स्मृति साहित्य–प्रतियोगिता' में उन्हें सन् 1982–83 वर्ष का स्वाभिमान और सम्मान का जीवन जीने में अधिक विश्वास रखती हैं। सन् 1976 ई॰ में आपात्काल के दौरान इन्होंने 'पद्मश्री' तथा 'साहित्य कला–परिषद्' द्वारा प्रस्तावित पुरस्कार लेने से इन्कार कर

दिया।

मन्नू भण्डारी का व्यक्तित्व ः

श्रीमती मन्नू भण्डारी ने अपनी सृजन–प्रतिभा के बल पर हिन्दी के आधुनिक कथाकारों के बीच अपनी एक गहरी पहचान बना ली है। मौलिक लेखन के कारण उन्हें अपनी सृजन–प्रक्रिया के सन्दर्भ में अनेक प्रकार की जटिल मनःस्थितियों से हो कर गुज़रना पड़ता है। एक स्थान पर वे लिखतीं हैं, "मेरे लिए लिखना दो तरह का होता है – एक वह जो काफ़ी लम्बे अन्तराल के बाद ही सम्भव हो पाता है। दूसरा, वह जो बिना काग़ज़ के दैनन्दिन कामों के साथ–साथ 'बैक ग्राउण्ड म्यूजिक' की तरह मन की परतों पर निरन्तर ही चलता रहता है। बाहर वालों के लिए महत्त्वपूर्ण वह है, जो काग़ज़ पर लिखा गया और उन तक पहुँच गया, लेकिन मेरे लिए तो मेरा 'मानसिक लेखन' ही महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि उसके दौरान ही 'रॉ मैटिरियल' का वह भण्डार जमा होता है, जिसमें से कुछ चीज़ें चुनकर उन्हें काट–छाँट और तराश कर तैयार माल की तरह मैं बाहर ला पाती हूँ।"

इस प्रकार श्रीमती मन्नू भण्डारी ने 'मानसिकता' को लेखन–प्रक्रिया में सबसे प्रमुख और अनवार्य तत्त्व के रूप में स्वीकार और ग्रहण किया है। पहले बाहरी संसार की संवेदना से प्रभावित होना और बाद में मन के भीतर उनका उद्वेलन कोरे विस्फोट वास्तव में चिन्तन और अनुभूति के टकराव का विस्फोट होता है। इसी को दृष्टि में रखते हुए राजेन्द्र यादव ने कहा है, "मन्नू के दिमाग़ में 'प्लॉट' मौखिक और सशक्त आते हैं।"

मन्नू भण्डारी का कृतित्व ः

मन्नू भण्डारी सृजन–चेतना की धनी हैं। इन्होंने अनेक मौलिक रचनाओं का सृजन किया है। इनकी रचनाओं पर इनके व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट रूप में दिखाई पड़ती है, क्योंकि ये रचनाएँ सधी हुई कलाकार की अमूल्य निधि हैं। मन्नू भण्डारी ने कहानी, उपन्यास और नाटक विधा को अपनी रचनाओं के माध्यम से विकसित करने का प्रयास किया है। इनकी कुल रचनाएँ इस प्रकार हैं ः –

(क) कहानी–संग्रह ः

1. मैं हार गई (सन् 1957 ई॰)
2. तीन निगाहों की एक तस्वीर (सन् 1959 ई॰)
3. यही सच है (सन् 1966 ई॰)
4. एक प्लेट सैलाव (सन् 1968 ई॰)
5. त्रिशंकु (सन् 1978 ई॰)
6. आँखों देखा झूठ (बाल–कहानियाँ) (सन् 1976 ई॰)

(ख) नाटक–साहित्य ः

1. बिना दीवारों का घर (सन् 1966 ई॰)
2. महाभोज (नाट्य–रूपान्तर) (सन् 1983 ई॰)

(ग) उपन्यास ः

1. एक इंच मुसकान (सहयोगी उपन्यास) (सन् 1961 ई॰)
2. आपका बंटी (सन् 1971 ई॰)
3. स्वामी (सन् 1982 ई॰)
4. महाभोज (सन् 1976 ई॰)
5. कलावा (बाल–उपन्यास) (सन् 1971 ई॰)

(घ) मन्नू भण्डारी की कहानियों के ये **तीन** संग्रह भी प्रकाशित हो चुके हैं ः–

1. श्रेष्ठ कहानियाँ (सन् 1969 ई॰)
2. मेरी प्रिय कहानियाँ (सन् 1979 ई॰)
3. सप्तपर्णा (सन् 1982 ई॰)

2.7.3 'सज़ा' कहानी की तात्त्विक समीक्षा

कथावस्तु ः

मन्नू भण्डारी की 'सज़ा' शीर्षक कहानी एक सामाजिक और प्रशासनिक व्यंग्य–कथा है। इसमें सीधी सरल कथावस्तु के माध्यम से ऐसे मध्यवर्गीय परिवार की वह यातना वर्णित की गइ है, जोकि घर के मुख्य सदस्य दिनेश पर (आशा के पिता) पर लगे चोरी के झूठे आरोप से मुक्त करवाने के लिए साल भर मुकद्दमेबाज़ी की लम्बी अवधि में घर के सभी सदस्यों को भोगनी पड़ती है।

कहानी के आरम्भ में कथा–नायिका आशा बताती है कि उसके जेल में बंद पप्पा (पिता दिनेश) ने उसके चाचा उमेश को एक पोस्टकार्ड द्वारा सूचित किया है कि 16 अप्रैल को फ़ैसले की तारीख़ पड़ी है। इस बार निश्चय पहले की तरह स्थगित न हो कर हो ही जाने की पूरी उम्मीद है। पत्र में आशा या मुन्नू के भाई के लिए प्यार या एक भी पंक्ति न लिखी पा कर आशा को बहुत निराशा होती है। कलकत्ता के कान्त मामा को भी फ़ैसला हो जाने का विश्वास था। अब वह पाँच किदन और प्रतीक्षा करेगी।

आशा के अनुसार उसके पप्पा और अम्मा उसे अभी बच्ची ही समझते थे, जबकि वह 9वीं कक्षा की परीक्षा दे चुकी है। वह सोचती है कि उसके पप्पा पहले से बदल चुके हैं। सभी लोग परिवार के ग्रह आजकल बिगड़े होने की बात ही किया करते हैं। उसके स्थूल में सखियों उसके पिता को ले कर जो हमदर्दी जतलाया करती हैं, वह हमदर्दी कम और निंदा अधिक होती है यथा, "हाय–हाय बेचारी के पिता को जेल हो गई ? तभी ठाठ थे आशा जी के।"

आशा का जी करता कि वह पापा को निरपराध ठहराती हुई ग्रह बिगड़े होने की बात कहे और रघुराजा राम और पाण्डवों पर आए संकटों का हवाला इे। इंग्लैंड से लौटकर कान्त मामा ने आ कर आशा के बाबा (दादा) से कहा कि आज के ज़माने में गुनाहगार तो अपने को साफ़ बचा कर ले जाते हैं, जबकि उनके भानजे दिनेश बिना कोई गड़गड़ किउ ही जेल भोग रहे हैं, क्योंकि ये क़ानून के छक्के–पंजे बिल्कुल नहीं जानते हैं।

कान्त मामा दौड़–धूप करके दिनेश की हाई कोर्ट की अपील मंजूर करवा लेते हैं। पापा लेज से 25 दिनों बाद धूप में आ छूट कर घर में आ कर अपने को एक कमरे में बंद कर लेते हैं। आशा और मुन्नू को प्यार करना तो दूर, वे इनकी ओर ताकते तक नहीं हैं। दादी को आशा की माँ कहती है कि आप मुन्नू को अपने साथ गाँव ही लेती लायें, क्योंकि यहाँ तो अब उसकी फ़ीस तक जुटाना भी भारी पड़ेगा। यदि आशा का फ़ाइनल साल न होता, तो उसे भी वे उमेश चाचा के घर भेज देती।

आशा को अम्मा की बात सुन कर मुन्नू की चिन्ता सताने लगती है, क्योंकि लीला चाची अत्यंत कठोर स्वभाव की थीं। मुन्नू के आते समय पप्पा ने उसे अपने सीने से लगा कर प्यार किया।

जुलाई में बाबा के पत्र से पता चला कि गाँव के छोटे–से साधारण स्कूल में मुन्नू को छठवीं कक्षा में भरती करवा दिया गया है। उन्होंने स्वयं 25 हज़ार वेतन पर एक दूकान में हिसाब लिखने का काम आरम्भ कर दिया है। वे अपना वेतना भेज दिया करेंगे। उमेश चाचा जी भी 50 रुपये भेजेगे। सो, यही 15 रुपये अम्मा को घर चलाना होगा।

पापा को नौकरी से संस्पेंड हुए दो साल तीन महीने हो गए थे। इस अवधि में बैंक में जमा सारा रुपया ख़र्च हो चुका था और अम्मा के सभी गहने तक बिक चुके थे।

आशा वकीलों को लुटेरे समझने लगती है। इससे तो अच्छा था पप्पा सचमुच ही आफ़िस का रुपया मार लेते। इस तरह से मुन्नू तो कम–से–कम यहीं घर पर ही रखा जा सकता था। इस सड़ी गर्मी में घर में एक पँखा भी रखा जा सकता था। ईमानदारी करके ही कौन बड़ा सुख मिल रहा है।

एक दिन अम्मा ने खीझ में आशा को ज़रा–सी बात पर पीट दिया, तो उसे चोट से अधिक इस बात का दुःख हुआ कि पप्पा उसे चुपचाप बैठे पिटते हुए ताकते रहे और उन्होंने न तो अम्मा को रोका, न ही कुछ कहा। वह भगवान् से प्रार्थना करती थी कि वे पप्पा को पहले जैसा कर दें, चाहे उन्हें दूसरे सब दुःख दें।

सुनवाई की पहली तारीख़ छह महीने बाद की पड़ी थी। कान्ता मामा की जल्दी सुनवाई करवाने की सभी कोशिशें बेकार सिद्ध हुई थीं। अम्मा को भी राजयक्ष्मा (टी॰ वी॰) जैसा ही कोई रोग हो गया था। उधर हिसाब में भूल के कारण बाबा की नौकरी छूट गई और उन्होंने आगे अपनी पैंशन के 25 रुपयों में से प्रति मास केवल 15 रुपये ही भेजने की

बात सूचित की थी। पत्रान्त में उन्होंने पुरानी कहावत दुहराई थी, 'भगवान् के घर देर हो सकती है, अंधेर नहीं।'

आशा मेट्रिक की परीक्षा में सैकिण्ड डिवीजन से उत्तीर्ण हो गई थी, परन्तु घर में किसी को भी खुशी न हुई। चूँकि गाँव का स्कूल भी मिडिल तक ही था, इसलिए दादा जी ने उसे उमेश चाचा के पास भेज दिया। अम्मा लीला चाची के कठोर स्वभाव की बात कह–कह कर रोती–कल्पती रहती थी। खीझ कर वह आशा को भी वहीं भेजने की बात कह कर फूट–फूट कर रोने लगी। फिर भी वहाँ जा कर आशा कम–से–कम मुन्नू भैया को गोद का सुख तो दे सकेगी। फिर अम्मा उमेश चाचा को यह लिखवाना चाहती थीं कि बच्चों पर होने वाले ख़र्च को वे हम पर कर्ज़ा समझें, जिसकी एक–एक पाई भविष्य में अच्छे दिन आने पर वे चुराने के लिए वचन देती है। बस, वे हमारे बच्चों पर थोड़ा रहम करें और पत्नी लीला को भी थोड़ा समझा है।

कान्त मामा ने अम्मा को इलाज के लिए इलाहाबाद भेज दिया था। उन्हें पता था कि अम्मा रोग का यहाँ डॉक्टर से इसलिए इलाज नहीं करवाती थीं, क्योंकि वे दवाओं, टॉनिक, फल आदि के ख़र्च के लिए रुपये कहाँ से लायेंगी।

चाची को आशा का अपने यहाँ आना अच्छा न लगा था। मुन्नू उनके साल भर के बच्चे बिट्टू को सारा दिन गोद में उठा कर खिलाता रहता था, इसी कारण वह कक्षा में फ़ेल हो कर 'प्रमोट' हुआ था। आशा उसे उनके बिस्तर और पम्मी दोनों बच्चों की ही तरह से 'बुढ़िया के बाल' खिलाने का आश्वासन देती।

वह सोचती कि उसके जैसे बड़े बच्चे तो वह सारा दुःख समझ और सह सकते हैं, परन्तु छोटा मुन्नू समझ लेने पर भी भला सह कैसे सकता है ?

अब आशा ने कॉलेज में प्रवेश न लेने का संकल्प किया और मुन्नू की सुरक्षा के लिए घर का सारा कामकाज करके चाची को प्रसन्न रखने का निश्चय कर लिया। दोनों समय का भोजन भी वही बनाया करती थी। उसे याद आता कि पापा उसे डॉक्टर बनाने और विदेश भेजने की बात किया करते थे। वे उससे यह भटियारख़ाना करवा कर उसकी सारी ज़िन्दगी ख़राब न करने की बात कहा करते थे।

आशा से चाची का पिता पर यह आरोप न सहा गया कि उन्होंने हिसाब में बीस हज़ार रुपये उड़ा लिए थे और अब वे सब उन का खून–चूस रहे हैं चाची कहतीं, "ये हमारे बड़े हैं, लानत है ऐसे बड़प्पन पर।"

31 तिथि को पति से वेतन लेते समय चाची लीला ने चाचा उमेश से कहा कि वे पप्पा को लिख दें कि आगे से वे 50 रुपये मासिक न भेज सकेंगे। इस महँगाई में उनको दो बच्चों (आशा, मुन्नू) को पालना ही उन्हें बेहद भारी पड़ रहा है, फिर उनके अपने बच्चे (टिल्लू, पम्मी, बिट्टू) भी तो हैं। उनके यहाँ कौन–सी खान गड़ी धरी है ?"

अब आशा को यह चिन्ता सताने लगी कि चाचा के रुपये न भेजने के कारण अब घर 15 रुपये मास की राशि से कैसे चला करेगा ? उसे रात भर सपने में पप्पा–अम्मा रोते हुए दीख पड़े। कान्त मामा के पत्र से पता चला कि इस महीने के अन्म में सुनवाई की तीसरी तारीख़ पड़ी है। पप्पा उधर अलागढ़ में मज़दूरों की एक बस्ती में रहने को विवश थे वे इस बार अवश्य छूट जाने की आशा रखे हुए थे और सज़ा होने क्या–क्या करना होगा – के बारे में कहने लगते, तो अम्मा तुरन्त 'भगवान् के घर देर.......' वाली दादा जी की कहावत दुहरा कर उन्हें ऐसी बुरी बात मुँह से निकालने के लिए डाँट देती।

मार्च में चौथी सुनवाई होनी थी। कान्त मामा को फ़ैसले पक्ष में होने का विश्वास था। इधर आशा भगवान् से मन–ही–मन यह प्रार्थना करती कि तुमने देर तो बहुत कर दी, परन्तु अब अंधेर मत करना। उसी का चिन्तन था, "यों यह देर भी अंधेर से कम नहीं, पर और अंधेर मत करना।'

चाची ने मुन्नू को फ़ेल हो कर प्रमोट होने पर कड़ी डाँट पिलाई। आशा चाची से कहना चाहती थी कि भैय्या सारा दिन तो बिट्टू को गोद में खिलाता और बाजक्षर के पच्चीस चक्कर लगाया करता है। मुन्नू चिढ़ाने वाले टिल्लू पर हाथ उठाते–उठाते रुक जाता, तो आशा को उसकी सहनशीलता देख कर भी अधिक कष्ट होता था।

मम्मा जब अपने पत्र में 'धीरे–धीरे ठीक होने' की बात लिखी तो आशा को वह सब झूठ ही लगा करता था। पप्पा ने अवश्य पत्र में पहली बार लिखा था कि वे कान्त मामा (साले) को उन्हें चाचा के घर से ले जाने की बात लिखेंगे।

कथान्त में सवेरे 10 बजे मुकद्दमें का अन्तिम फ़ैसला होने की बात कही गई है। आशा ने लगभग सभी को रोते हुए देखा। दादी ने उसे यह कह कर आश्वस्त किया कि वे रात–दिन भगवान् से प्रार्थना किया करती है और अब

मुन्नू पप्पा के ही पास रहा करेगा। यह सुन कर मुन्नू ने पुराने दिनों की तरह टिल्लू को हरेक चीज़ में पछाड़ देने की डींग हाँकी और आशा ने उसे पहली बार उसके अस्ली रूप में देखा। फिर भी अब मुन्नू में पहले वाली बाल–सुलभ ईर्ष्या और प्रतिस्पर्द्धा की भावना न रही थी।

अदालत में आशा को जज साहब का केवल यही एक वाक्य समझ में आया, "मुलज़िम को रिहा कियसा जाता है।" सुन कर वह मुन्नू का हाथ हवा में उछाल कर चीख़ पड़ी।" मुन्नू पप्पा रिहा हो गए............रिहा हो गये।"

दादा, बाबा फूट–फूट कर रो पड़े। घर लौट कर दादा ने वही कहावत दुहराई, परन्तु पप्पा के चेहरे पर खुशी के स्थान पर भवहीनता, निस्तेजता का कोई कारण आशा को समझ में न आ सका। वह उसने चिपटती हुई कहती है, "पप्पा, आप बरी हो गए ! सुनते हैं, आप को सज़ा नहीं हुई.............सज़ा नहीं हुई आपको।"

इस नाटकीय वाक्य के बाद भी आशा को लगता है मानो उन्हें विश्वास ही न हो कि उन्हें सज़ा नहीं हुई है।

इस प्रकार कहानी का शीर्षक व्यंग्यपूर्ण कहा जा सकता है।

पात्रों का चरित्र–चित्रण ः

'सज़ा' कहानी में प्रमुख पात्र तो कथावक्त्री, नायिका आशा और उसकी अम्मा (शारदा) ही है। पप्पा (पिता दिनेश), चाचा (उमेश), चाची (लीला), दादी, मामा (कान्त) आदि तो गौण पात्र ही हैं। वैसे गौण पात्रों ने मुख्य पात्रों के चरित्र–विकास में पर्याप्त सहायता की है।

कथा–नायिका आशा के चरित्र की प्रमुख विशेषतायें और स्वभावगत प्रवृत्तियाँ इस प्रकार हैं – कष्ट–सहिष्णुता, मातृ–पितृ–भाव–प्रेम, धीरता, स्पष्टवादिता, सत्यवादिता, आस्तिकता, ज्योतिष में आस्था, व्यंग्यपरकता, भारतीय न्याय–प्रणाली में अनास्था, त्यागशीलता, सहृदयता, दूरदर्शिता, संवेदनशीलता, करुणा, भावुकता, मनौवैज्ञानिक सूझ–बूझ, दार्शनिकता, चिन्तनशीलता, तर्कशीलता इत्यादि।

अम्मां शारदा की चरित्रगत विशेषतायें इस प्रकार हैं ः – पातिव्रत धर्म–पालन, आशावादिता, लोक–मर्यादा की चिन्ता, धीरता, चिड़चिड़ापन, मितभाषिता, पुत्र–पुत्री के प्रति वत्सलता, आस्तिकता, दूरदर्शिता, संवेदनशीलता, करुणा इत्यादि।

लेखिका ने स्वयं ही हस्तक्षेप करके कहानी के बीच–बीच में छोटे–बड़े पात्रों के चरित्रों की रेखायें उभारी हैं। यथा कथावक्त्री और नायिका आशा का यह चिन्तन–मनन लेखिका की सिद्धहस्त लेखनी पर ही मुहर लगाता है ः–

1. "हे भगवान्, सब दुःख दो, पर मेरे पप्पा को पहले जैसा कर दो। वह पहले की ही तरह काम करेंगे, तो मैं सब कुछ सह लूँगी।"

2. उनका यह चिन्तन द्रष्टव्य है ः– "मैं कॉलेज नहीं जाऊँगी। घर का सारा काम मैं करूँगी, जिससे चाची को पूरा आराम मिले और उनका गुस्सा ठण्डा रहे। चाची कुछ भी कहेंगी, तो चूँ तक नहीं करूँगी। वह प्रसन्न रहेंगी, तो मुन्नू सुरक्षित रहेगा। मुन्नू को रात में बैठ कर पढ़ाया करूँगी।"

यहाँ आशा अपनी परिस्थितियो से जो बिना शर्त पूर्ण समझौता कर लेती है, वह वास्तव में असमय या समय से पहले ही उसके स्वभाव में आ चुकी बौद्धिक प्रौढ़ता का ही प्रयाण है। प्रौढ़ता के संबंध में एक अंग्रेज़ी सूक्ति भी है ः ***What is Maturity ? Maturity is reconciliation with the inevitability.*** – अर्थात् 'प्रौढ़ता' क्या है ? अनिवार्यता के साथ समझौता करने का नाम ही 'प्रौढ़ता' है।

3. आशा के अन्तर्द्वन्द्व को लेखिका ने यों शब्दबद्ध किया है, "जाते–जाते मुन्नू ने एक बार चिढ़ाते हुए टिल्लू को ज़रुर जलती आँखों से देखा था लगा, उठा कर एक हाथ मार देगा; पर न वह लौटा, न कुछ बोला ही। कैसा हो गया है मुन्नू कितना सहनशील ? चुपचाप सहने का उपदेश उसे मैं ही दिया करती थी। पर अब वह यों सह जाता है, तो सबसे ज़्यादा कष्ट मुझे ही होता है, पर कोई उपाय भी तो नहीं था।

4. इसी प्रकार इस गद्यांश से आशा के मामा कान्त के व्यक्तित्व का पूरा रूपाकार खड़ा हो जाता है, "कितना बिड़ै थे बाबा और चाचा जी पर, कि यह सब हो कैसे गया ? आज के ज़माने में तो गुनहगार अपने को साफ़ बचा कर ले जाते हैं। लाखों हज़म करके मूँछों पर ताव देते घूमते हैं। फ़ाइलें–की–फ़ाइलें ग़ायब करवा देते हैं। और एक ये हैं कि बिना गड़बड़ किए जेल भोग रहे हैं।"

इस प्रकार लेखकीय हस्तक्षेप के द्वारा सीधे ही विभिन्न पात्रों के चरित्रों का पर्याप्त विकास किया गया है। आशा,

उसकी माँ शारदा आदि सभी पात्र स्थिर (Flat) हैं, गतिशील (Round) नहीं। सभी पात्र वर्गीय या प्रतिनिधि चरित्र (Typical Characters) ठहरते हैं।

इस प्रकार पात्रों का शील–निरूपण और चरित्र–चित्रण अत्यन्त स्वाभाविक और घटना, स्थिति, मनःस्थिति आदि के अनुरूप ढला होने के कारण सुगठित माना जाएगा।

संवाद–योजना ः

इस कहानी में संवाद सुदीर्घ न हो कर अत्यन्त संक्षिप्त, सुनियोजित और स्वभावसूचक हैं। उनमें नपी–तुली शब्दावली और पात्रों की शिक्षा, पद, सामाजिक स्तर के अनुकूल भाषा का प्रयोग हुआ है। कुछ निदर्शन प्रस्तुत हैं ः–

1. अन्य और आत्म चरित्र–चित्रण ः

चाचा और चाची दोनों के स्वभाव क्रमशः कोमल और कठोर हैं। इन दोनों की स्वभावगत विषमता इनके संक्षिप्त कथनों में यों प्रतिबिम्बित होती हैं यथा आशा के श्रम के सम्बन्ध में चाचा जी उसकी यों प्रशंसा करते थे, "तुम तो बड़ी होशियार हो, आशा, इतना काम कर लेती हो।" यह सुन कर चाची तुरन्त कहती, "मैं जब इतनी बड़ी थी, तो बारह जनों के कुनवे को सँभालती थी। आध–आध मन के पापड़–मंगोड़ी करती थी।"

यहाँ पहले एक पात्र द्वारा अन्य पात्र के चरित्र–चित्रण की शैली है। फिर दूसरे कथन में पात्र द्वारा आत्म चरित्र–चित्रण की शैली।

2. पात्र द्वारा समूह पात्रों का चरित्र–चित्रण ः

कान्त मामा निरपराध भानजे दिनेश के सन्दर्भ में इस युग में लोगों की निष्ठाहीनता और दूषित न्याय–व्यवस्था के भागीदारों पर कटाक्ष करते हुए आशा के दादा से कहते हैं, "आज के ज़माने में तो गनहगार अपने को साफ़ बचा कर ले जाते हैं। लाखों हज़म करके मूँछों पर ताव देते घूमते हैं। फ़ाइलें–की–फ़ाइलें गायब करवा देते हैं। और एक ये हैं कि बिना गड़गड़ किए जेल भोग रहे हैं।"

3. पत्र द्वारा पात्र का चरित्र–चित्रण ः

बाबा (आशा के दादा) के इस संक्षिप्त पत्र से उनकी सत्यवादिता, निर्धनता, स्पष्टभाषिता, परोपदेशकारिता, धार्मिकता, आशावादिता आदि स्वभावगत विशेषताओं का एक साथ उद्घाटन देखा जा सकता है, "हिसाब में कुछ ऐसी भूलें हुईं हैं कि वह काम चल गया। अब तो पचास रुपये की पेंशन में से किसी तरह पन्द्रह रुपये ही भेज सकूँगा। हिम्मत रखना बेटा, बुरे दिन आते हैं तो सब तरफ़ से आते हैं। पर ये दिन फिरेंगे ज़रुर। भगवान् के घर देर हो सकती है, अंधेर नहीं।"

4. पात्र के कथन द्वारा जीवन-दर्शन और व्यंग्यपरकता ः

कथा–नायिका आशा यद्यपि आस्तिक और धर्मनिष्ठ है, तथापि पिता का मुकद्दमा लम्बा खिंच जाने के कारण वह ईश्वरीय न्याय और लौकिक न्याय दोनों पर ही प्रश्न–चिह्न लगाती हुई मन में सोचती है, "मैं बैठी–बैठी दिल गिनती। पप्पा को सस्पेंड हुए चार साल हो गए। इन चार सालों में क्या कुछ नहीं हुआ। भगवान् देर तो बहुत की, अब अंधेर मत करना। यों यह देर भी अंधेर से कम नहीं, पर और अंधेर मत करना !"

अन्तिम वाक्य पढ़ने से अंग्रेज़ी की यह सूक्ति तुलनीय हो जाती है। यह सूक्ति इस प्रश्न की प्रेरणा भी हो सकती है ः ***Justic delayed is justic denied.*** – अर्थात् "विलम्ब से हुआ न्याय एक प्रकार से न्याय का अस्वीकार ही हुआ करता है।"

5. संवाद में नाटकीय पुनरावृत्ति ः

कहीं–कहीं कथनों में शब्दों, वाक्यांशों और वाक्यों की सायास पुनरावृत्तिसक अद्भुत नाटकीयता का समावेश हो जाता है यथा ः –

1. चीख़ ही पड़ी, "मन्नू, पापा रिहा हो गए...............रिहा हो गए।"
2. "पप्पा आप बरी हो गए ! सुनते हैं, आपको सज़ा नहीं हुई..................सज़ा नहीं हुई आप को...........।"

समग्रतः इस कहानी के संवाद सरल, संक्षिप्त, व्यंजनापरक, नाटकीय, स्वभाव–प्रकाशक, चरित्रसूचक और पात्रानुकूल घोषित किए जा सकते हैं।

देशकाल और वातावरण ः

इस कहानी का घटना–केन्द्र अलीगढ़ ही रहा है। कहानी में कलकत्ता, इलाहाबाद, दिल्ली आदि अन्य महानगरों के नामों के भी उल्लेख हुए हैं। काल की सूचना–विषयक कुछेक उल्लेख अग्रलिखित हैं ः–

1. फ़ैसले की तारीख़ 16 अप्रैल पड़ी है....... *(चाचा के नाम पप्पा के पत्र मे सूचना)*
2. 16 अप्रैल, आज से 5 दिन बाद।
3. पच्चीस दिनों बाद पप्पा छूट कर आए।........पच्चीस दिनों से घर में मनहूसियत छाई हुई है।.......पच्चीस दिनों बाद घर में घुसे और प्यार करना तो दूर रहा, हमारी ओर देखा तक नहीं।
4. **शाम** को सब लोग ऊपर गए। *(दिन का आयाम)*
5. दूसरे दिन मामा जी और चाचा जी चले भी गए।
6. कोई महीने–भर बाद फिर हमारा घर रह गया था...........
7. जुलाई में बाबा की चिट्ठी आई।
8. पप्पा को संस्पेंड हुए दो साल महीने हुए।..........
9. दूसरी सुनवाई अप्रैल में हुई।
10. पूरा अगस्त बीत गया।
11. सितम्बर में कान्त मामा का पत्र आया..........
12. मार्च में चौथी सुनवाई भी हो गई।........
13. पप्पा को संस्पेण्ड हुए चार साल हो गए। इन चार सालों में क्या कुछ नहीं हुआ।
14. पर धीरज की अवधि खिचते–खिचते **एक साल** तक पहुँच गई।
15. कल सवेरे दस बजे फ़ैसला है।
16. शाम को दादी चाचा भी आ गए।
17. कल फ़ैसला है।
18. बारह बजे दादी और अम्मा ने रोते–रोते घर में प्रवेश किया।
19. सुनवाई की पहली तारीख़ ही छः महीने बाद की पड़ी थी।

अब देश अर्थात् स्थान–विषयक उल्लेख देखें ः–

1. वह (कान्त मामा) इंग्लैंड से जैसे ही लौटे, सीधे घर आ गए थे।
2. इंग्लैंड से लौट कर कान्त मामा अपने को बहुत समझने लगे।
3. ये सब लोग जल्दी–से–जल्दी अलीगढ़ चले जाएँ, तो अच्छा है।
4. अपनी कोठरी में और कोई कष्ट नहीं था........
5. मुन्नू गाँव में, पप्पा बरसाती में, मैं कोठरी में और अम्मा खाट पर........
6. गाँव में तो केवल मिडिल स्कूल ही था।
7. कान्त मामा अपने ही किसी काम से **दिल्ली** आये थे। लौटते समय **अलीगढ़** भी उतरे। अम्मा ने उन्हीं के साथ मुझे **इलाहाबाद** भेल दिया। कान्त मामा ने एक बार कहा ज़रुर था, "कलकत्ता भेज दो, वहाँ पढ़ लेगी।"
8. अलीगढ़ की गली–गली मुझे मालूम थी। यह तो मज़दूरों की बस्ती है। अंधेरी सीलन–भरी गलियाँ.........पास में बहते ना ले।
9. धर्मशाला में छोड़ कर मामा पप्पा को लेने चले गए।
10. मुन्नू दादी की खाट पर ही सो गया।
11. मैं भी कचहरी गई थी।
12. पप्पा कठघरे में खड़े थे।

काल और देश की ही तरह लेखिका वातावरण के यथार्थ चित्रण में भी सिद्धहस्त रही है। कुछेक निदर्शन अवलोकनीय हैं ः–

1. ग्रीष्म ऋतु का वर्णन प्रस्तुत है ः— "अपनी कोठरी में और कोई कष्ट नहीं था, पर भयंकर गर्मी के दिन और पंखा नहीं। रात तो जैसे–तैसे छत पर कट जाती, परन्तु दोपहर में तो छत पर बने ये कमरे भट्टी की तरह जलते थे।

2. पप्पा कठघरे में खड़े थे। हम कुर्सियों पर बैठे जज साहब के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। जज साहब आए तो बाबा ने आँखें मूँद ली। दादी का सिर नीचा था। वह ज़रुर मन–ही–मन प्रार्थना कर रही होंगी। मैं मुन्नू का हाथ कसकर दबाए बैठी थी और मुझे नग रहा था कि अब और देरी होगी, तो मेरी साँस भी घुट जाएगी।

इस उदाहरण से अदालत का घुटन–भरा वातावरण हमारे सामने चक्षु–मूर्त हो उठता है।

समग्रतः देशकाल और वातावरण के उरेहन की कसौटी पर भी यह कहानी खरी उतरती है।

भाषा–शैली ः

इस कहानी की भाषा सरल, सहज और पात्रानुकूल है। उसमें गद्य की समास और व्यास दोनों ही शैलियों के दर्शन होते हैं। यथा ः

1. समास–शैली ः

1. बिना अपराध किए भी बाबा अपराधी की भाँति चुपचाप सिर नीचा किए सब सुनते रहे। वह बेचारे क़ानून के छक्के पंजे क्या जानें ?

2. यों यह देर भी अंधेर से कम नहीं, पर और अंधेर मत करना।

2. व्यास–शैली ः

1. मैं जाऊँगी, ज़रुर जाऊँगी और मुन्नू को ले कर ही जाऊँगी।

2. यों घर वालों के साथ रोई मैं रोज़ ही थी; पर उस दिन पहली बार मेरा मन रोया था, अपनी परी समझ के साथ रोया था।

भाषा में प्रयुक्त शब्दों की कोटियों के उदाहरण अग्रलिखित हैं ः—

1. संस्कृत तत्सम शब्द ः

निश्चित, रूप, असुविधा, स्थगित, विषय, पक्ष, समय, भगवान्, प्रतीक्षा, ग्रह, दिन, दिन, सहन, अपराध, भाँति, व्यवहार, दुःख, दूर, ओर, भय, मन, मोह, तुरन्त, कारण, सप्ताह, वीर, सह, राजयक्ष्मा, तुरन्त, कुशल, पत्र, अवश्य, तपस्या, फल, विषय, कष्ट, उपाय, सहनशील, चिन्ता, आशीर्वाद, ज्ञान, ईर्ष्या, प्रतिस्पर्द्धा, आश्वस्त, भाव, प्रार्थना, प्रकार, विश्वास इत्यादि।

2. तद्भव शब्द ः

अप्रैल (अं॰ April), कुछ (सं॰ कश्चित्), काम (सं॰ कर्म), सब (सं॰ सर्व), साँस (सं॰ श्वास), बारह (सं॰ द्वाद्वश), लोग (सं॰ लोक), सिर (सं॰ शिर), घर (सं॰ गृह), बाहर (सं॰ बहिर), आज (सं॰ अद्य), बात (सं॰ वार्ता), मुँह (सं॰ मुख), कितना (सं॰ कियत्), रात (सं॰ रात्रि), गाँव (सं॰ ग्राम), गांठ (सं॰ ग्रन्थि), आँख (सं॰ अक्षि), बारिश (सं॰ वर्षातु), भीतर (सं॰ आभ्यन्तर), दूध (सं॰ दुग्ध), अगस्त (अं॰ August), सितम्बर (अं॰ September) इत्यादि।

3. देशज शब्द ः

छोटे, तांगे, कोठरी, तकिया, नौकरी, गहने, ठिठुरते, ठण्ड, चिट्ठी, बरसाती, खाट, पापड़, मंगोड़ी, भटियारखाना, आदत, अंगीठी, सीलन, कचहरी, कठघरे इत्यादि।

4. अरबी–फ़ारसी-उर्दू शब्द ः

क़िस्मत, ख़ास, ग़लत, मुलज़िम, रिहा, फ़ैसला, तारीख, साल, तरह, बदल, क़ानून, आदमी, उम्मीद, पैरबी, बदबूदार, इम्तहान, सज़ा, हमदर्दी, बेचारी, बिलकुल, गुनहगार, साफ़, शायद, मंजूर, ज़रा, प्यार, चीज़, ज़िद, हिम्मत, सकते, दरवाज़ा, परेशान, मत, रोज़, अजीब, गुस्सा, दुनिया, ज़्यादा, शर्म, कम, मामले, सीने, हमेशा, महीने, सामान, ख़ाली, साबित, हिसाब, खुश, शुरु, शरीर, कमर, शिकन, महीने, बावजूद, हालत, ज़रुरत, बुख़ार, जल्दी, वहम, होशियार, ज़िम्मे, लानत, साहब, रफ़्तार, ख़र्च इत्यादि।

5. अंग्रेज़ी शब्द ः

लाइन, कार्ड, स्कूल, केस, कॉलेज, जेल, हाईकोर्ट, अपील, फ़ीस, स्टेशन, बस, बैंक, पेन्शन, डॉक्टर, टॉनिक, रिज़ल्ट, फ़ेल, सस्पेंड, ऑफ़िस, फ़र्स्ट, प्रमोट इत्यादि।

6. ध्वन्यात्मक शब्द ः

टपक, सुन्न, जैसे शब्द विरल ही हैं।

7. मुहावरे ः

छक्के पंजे जानना, रुपया मार लेना, दिन फिरना, गाँठ बाँध लेना, मन मारना, हाथ उठ जाना, फूट–फूट कर रोना, हाथ लगाना, चूँ तक नहीं करना, टुकुर–टुकुर ताकना, अंधेर करना, खान गड़ना, टसुए बहाना, गुस्सा ठंडा रहना, मन लगाना इत्यादि।

8. कहावतें ः

1. भगवान् के घर देर हो सकती है, अँधेर नहीं।
2. बुरे दिन आते हैं, तो सब तरफ़ से आते हैं।

9. सूक्तियाँ ः

1. शायद बुरे दिनों में ही समझ बढ़ती है।
2. दुःख में हिम्मत रखने वाले ही सच्चे वीर होते हैं। हँसते–हँसते जो सारे दुःखों को झेल जाए, वही सच्चा पुरुष हो।
3. दुःख में कोई साथी नहीं होता।

इस आत्म–पृष्ठ या उत्तम पुरुष प्रधान शैली की कहानी में चरित्र–चित्रण की भी विभिन्न शैलियाँ व्यवहृत हुई हैं भाषा–शैली के निकष पर यह कहानी एक स्तरीय रचना ठहरती है।

उद्देश्य ः

मन्नू भण्डारी की अन्य कहानियों की भाँति यह भी एक सामाजिक सौद्दश्य कहानी कही जा सकती है। कथावक्त्री के पप्पा दिनेश पर बीस हज़ार रुपये की चोरी का मिथ्या आरोप लगा कर मुकद्दमा चलाया जाता है। उन्हें दो साल क़ैद की सज़ा हो जाती है। आशा के मामा कान्ता फ़ैसले से विरुद्ध हाई कोर्ट मे अपील करते हैं, जिसके मंजूर होने पर आशा के पिता ज़मानत पर छूट कर घर आ तो जाते हैं, परन्तु चुपचाप रहते हैं और लोक–निन्दा के भय से घर में बाहर नहीं निकलते हैं। इस बीच बैंक में जमा सारा धन ख़र्च हो चुका होता है और सभी गहने बिक जाते हैं। आशा और उसके छोटे भाई मुन्नू को भी अपने चाचा उमेश के घर जा कर चाची की घुड़कियाँ सहते हुए उनके टुकड़ों पर पलना पड़ता है। बीमार माँ को भी पति को छोड़ कर रोग के उपचार के जिए कलकत्ता में अपने मायके जाना पड़ता है।

अंत में पाया आरोप से बरी हो कर घर तो आ जाते हैं, परन्तु उनकी इस रिहाई की खुशी नहीं होती है।

इस प्रकार यह कहानी भारत की महँगी और दूषित न्याय–व्यवस्था पर एक गहरा कटाक्ष है, जिसके कारण देर से मिलने वाला न्याय भी न्याय की अपेक्षा अस्वीकार ही भासित होता है। अंग्रेज़ी सूक्ति भी है ः–

Justice delayed is justic denied.

यदि आशा के पिता सचमुच 20 हज़ार रुपये गबन करने के अपराधी होते, तो उनकी सज़ा केवल दो वर्ष तक ही होनी थी, परन्तु जज द्वारा निर्दोष क़रार दिए जाने पर उन्होंने लगभग पाँच साल की सज़ा काटी थी। इन वर्षों में उनका घर पूरी तरह से नष्ट–भ्रष्ट हो जाता है। कहानी में स्थितियों और मनःस्थितियों का अत्यंत कारुणिक चित्रण हुआ है। पात्रों में से अधिकतर की स्थिति हृदयबोधिनी रही है। कहानी का कथ्य अत्यंत यथार्थपरक होने के कारण रचना को सशक्त और स्तरीय बनाने में सहायक हुआ है।

2.7.4 महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्यायें

1. कितना बिगड़े थे बाबा..छक्के पंजे क्या जाने ?

प्रसंग ः

यह कथन मन्नू भण्डारी की कहानी 'सज़ा' में कथावक्त्री आशा के चिन्तन के अंगभूत है। यह कहानी डॉ॰

ईश्वर दास जौहर द्वारा सम्पादित 'सात कहानियाँ' नामक पाठ्य–पुस्तक में संकलित है, जोकि पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला की बी॰ ए॰ प्रथम वर्ष कक्षा के हिन्दी विषय के लिए निर्धारित है।

इस गद्यांश से पहले कथावक्त्री आशा अपने पिता दिनेश पर (बीस हज़ार रुपये की) चोरी के झूठे आरोप के कारण दो वर्ष की जेल की सज़ा काटने की बात की गई है। साथ ही आशा के माया कान्त के इंग्लैण्ड से लौटा कर सीधे घर चले जाने की सूचना दी गई है। यहाँ अपने साले (और आशा के पिता) को अपने पीछे जेल की सज़ा हो जाने पर उनके पिता (आशा के दादा) को डाँटने का बखान किया गया है।

व्याख्या ः

कान्त मामा आशा के बाबा और चाचा (उमेश) से क्रोधपूर्वक कहते हैं कि उनके पीछे यह सब कैसे घटित हासे गया है ? आज के इस बदले हुए युग में तो वास्तविक अपराधी जन क़ूनन के दण्ड से अपने को साफ़ बचा ले जाते हैं। वे लाखों रुपये की हेराफेरी करते हैं और फिर भी अपनी मूँछों पर ताव देते हुए निश्चिन्त घूमा करते हैं। वे दफ़्तरों से बेईमानी वाली फ़ाइलें लुप्त करवा दिया करते हैं। दूसरी ओर उनके साले दिनेश कोई भी बेईमानी किये बिना ही इस तरह से जेल का दण्ड भुगत रहे हैं।

इस प्रकार वे आशा के दादा पर बरसते चले जाते हैं। दादा भी किसी वास्तविक अपराधी की तरह चुपचाप सिर झुका कर उनकी भर्त्सनापूर्ण बातें सुनने रहते हैं, क्योंकि वे क़ानून के दाँव–पेंचों से बिल्कुल ही अनजान थे।

गद्य–सौष्ठव ः

इस गद्यांश में वक़्ता कान्त के क्रोध भाव की सुष्ठु अभिव्यक्ति हुई है। 'छक्के पंजे जानना' एक प्रचलित मुहावरा है। भाषा सरल, सहज और पात्रानुकूल है और मनोगत भावों के प्रकाशन में पूरी तरह सक्षम है।

2. मैं बैठी-बैठी दिन गिनती..अंधेर मत करना।

प्रसंग ः

यह गद्यांश मन्नू भण्डारी की कहानी 'सज़ा' के अन्तिम भाग से उद्धृत किया गया है। यह कहानी पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला की बी॰ ए॰ प्रथम वर्ष कक्षा के हिन्दी विषय के लिए निर्धारित पाठ्य–पुस्तक 'सात कहानियाँ' (सम्पादक ः डॉ॰ ईश्वर दास जौहर) में संकलित है। इन पंक्तियों से पहले कई वर्ष तक अदालत में आशा, कथावक्त्री के पिता दिनेश पर 20 हज़ार रुपये की चोरी के झूठे आरोप के मुकद्दमा चलने और बैंक में जमा सारा धन ख़र्च हो जाने और सभी गहने बिक जाने की करुण गाथा पुत्री आशा द्वारा सुनाई जाती है।

प्रस्तुत पंक्तियों में आशा सोच रही है कि चार वर्षों से नौकरी से निलम्बित पिता के कारण घर में बहुत बर्बादी हो चुकी है। सो, हे ईश्वर ! देर करने के बाद अब अदालत में पिता के विरोध में निर्णय न हो। ऐसा होने पर तो अंधेर ही हो जाएगा।

व्याख्या ः

आशा सोच रही है कि उसके पिता (दिनेश) को नौकरी से निलम्बित हुए लगभग चार वर्ष हो चुके हैं। इस लम्बी अवधि में उसके घर में क्या कुछ उथल–पुथल नहीं हुई है – अर्थात् बहृत हानि हो चुकी है। वह भगवान् से सम्बोधित हो कर यों याचना करती है कि तुमने अदालती निर्णय करवाने में देर तो बहुत कर दी है, परन्तु अब अंधेर मत करना। वैसे भी कहावत है कि भगवान् के घर देर है, अन्धेर नहीं। यह और बात है कि यह देर भी किसी रूप में अंधेर से कम कहाँ हैं ? फिर भी अब अंधेर अर्थात् अन्याय मत करना। कहने का अभिप्राय यह है कि अब तक आर्थिक और मानसिक दृष्टियों से पूरी तरह से टूट चुका उसका परिवार पिता के विरुद्ध क़ानूनी निर्णय हो जाने के आघात को किसी भी प्रकार से झेल नहीं पाएगा।

2.7.5 अभ्यास के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न ः

1. 'सज़ा' कहानी का कथासार (कथानक) लिख कर इस रचना की कथावस्तु (Plot) की भी समीक्षा करें।
2. 'सज़ा' कहानी के शीर्षक (नामकरण) के औचित्य या सार्थकता का तर्कसंगत विवेचन करें।
3. 'सज़ा' कहानी के कथ्य (प्रतिपाद्य, मूल संवोदना, उद्देश्य) पर विस्तार से प्रकाश डालें।

4. 'सज़ा' कहानी किस कोटि (श्रेणी, वर्ग) की कहानी है और इसमें मन्नू भण्डारी ने नायिका की यातना के किन कारणों का विश्लेषण किया है।
5. 'सज़ा' कहानी की नायिका आशा और उसकी माँ शारदा के चरित्र–चित्रण या स्वभाव की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
6. 'सज़ा' कहानी में नायक दिनेश के चरित्र की प्रमुख प्रवृत्तियाँ गिनायें।
7. 'सज़ा' कहानी की संवाद–योजना की समीक्षा करें।
8. 'सज़ा' कहानी में दफ़्तरों में नायिका वर्तमान न्याय–व्यवस्था पर कटाक्ष करते हुए अपने सारे परिवार की जिस यातना की व्यथा सुनाती है, उसका विस्तार से खुलासा करें।
9. 'सज़ा' कहानी की भाषा–शैली की विशेषताओं का सोदाहरण विश्लेषण कीजिए।
10. 'सज़ा' कहानी को मन्नू भण्डारी की एक प्रतिनिधि कहानी मान कर लेखिका की कहानी–कला पर एक लेख लिखें।
11. कहानी के तत्त्वों के आधार पर मन्नू भण्डारी की 'सज़ा' कहानी की समीक्षा प्रस्तुत करें।

अभ्यास के लिए 'सात कहानियाँ' कहानी-संग्रह से सम्बन्धित लघु प्रश्न

1. 'पूस की रात' कहानी में हल्कू अपने खेत को नील गायों द्वारा चरे जाने से क्यों नहीं बचाता है ?
2. 'पूस की रात' कहानी में कृषकों की किस समस्या का निरूपण हुआ है ?
3. 'देवरथ' कहानी की नायिका सुजाता अपने प्रेमी के विवाह–प्रस्ताव को क्यों अस्वीकार कर देती है ?
4. 'देवरथ' कहानी में किन्हीं दो पात्रों की चरित्रगत या स्वभावगत विशेषताएँ लिखें।
5. 'देवरथ' कहानी में किस धार्मिक सरोकार का निरूपण हुआ है, टिप्पणी करें।
6. ''प्रायश्चित्त' कहानी किस बात का उपहास करती है ?
7. 'प्रायश्चित्त' कहानी का कथ्य आज भी क्यों प्रासंगिक और समय–संगत है ?
8. 'प्रायश्चित्त' कहानी में रामू की पत्नी (बहू) और माँ के चरित्र और स्वभाव की विशेषताएँ बताइए।
9. 'खुदा का ख़ौफ़.... ' कहानी में सैनिक प्रशासन के निरूपण पर टिप्पणी करें।
10. 'खुदा का ख़ौफ़.... ' कहानी में किस मुख्य समस्या का प्रकाशन हुआ है ?
11. 'खुदा का ख़ौफ़.... ' कहानी के शीर्षक की नियोजना पर टिप्पणी करें।
12. 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' कहानी किस समस्या का चित्रण करती है ?
13. सुबोध ने नौकरी से क्यों त्याग–पत्र दे दिया था ?
14. सुबोध अपनी भूतपूर्व मंगेतर से किस 'आग' के लील लेने की बात कहता है ?
15. सुबोध और वृन्दा के चरित्रों की प्रमुख विशेषताएँ लिखें।
16. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी का नायक केवल एक व्यंग्य–चरित्र भर है, आदर्श अनुकरणीय पात्र नहीं।' – टिप्पणी करें।
17. 'बेहयाई हज़ार बरकत है' कथन ('परमात्मा का कुत्ता') की व्याख्या कीजिए।
18. 'प्यार से बड़ी एक और आग होती है.....।' कथन की व्याख्या करें।
19. 'परमात्मा का कुत्ता' दफ़्तरशाही की किन विकृतियों को उजागर करने में सफल रही है ?
20. 'सात कहानियाँ' कहानी–संकलन में आपको सबसे अधिक प्रभावशाली लगता है और क्यों ? बताइये।
22. उषा प्रियंवदा की कहानी में फूलों की उल्लेखगत आवृत्तियों से कलात्मकता क्यों खण्डित मानी जाएगी ?
23. किसी एक निर्धारित कहानीकार की रचनाओं के नामों का उल्लेख करें।
24. मन्नू भण्डारी की कहानी–कला की प्रमुख विशेषताओं पर टिप्पणी करें।
25. 'सज़ा' कहानी के शीर्षक की व्यंग्यपरकता पर टिप्पणी करें।
26. 'सज़ा' कहानी की नायिका आशा भगवान् से यह क्यों कहती है कि न्याय में देर तो तुमने की है, परन्तु अब और अंधेर मत करना ?
27. 'सज़ा' कहानी के अन्त में दिनेश जी के रिहा होने के निर्णय से किसी भी पारिवारिक सदस्य को ख़ास खुशी क्योंनहीं होती है ?

'कर्बला' नाटक का सार, समीक्षा और कथ्य

इकाई की रूपरेखा :

2.8.0 उद्देश्य
2.8.1 प्रस्तावना
2.8.2 कर्बला नाटक का सार
2.8.3 तत्त्वों के आधार पर कर्बला की समीक्षा
2.8.4 कथ्य अथवा उद्देश्य

2.8.0 उद्देश्य :

मुंशी प्रेमचन्द जी द्वारा रचित 'कर्बला' नाटक के प्रथम पाठ में विद्यार्थीगण नाटक के सार के साथ–साथ कर्बला की तत्त्वों के आधार पर समीक्षा और नाटक का कथ्य अथवा उद्देश्य भी जान सकेंगे। मुंशी प्रेमचन्द जी का जीवन परिचय आप उनकी कहानी 'पूस की रात' में से पढ़ सकते हैं, जो आपके पाठ्यक्रम में शामिल है।

2.8.1 प्रस्तावना :

'कर्बला' मुंशी जी का धार्मिक–ऐतिहासिक नाटक है। इसमें इस्लाम धर्म के संस्थापक हज़रत मुहम्मद के नवासे हज़रत हुसैन की शहीदी का सजीव और रोमांचक वर्णन है। नाटक में दर्शाया गया है कि उस समय निर्बलों और असहाय लोगों की मदद करने वालों को मुस्लिम क्रूर शासन अमानवीय यातनाएँ दे देकर कत्ल करवा दिया करते थे। कर्बला के मैदान पर लड़ा गया यह युद्ध इतिहास में बहुत महत्व रखता है।

2.8.2 'कर्बला' नाटक का सार :

मुंशी प्रेमचन्द जी द्वारा रचित नाटक 'कर्बला' एक धार्मिक नाटक है, जिसकी रचना 1924-1925 ई० में हुई। इसमें एक प्रसिद्ध घटना का वर्णन है, जो मुस्लिम इतिहास से संबंधित है। हज़रत मुहम्मद से संबंद्ध इस घटना में कल्पना का समावेश भी है। प्रेमचन्द जी ने नाटक में हिन्दू पात्रों के प्रवेश को ऐतिहासिक माना है। वे लिखते हैं – ''पाठक इसमें हिन्दुओं को प्रवेश करते देखकर चकित होंगे परन्तु वह हमारी कल्पना नहीं है, ऐतिहासिक घटना है। आर्य लोग वहाँ कैसे और कब पहुँचे, यह विवाद ग्रस्त है। कुछ लोगों का ख्याल है, महाभारत के बाद अश्वत्थामा के वंशधर वहाँ जा बसे थे। कुछ लोगों का यह भी मत है, ये लोग उन हिन्दुओं की सन्तान थे, जिन्हें सिकंदर यहाँ से कैद कर ले गया था। कुछ भी हो, ऐतिहासिक प्रमाण है कि कुछ हिन्दू भी हज़रत हुसैन के साथ कर्बला के संग्राम में सम्मिलित होकर वीरगति को प्राप्त हुए थे।''

हज़रत मुहम्मद की मृत्यु के बाद कुछ ऐसी परिस्थिति पैदा हुई कि खलीफ़ा का पद उनके चचेरे भाई और दामाद हज़रत अली को न मिलकर उमर फ़ारूक को मिला। हज़रत मुहम्मद ने स्वयं ही व्यवस्था की थी कि खलीफ़ा सर्व–सम्मति से चुना जाया करे और सर्व–सम्मति से उमर फ़ारूक चुने गए। उनके बाद अबूबकर चुने गए। अबूबकर के बाद यह पद उसमान को मिला। उसमान अपने कुटुंबवालों के साथ पक्षपात करते थे और उच्च राजकीय पद उन्हीं को दे रखे थे। उनकी इस अनीति से बिगड़कर कुछ लोगों ने उनकी हत्या कर डाली। उसमान के सम्बन्धियों को संदेह हुआ कि यह हत्या हज़रत अली की ही प्रेरणा से हुई है। अतएव उसमान के बाद अली खलीफ़ा तो हुए, किन्तु उसमान के एक सम्बन्धी ने जिसका नाम मुआबिआ था, और जो शाम–प्रान्त का सूबेदार था, अली को खलीफा स्वीकार नहीं किया। अली ने मुआबिआ को दण्ड

देने के लिए सेना नियुक्त की। लड़ाइयाँ हुई, किन्तु पांच वर्ष की लगातार लड़ाई के बाद अन्त को मुआबिआ की ही विजय हुई। हज़रत अली अपने प्रतिद्वंद्वी के समान कूटनीतिज्ञ न थे। वह अभी मुआबिआ को दबाने के लिए एक नई सेना संगठित करने की चिन्ता में ही थे कि एक हत्यारे ने उनका वध कर डाला।

मुआबिआ ने घोषणा की थी कि अपने बाद मैं अपने पुत्र को खलीफा नामजद न करूंगा, बल्कि हज़रत अली के ज्येष्ठ पुत्र हसन को खलीफा बनाऊँगा। किंतु जब इसका अंत–काल निकट आया, तो उसने अपने पुत्र यजीद को खलीफा बना दिया। हसन इसके पहले ही मर चुके थे। उनके छोटे भाई हज़रत हुसैन खिलाफत के उम्मीदवार थे, किंतु मुआबिआ ने यजीद को अपना उत्तराधिकारी बनाकर हुसैन को निराश कर दिया।

खलीफा हो जाने के बाद यजीद को सबसे अधिक भय हुसैन से था, क्योंकि हज़रत अली के बेटे और हज़रत के नवासे (दौहित्र) थे। उनकी माता का नाम फातिमा जोहरा था, जो मुसलिम विदुषियों में सबसे श्रेष्ठ थी। हुसैन बड़े विद्वान्, सच्चरित्र, शान्त–प्रकृति, नम्र, सहिष्णु, ज्ञानी, उदार और धार्मिक पुरुष थे। वह वीर थे, ऐसे वीर कि अरब में कोई उनका सानी न था। किन्तु वह राजनीतिक छल–प्रपंच और कुत्सित व्यवहारों से अपरिचित थे। यजीद इन सब बातों में निपुण था। उसने अपने पिता और मुआबिआ से कूटनीति की शिक्षा पाई थी। उसके गोत्र के सब लोग कूटनीति के पण्डित थे। धर्म को वे केवल स्वार्थ का एक साधन समझते थे। भोग–विलास और ऐश्वर्य में लिप्त रहते थे।

यजीद ने मदीने के सूबेदार को लिखा कि तुम हुसैन से मेरे नाम पर 'बैयत' अर्थात् उनसे मेरे खलीफा होने की शपथ लो। मतलब यह कि यह गुप्त नीति से उन्हें कत्ल करने का षड्यन्त्र रचने लगा। हुसैन ने बैयत लेने से इन्कार किया। यजीद ने समझ लिया कि हुसैन बगावत करना चाहते हैं, अतएव वह उसे लड़ने के लिए शक्ति–संचय करने लगा। कूफा–प्रान्त के लोगों को हुसैन से प्रेम था। वे उन्हीं को अपना खलीफ़ा बनाना चाहता था। यजीद को जब यह बात मालूम हुई, तो उसने कूफा के नेताओं को धमकाना और नाना प्रकार के कष्ट देना आरम्भ किया। कूफा निवासियों ने हुसैन के पस, जो उस समय मदीने से मक्के चले गए थे, संदेशा भेजा कि आप आकर हमें इस संकट से मुक्त कीजिए। हुसैन ने इस सन्देश का कुछ उत्तर न दिया, क्योंकि वह राज्य के लिए खून बहाना नहीं चाहते थे। इधर कूफा में हुसैन के प्रेमियों की संख्या बढ़ने लगी। लोग उनके नाम पर बैयत करने लगे। थोड़े ही दिनों में इन लोगों की संख्या बीस हजार तक पहुंच गई। इस बीच में इन्होंने हुसैन की सेवा में दो सन्देश और भेजे, किन्तु हुसैन ने उसका भी कुछ उत्तर नहीं दिया। अन्त में कूफावालों ने एक विनती वाला पत्र लिखा, जिसमे हुसैन को हज़रत मुहम्मद और दीन–इस्लाम के निहोरे अपनी सहायता करने को बुलाया। उन्होंने बहुत अनुनय–विनय के बाद लिखा था–

''अगर आप न आए, तो कल कयामत के दिन अल्लाह–ताला के हुजूर में हम आप पर दावा करेंगे कि या इलाही, हुसैन ने हमारे ऊपर अत्याचार किया था, क्योंकि हमारे ऊपर अत्याचार होते देखकर वह खामोश बैठे रहे। और, सब लोग फरियाद करेंगे कि ऐ खुदा हुसैन से हमारा बदला दिला दे। उस समय आप क्या जवाब देंगे, और खुदा को क्या मुँह दिखायेंगे?'' धर्म–प्राण हुसैन ने जब यह पत्र पढ़ा, तो उनके रोएं खड़े हो आए, और उनका हृदय जल के समान तरल हो गया। उनके गालों पर धर्मानुराग के आँसू बहाने लगे। उन्होंने तत्काल उन लोगों के नाम एक आश्वासन–पत्र लिखा–''मैं शीघ्र ही तुम्हारी सहायता को आऊँगा'' और अपने चचेरे भाई मुसलिम के हाथ उन्होंने यह पत्र कूफावालों के पास भेज दिया। मुसलिम मार्ग की कठिनाइयां झेलते हुए कूफा पहुँचे। उस समय कूफा का सूबेदार एक शान्त पुरुष था। उसने लोगों को समझाया–''नगर में कोई उपद्रव न होने पावे। मैं उस समय तक किसी से न बोलूँगा, जब तक कोई मुझे कलेश न पहुँचावेगा।

जिस समय यजीद को मुसलिम के कूफा पहुँचने का समाचार मिला, तो उसने एक दूसरे सूबेदार को कूफा में नियुक्त किया जिसका नाम 'ओबैद बिनजियाद' था। वह बड़ा निष्ठुर और कुटिल प्रकृति का मनुष्य था। इसने आते ही कूफा में एक सभा की, जिसमें घोषणा की गई कि "जो लोग यजीद के नाम पर बैयत लेंगे, उन पर खलीफा की कृपा–दृष्टि होगी, परन्तु जो लोग हुसैन के नाम पर बैयत लेंगे, उनके साथ किसी तरह की रियायत न की जाएगी। हम उसे सूली पर चढ़ा देंगे, और उसकी जागीर या वृत्ति जब्त कर लेंगे।" इस घोषणा ने यथेष्ट प्रभाव डाला। कूफावालों के हृदय कांप उठे। जियाद को वे भली–भान्ति जानते थे। उस दिन जब मुसलिम भी मसजिद में नमाज़ पढ़ने के लिए खड़े हुए, तो किसी ने उनका साथ न दिया। जिन लोगों ने पहले हुसैन की सेवा में आवेदन–पत्र भेजा था, उनका कहीं पता न था। सभी के साहस छूट गए थे। मुसलिम ने एक बार कुछ लोगों की सहायता से जियाद को घेर लिया। किन्तु जियाद ने अपने एक विश्वास–पात्र सेवक के मकान की छत पर चढ़कर लोगों को यह सन्देशा दिया कि 'जो लोग यजीद की मदद करेंगे, उन्हें जागीर दी जायेगी, और जो लोग बगावत करेंगे, उन्हें ऐसा दण्ड दिया जायेगा कि कोई उनके नाम को रोनेवाला भी न रहेगा।' नेतागण यह धमकी सुनकर दहल उठे और मुसलिम को छोड़–छोड़कर दस–दस बीस–बीस आदमी विदा होने लगे। यहां तक कि मुसलिम अकेला रह गया। विवश हो उसने एक वृद्धा के घर में शरण लेकर अपनी जान बचाई। दूसरे दिन जब ओबैदुल्लाह को मालूम हुआ कि गिरफ्तार करने के लिए भेजा। असहाय मुसलिम ने तलवार खींच ली, और शत्रुओं पर टूट पड़े। पर अकेले कर ही क्या सकते थे। थोड़ी देर में जख्मी होकर गिर पड़े। उस समय सूबेदार से उनकी जो बातें हुईं, उनसे विदित होता है कि वह कैसे वीर पुरुष थे। गवर्नर उनकी भय–शून्य बातों से और गरम हो गया। उसने उन्हें तुरन्त कत्ल करा दिया।

हुसैन, अपने पूज्य पिता की भान्ति, शांत था। कोई चतुर मनुष्य होता, तो उस समय दुर्गम पहाड़ियों में जा छिपता। देश में उनका जितना मान था, और लोगों को उन पर जितनी भक्ति थी, उसके देखते हजारों की गिनती में सेना इकट्ठी कर लेना उनके लिए कठिन न था। किन्तु वह अपने को पहले की से हारा हुआ समझने लगे। यह सोचकर वह कहीं भागते न थे। उन्हें भय था कि शत्रु मुझे अवश्य खोज लेगा। वह सेना जमा करने का भी प्रयत्न न करते थे। यहाँ तक कि जो लोग उनके साथ थे, उन्हें भी अपने पास से चले जाने की सलाह देते थे। इतना ही नहीं, उन्होंने यह कभी नहीं कहा कि मैं खलीफा बनना चाहता हूँ। वह सदैव यही कहते रहे कि मुझे लौट जाने दो मैं किसी से भी लड़ाई नहीं करना चाहता। उनके जीवन का उद्देश्य आत्मशुद्धि और धार्मिक जीवन था। वह कूफा में जाने को इसलिए सहमत नहीं हुए थे कि वहां अपनी खिलाफत स्थापित करें, बल्कि इसलिए कि वह अपने सहधर्मियों की विपत्ति को देख न सकते थे। वह कूफा जाते समय अपने सब सम्बन्धियों से स्पष्ट शब्दों में कह गए थे कि मैं शहीद होने जा रहा हूँ। यहाँ तक कि एक स्वप्न का भी उल्लेख करते थे, जिसमें आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनकी टेक केवल यह थी कि मैं यजीद के नाम पर बैयत न करूँगा। इसका कारण यही था कि यजीद मद्यप, व्यभिचारी और इस्लाम धर्म के नियमों का पालन न करने वाला था। यदि यजीद ने उनकी हत्या कराने की चेष्टा न की होती, तो वह शान्तिपूर्वक मदीने में जीवन–भर पड़े रहते। पर समस्या यह थी कि उनके जीवित रहते हुए यजीद को अपना स्थान सुरक्षित नहीं मालूम हो सकता था। उसके निष्कंटक राज्य भोग के लिए हुसैन का उसके मार्ग से सदा के लिए हट में आने का उतना भय न था, जिनका उनके शान्ति–सेवन का। क्योंकि शान्ति–सेवन से जनता पर उनका प्रभाव बढ़ता जाता था। इसीलिए यजीद ने यह भी कहा था कि हुसैन का केवल उसके नाम पर बैयत लेना ही पर्याप्त नहीं है, उन्हें उसके दरबार में भी आना चाहिए। यजीद को उनकी बैयत पर विश्वास न था। वह उन्हें किसी भान्ति अपने दरबार में बुलाकर उनकी जीवन–लीला को समाप्त कर देना चाहता था। इसलिए यह धारणा कि हुसैन अपनी खिलाफत कायम करने के लिए कूफा गए, निर्मल सिद्ध होती है। वह कूफा इसलिए गए कि अत्याचार

पीड़ित कूफा निवासियों की सहायता करें। उन्हें प्राण–रक्षा के लिए कोई जगह दिखाई न देती थी। यदि वह खिलाफत के उद्देश्य से कूफा जाते, तो अपने कुटुंब से केवल 72 प्राणियों के साथ न जाते जिनमें बाल–वृद्ध सभी थे। कूफावालों पर कितना ही विश्वास होने पर भी वह अपने साथ अधिक मनुष्यों को लाने का प्रयत्न करते। इसके सिवा उन्हें यह बात पहले से ज्ञात थी कि कूफा के लोग अपने वचनों पर दृढ़ रहने वाले नहीं हैं। उन्हें कई बार इसका प्रमाण भी मिल चुका था कि थोड़े–से प्रलोभन पर भी वे अपने वचनों से विमुख हो जाते हैं। हुसैन के इष्ट–मित्रों ने उनका ध्यान कूफावालों की इस दुर्बलता की ओर खींचा भी, पर हुसैन ने उनकी सलाह न मानी। वह शहादत का प्याला पीने के लिए, अपने को धर्म की वेदी पर बलि देने के लिए विकल हो रहे थे। इसमें हितैषियों के मना करने पर भी वह कूफा चले गए। दैव–संयोग से यह तिथि वही थी, जिसमें दिन कूफा में मुसलिम शहीद हुए थे। 18 दिन की कठिन यात्रा के बाद वह नाहनेवा के समीप, कर्बला के मैदान में पहुँचे, जो फरात नदी के किनारे था। इस मैदान में न कोई बस्ती थी, न कोई वृक्ष। कूफा के गर्वनर की आज्ञा से वह इसी निर्जन और निर्जल स्थान में डेरे डालने के लिए विवश किये गए।

शत्रुओं की सेना हुसैन के पीछे–पीछे मक्का से ही आ रही थी और सेनाएं भी चारों ओर फैला दी गई थीं कि हुसैन किसी गुप्त मार्ग से कूफा न पहुँच जाये। कर्बला पहुंचने के लिए एक दिन पहले उन्हें हुर की सेना मिली। हुसैन ने हुर को बुलाकर पूछा–''तुम मेरे पक्ष में हो, या विपक्ष में?'' हुर ने कहा–''मैं आपसे लड़ने के लिये भेजा गया हूं।'' जब तीसरा पहर हुआ, तो हुसैन नमाज पढ़ने के लिए खड़े हुए और उन्होंने हुर से पूछा–''तू क्या मेरे पीछे खड़ा होकर नमाज़ पढ़ेगा?'' हुर ने हुसैन के पीछे खड़े होकर नमाज़ पढ़ना स्वीकार किया। हुसैन ने अपने साथियों के साथ हुर की सेना को भी नमाज पढ़ाई। हुर ने यजीद की बैयत ली थी। पर वह सद्विचारशील पुरुष था। हज़रत मोहम्मद के नवासे से लड़ने में उसे संकोच होता था। वह बड़े धर्म–संकट में पड़ा। वह सच्चे हृदय से चाहता था कि हुसैन मक्का लौट जायें। प्रकट रूप से तो हुसैन को ओबैदुल्लाह के पास ले चलने की धमकी देता था। पर हृदय से उन्हें अपने हाथों कोई हानि नहीं, पहुँचाना चाहता था। उसने स्पष्ट शब्दों में हुसैन से कहा–''यदि मुझसे कोई ऐसा अनुचित कार्य हो गया, जिससे आपको कोई कष्ट पहुँचा, तो मेरे लोक और परलोक, दोनों ही बिगड़ जायेंगे। और, यदि मैं आपको ओबैदुल्लाह के पास न ले जाऊं, तो कूफा में नहीं घुस सकता। हाँ, संसार विस्तृत है, कयामत के दिन आपके नाना की कृपा दृष्टि से वंचित होने की अपेक्षा कहीं यही अच्छा है कि किसी दूसरी ओर निकल जाऊं। आप मुख्य मार्ग को छोड़कर किसी अज्ञात मार्ग से कहीं और चले जायें। मैं कूफा के गर्वनर (अर्थात् 'आमिल') को लिख दूंगा कि हुसैन से मेरी भेंट नहीं हुई, वह किसी दूसरी ओर चले गए हैं। मैं आपको कसम दिलाता हूँ कि अपने ऊपर दया कीजिए और कूफा न जाइए।'' पर हुसैन ने कहा–''तुम मुझे मौत से क्या डराते हो? मैं तो शहीद होने के लिए चला ही हूं।'' इस समय यदि हुसैन हुर की सेना पर आक्रमण करते, तो सम्भव था, उसे परास्त कर देते, पर अपने इष्ट–मित्रों के अनुरोध करने पर भी उन्होंने यही कहा–''हम लड़ाई के मैदान में अग्रसर न होंगे, यह हमारी नीति के विरूद्ध है।'' इससे भी यही बात सिद्ध होती है कि हुसैन को अब अपनी आत्मरक्षा का कोई उपाय न सूझता था। उनमें साधुओं का सा सन्तोष था, पर योद्धाओं का सा धैर्य न था, जो कठिन–से–कठिन समय पर भी कष्ट निवारण का उपाय निकाल लेते हैं। उनमें महात्मा गांधी का–सा आत्मसमर्पण था, किन्तु शिवाजी की दूरदर्शिता न थी।

इधर हुसैन और उनके आत्मीय तथा सहायकगण तो अपने–अपने खीमे गाड़ रहे थे, और उधर औबेदुल्लाह–कूफा का गर्वनर–लड़ाई की तैयारी कर रहा था। उसने 'उमर–बिन–साद' नाम के एक योद्धा को बुलाकर हुसैन की हत्या करने के लिये नियुक्त किया, और इसके बदले में 'रै' सूबे के आमिल का उच्च पद देने को कहा। उमर–बिन–साद विवेकहीन प्राणी न था। वह भली–भान्ति जानता था कि हुसैन की हत्या करने से मेरे मुख पर ऐसी कालिमा लग जायेगी, किन्तु 'रै'

सूबे का उच्च पद उसे असमंजस में डाले हुए था। उसके सम्बन्धियों ने समझाया–''तुम हुसैन की हत्या करने का बीड़ा न उठाओ, इसका परिणाम अच्छा न होगा।'' उमर ने जाकर ओबैदुल्लाह से कहा–''मेरे सिर पर हुसैन के वध का भार न रखिए।'' परन्तु 'रै' की गर्वनरी छोड़ने को वह तैयार न हो सका। अतएव अब ओबैदुल्लाह ने साफ–साफ कह दिया कि 'रै' का उच्च पद हुसैन की हत्या किए बिना नहीं मिल सकता। यदि तुम्हें यह सौदा महंगा जचता हो, तो कोई जबरदस्ती नहीं है। किसी और को यह पद दिया जायेगा।'' तो उमर का आसन डोल गया। वह इस निषिद्ध कार्य के लिए तैयार हो गया। उसने अपनी आत्मा को ऐश्वर्य–लालसा के हाथ बेच दिया। ओबैदुल्लाह ने प्रसन्न होकर उसे बहुत कुछ इनाम–इकराम दिया और चार हज़ार सैनिक उसके साथ नियुक्त कर दिए। उमर–बिन–साद की आत्मा अब भी उसे क्षुब्ध करती रही। वह सारी रात पड़ा अपनी अवस्था या दुरावस्था पर विचार करता रहा। वह जिस विचार से देखता, उसी से अपना यह कर्म घृणित जान पड़ता था। प्रातः काल वह फिर कूफा के गर्वनर के पास गया। उसने फिर अपनी लाचारी दिखाई। परन्तु 'रै' की सूबेदारी ने उस पर फिर विजय पाई। जब वह चलने लगा, तो ओबैदुल्लाह ने उसे कड़ी ताकीद कर दी कि हुसैन और उसके साथी फरात–नदी के समीप किसी तरह न आने पावें, और एक घूंट पानी भी न पी सकें। हुर की 1000 सेनाएं भी उमर के साथ आ मिलीं। इस प्रकार उमर के साथ पांच हज़ार सैनिक हो गए। उमर अब भी यही चाहता था कि हुसैन के साथ लड़ना न पड़े। उसने एक दूत उनके पास भेजकर पूछा–''आप अब क्या निश्चय करते हैं?'' हुसैन ने कहा–''कूफावालों ने मुझसे दगा की है। उन्होंने अपने कष्ट की कथा कहकर मुझे यहां बुलाया और अब वह मेरे शत्रु हो गए हैं। ऐसी दशा में मैं मक्के लौट जाना चाहता हूं, यदि मुझसे जबरदस्ती रोका न जाये।'' उमर मन में प्रसन्न हुआ कि शायद अब कलंक से बच जाऊं। उसने यह समाचार तुरन्त ओबैदुल्लाह को लिख भेजा। किन्तु वहां तो हुसैन की हत्या करने का निश्चय हो चुका था। उसने उमर को उत्तर दिया, ''हुसैन से बैयत लो, और यदि वह इस पर राजी न हो, तो मेरे पास लाओ।''

शत्रुओं को, इतनी सेना जमा कर लेने पर भी, सहसा हुसैन पर आक्रमण करते डर लगता था कि कहीं जनता में उपद्रव न मच जाये। इसलिए इधर तो उमर–बिन–साद कर्बला को चला, और उधर ओबैदुल्लाह ने कूफा की जामा मसजिद में लोगों को जमा किया। उसने एक व्याख्या न देकर उन्हें समझाया–''यजीद के खानदान ने तुम लोगों पर कितना न्यायमुक्त शासन किया है, और वे तुम्हारे साथ कितनी उदारता से पेश आए हैं। यजीद ने अपने सुशासन से देश को कितना समृद्धिपूर्ण बना दिया है। रास्ते में अब चोरों और लुटेरों का कोई खटका नहीं है। न्यायालयों में सच्चा, निष्पक्ष न्याय होता है। उसने कर्मारियों के वेतन बढ़ा दिए हैं। राजभक्तों की जागीरें बढ़ा दी गई हैं, विद्रोहियों के कोर्ट तहस–नहस कर दिए गए हैं।

यह व्याख्यान सुनते ही स्वार्थ के मतवाले नेता लोग, धर्माधर्म के विचार को तिलांजलि देकर, समर–भूमि में चलने की तैयारी करने लगे। 'शिमर' ने चार हज़ार सवार जमा किए, और वह बिन–साद से जा मिला। रिकाब ने दो हज़ार हसीन के चार हज़ार, मसायर ने तीन हज़ार और अन्य एक सरदार ने दो हज़ार के पास अब पूरे बाईस हज़ार सैनिक हो गए। कैसी विडंबना है कि केवल 72 आदमियों को परास्त करने के लिए इतनी बड़ी सेना खड़ी हो जाये। उन बहत्तर आदमियों में भी कितने ही बालक और कितने ही वृद्ध थे। फिर प्यास ने सभी को अधमरा कर रखा था।

इस संग्राम में सबसे घोर निर्दयता जो शत्रुओं ने हुसैन के साथ की, वह पानी का बन्द कर देना था। ओबैदुल्लाह ने उमर को कड़ी ताकीद कर दी थी कि हुसैन के आदमी नदी के समीप नहीं जा पायें। यहां तक कि वे कुएं खोदकर भी पानी न निकाल सकें। एक सेना फरात–नदी की रक्षा करने के लिए भेज दी गई। उसने हुसैन की सेना और नदी के बीच में डेरा जमाया। नदी की ओर जाने को कोई रास्ता न रहा।

शहीद होने के तीन दिन पहले हुसैन और अन्य प्राणी प्यास के मारे बेहोश हो गए। तब हुसैन ने अपने प्रिय बन्धु अब्बास को बुलाकर, उन्हें बीस सवार तथा तीस पैदल देकर, उनसे कहा–''मैं हूं, तेरे चाचा का बेटा, पानी पीने आया हूँ।'' पहरेदार ने कहा–''पी ले।'' भाई ने उत्तर दिया–''कैसे पी लूं?'' जब हुसैन और उनके बाल–बच्चे प्यासे मर रहे हैं, तो मैं किस मुँह से पी लूँ?'' पहरेदार ने कहा–यह तो जानता हूं, पर करूं क्या, हुक्म से मजबूर हूँ!'' अब्बास के आदमी मश्कें लेकर नदी की ओर गए, और पानी भर लिया। रक्षक–दल ने इनको रोकने की चेष्टा की, पर ये लोग पानी लिए हुए बच निकले।

हुसैन ने फिर अन्तिम बार सन्धि करने का प्रयास किया। उन्होंने उमर–बिन–साद को संदेशा भेजा कि ''आज मुझसे रात को, दोनों सेनाओं के बीच में, मिलना।'' उमर निश्चित समय पर आया। हुसैन से उसकी बहुत देर तक एकांत में बात हुई। हुसैन ने संधि की तीन बातें बताईं–(1) या तो हम लोगों को मक्क वापस जाने दिया जाए, (2) या सीमा–प्रान्त की ओर शान्तिपूर्वक चले जाने की अनुमति मिले, (3) या मैं यजीद के पास भेज दिया जाऊं। उमर ने ओबैदुल्लाह को यह शुभ सूचना सुनाई, और वह उसे मानने के लिए तैयार भी मालूम होता था, किन्तु शिमर ने ज़ोर दिया कि दुश्मन चंगुल में आ फंसा है, तो उसे निकलने न दो, नहीं तो उसकी शक्ति इतनी बढ़ जायेगी कि तुम उसका सामना न कर सकोगे। उमर मजबूर हो गया।

मोहर्रम की 9वीं तारीख को, अर्थात् हुसैन की शहादत से एक दिन पहले, कूफ़ा के दिहातों से कुद लोग हुसैन की सहायता करने आए। ओबैदुल्लाह को यह बात मालूम हुई, तो उसने उन आदमियों को भगा दिया, और उमर को लिखा–''अब तुरन्त हुसैन पर आक्रमण करो, नहीं तो इस टाल–मटोल की तुम्हें सज़ा दी जाएगी।'' फिर क्या था; प्रातः काल बाइस हज़ार योद्धाओं की सेना हुसैन से लड़ने चली। जुगनू की चमक को बुझाने के लिए मेघ–मण्डल का प्रकोप हुआ।

हुसैन को मालूम हुआ, तो वह घबराए। उन्हें यह अन्याय मालूम हुआ कि अपने साथ अपने साथियों और सहायकों के भी प्राणों की आहुति दें। उन्होंने इन लोगों को इसका एक अवसर देना उचित समझा कि वे चाहें, तो अपनी जान बचावें, क्योंकि यजीद को उन लोगों से कई शत्रुता न थी। इसलिए उन्होंने उमर–बिन–साद को पैगाम भेजा कि हमें एक रात के लिए मोहलत दो। उमर ने अन्य सहायकों तथा परिवारवालों को बुलाकर कहा–''कल जरूर यह भूमि मेरे खून से लाल हो जाएगी। मैं तुम लोगों का हृदय से अनुगृहित हूं कि तुमने मेरा साथ दिया। मैं अल्लाहताला से दुआ करता हूं कि वह तुम्हें इस नेकी का जवाब दे। तुमसे अधिक वीरात्मा और पवित्र हृदय वाले मनुष्य संसार में न होंगे मैं तुम लोगों को सहर्ष आज्ञा देता हूं कि तुममें से जिसकी जहां इच्छा हो, चला जाय, मैं किसी को दबाना नहीं चाहता, न किसी को मजबूर करता हूं। किन्तु इतना अनुरोध अवश्य करूंगा कि तुममे से प्रत्येक मनुष्य मेरे आत्मीय जनों में से एक–एक को अपने साथ ले ले। सम्भव है, खुदा तुम्हें तबा ही से बचा ले, क्योंकि शत्रु मेरे रुधिर का प्यासा है। मुझे पा जाने पर उसकी और किसी की तलाश न होगी।

यह कहकर उन्होंने इसलिए चिराग बुझा दिया कि जानेवालों को संकोचवश वहां न रहना पड़े। कितना महान् पवित्र और निस्वार्थ आत्मसमर्पण है।

किन्तु इस वाक्य का समाप्त होना था कि सब लोग चिल्ला उठे–''हम ऐसा नहीं कर सकते। खुदा वह दिन न दिखावे कि हम आपके बाद जीते रहें। हम दूसरों को क्या मुँह दिखावेंगे? उनसे क्या यह कहेंगे कि हम अपने स्वामी, अपने बन्धु तथा इष्ट मित्र को शत्रुओं के बीच में छोड़ आए, उनके साथ एक भाला भी न चलाया, हम अपने को, अपने धन को और अपने कुल को आपके चरणों पर न्योछावर कर देंगे।''

इस तरह 9वीं तारीख, मोहर्रम की रात, आधी कटी। शेष रात्रि लोगों ने ईश्वर–प्रार्थना में काटी। हुसैन ने एक रात की मोहलत इसलिए नहीं ली थी कि समर की रही–सही तैयारी पूरी कर ले। प्रातः काल तक सब लोग सिजदे करते और अपनी मुक्ति के लिए दुआएं मांगते रहे।

प्रभात हुआ–वह प्रभात, जिनकी संसार के इतिहास में उपमा नहीं है? किसकी आँखों ने यह अलौकिक दृश्य देखा होगा कि 72 आदमी बाइस हज़ार योद्धाओं के सम्मुख खड़े हुसैन के पीछे सुबह की नमाज़ इसलिए पढ़ रहे हैं कि अपने इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ने का शायद यह अन्तिम सौभाग्य है। वे कैसे रणधीर पुरुष हैं, जो जानते हैं कि एक क्षण में हम सब–कें–सब इस आंधी में उड़ जायेंगे, लेकिन फिर भी पर्वत की भान्ति खड़े हैं, मानो संसार में कोई ऐसी शक्ति नहीं है, जो उन्हें भयभीत कर सके। किसी के मुख पर चिन्ता नहीं, कोई निराश और हताश नहीं है। युद्ध के उन्माद ने, अपने सच्चे स्वामी के प्रति अटल विश्वास ने, उनके मुख को तेजस्वी बना दिया है। किसी के हृदय में कोई अभिलाषा नहीं है। अगर कोई अभिलाषा है, तो यही कि कैसे अपने स्वामी की रक्षा करें। इसे सेना कौन कहेगा, जिसके दमन को बाइस हज़ार योद्धा एकत्र किए गए थे। इन बहत्तर प्राणियों में एक भी ऐसा न था, जो सर्वथा लड़ाई के योग्य हो। सब–के–सब भूख प्यास से तड़प रहे थे। कितनों के शरीर पर तो मांस का नाम तक नहीं था, और उन्हें बिना ठोकर खाए दो पग चलना भी कठिन था। इस प्राण–पीड़ा के समय ये लोग उस सेना से लड़ने को तैयार थे जिसमें अरब देश के वे चुने हुए जवान थे, जिन पर अरब को गर्व हो सकता था।

उन दिनों समर की दो पद्धतियां थीं–एक तो सम्मिलित, जिसमें समस्त सेना मिलकर लड़ती थी, और दूसरी व्यक्तिगत, जिसमें दोनों दलों से एक–एक योद्धा निकलकर लड़ते थे। हुसैन के साथ इतने कम आदमी थे कि सम्मिलित संग्राम में शायद वह एक क्षण भी न ठहर सकते। अतः उनके लिए दूसरी शैली ही उपयुक्त थी। एक–एक करके योद्धागण समर–क्षेत्र में आने और शहीद होने लगे। लेकिन इसके पहले अन्तिम बार हुसैन ने शत्रुओं से बड़ी ओजस्वी भाषा में अपनी निर्दोषिता सिद्ध की। उनके अन्तिम शब्द ये थे–

''खुदा की कसम, मैं पद–दलित और अपमानित होकर तुम्हारी शरण न जाऊंगा, और न मैं दासो की भान्ति लाचार होकर यजीद की खिलाफत को स्वीकार करूँगा। ऐ खुदा के बंदो! मैं खुदा से शान्ति का प्राथी हूं और उन प्राणियों से जिन्हें, खुदा पर विश्वास नहीं है, जो गरूर में अन्धे हो रहे हैं पनाह मांगता हूं।''

शेष कथा आत्म–कथा, प्राणसमर्पण, विशाल धैर्य और अविचल वीरता की अलौकिक और स्मरणीय गाथा है, जिसके कहने और सुनने से आंखों में आंसू उमड़ आते हैं, जिस पर रोते हुए लोगों की 13 शताब्दियां बीत गई और अभी अनन्त शताब्दियां रोते बीतेंगी।

हुर का ज़िक्र पहले आ चुका है। यह वही पुरुष है, जो एक हज़ार सिपाहियों के साथ हुसैन के साथ–साथ आया था, और जिसने उन्हें इस निर्जल मरुभूमि पर ठहरने को मजबूर किया था। उसे अभी तक आशा थी कि शायद ओबैदुल्लाह हुसैन के साथ न्याय करे। किन्तु जब उसने देखा कि लड़ाई छिड़ गई, और अभी समझौते की कोई आशा नहीं है, तो अपने कृत्य पर लज्जित होकर वह हुसैन की सेना से आ मिला। जब वह अनिश्चित भाव से अपने मोरचे से निकलकर हुसैन की सेना की ओर चला, तब उसी सेना के एक सिपाही ने कहा–''तुमको मैंने किसी लड़ाई में इस तरह काँपते हुए चलते नहीं देखा।''

हुर ने उत्तर दिया–''मैं स्वर्ग और नरक की दुविधा में पड़ा हुआ हूं और सच यह है कि मैं स्वर्ग के सामने किसी चीज़ की हस्ती नहीं समझता, चाहे कोई मुझे मार डाले।''

यह कहकर उसने घोड़े के एड़ लगाई और हुसैन के पास आ पहुंचा। हुसैन ने उसका अपराध क्षमा कर दिया

और उसे गले से लगाया। तब हुर ने अपनी सेना को सम्बोधित करके कहा–''तुम लोग हुसैन की शर्तें नहीं मानते? कितने खेद की बात है कि तुमने स्वयं उन्हें बुलाया और जब वह तुम्हारी सहायता करना चाहते हैं, किन्तु तुम लोग उन्हें कहीं जाने भी नहीं देते? सबसे बड़ा अन्याय यह कर रहे हो कि उन्हें नदी से पानी नहीं लेने देते। जिस पानी को पशु और पक्षी तक पी सकते हैं, वह भी उसे मयस्सर नहीं।''

इस पर शत्रुओं ने उन पर तीरों की वर्षा कर दी और हुर भी लड़ते हुए वीर–गति को प्राप्त हुए। उन्हीं के साथ उनका पुत्र भी शहीद हुआ।

आश्चर्य होता है और दुःख भी कि इतना सब कुछ हो जाने पर भी हुसैन को इन नर–पिशाचों से कुछ कल्याण की आशा बनी हुई थी। वह जब अवसर पाते थे, तभी अपनी निर्दोषिता प्रकट करते हुए उनसे आत्मरक्षा की प्रार्थना करते थे। दुराशा में भी यह आशा इसलिए थी कि वह हज़रत मोहम्मद के नवासे थे और उन्हें आशा होती थी कि शायद अब भी मैं उनके नाम पर इस संकट से मुक्त हो जाऊं। उनके इन सभी सम्भाषणों में आत्मरक्षा की इतनी विशद चिन्ता व्याप्त हैं, जो दीन चाहे न हो, पर करुण अवश्य है और एक आत्मदर्शी पुरुष के लिए, जो हो कि स्वर्ग में हमारे लिये अकथनीय सुख उपस्थित है शोभा नहीं देती। हुर के शहीद होने के पश्चात् हुसैन ने फिर शत्रु–सेना के सम्मुख खड़े होकर कहा–

''मैं तुमसे निवेदन करता हूं कि मेरी इन तीन बातों में से एक को मान लो।''

1. ''मुझे यजीद के पास जाने दो कि उससे बहस करूं। यदि मुझे निश्चय हो जायेगा कि वह सत्य पर है, तो मैं उसकी बैयत कर लूंगा।''

इस पर किसी पाषाण–हृदय ने कहा–''तुम्हें यजीद के पास न जाने देंगे। तुम मधुरभाषी हो, अपनी बातों में उसे फंसा लोगे और इस समय मुक्त होकर देश में विद्रोह फैला दोगे।''

2. ''जब यह नहीं मानते, तो छोड़ दो कि मैं अपने नाना के रोज़े की मुजाविरी करूं।''

(इस पर भी किसी ने उपयुक्त शंका प्रकट की)

3. ''अगर ये दोनों बातें तुम्हें अस्वीकार हैं, तो मुझे और मेरे साथियों को पानी दो। क्योंकि प्राणि–मात्र को पानी लेने का हक है।''

(इसका भी वैसा ही कठोर निराशाजनक उत्तर मिला।)

इस प्रश्नोत्तर के बाद हुसैन की ओर से बुरीर मैदान में आए। उधर से मुअक्कल निकला। बुरीर ने अपने प्रतिपक्षी को मार लिया और फिर खुद सेना के हाथों मारे गए। बुरीर के बाद अब्दुल्लाह निकले और दस–बीस शत्रुओं को मारकर काम आए।

अब्दुल्लाह के बाद उनका पुत्र, जिसका नाम वहब था, मैदान में आया था। उसकी वीर–गाथा अत्यन्त मर्मस्पर्शी है और राजपूतों के अमर वीर–वृत्तान्त को याद दिलाती है। वहब का विवाह हुए अभी केवल सत्रह दिन हुए थे। हाथ की मेंहदी तक न छूटी थी। जब उसके पिता शहीद हो गए, तो उसकी माता उससे बोलीं–

''मीख्वाहम कि मरा अज़ खूने–खुद शरबते दिही ताशीरे कि अजपिस्ताने मन खुरदई बर तो हलाल गरदद।''

कितने सुन्दर शब्द हैं, तो शायद ही किसी वीर–माता के मुँह से निकले होंगे। भावार्थ यह है–

'मेरी इच्छा है कि तू अपने रक्त का एक घूंट मुऐ दे, जिसमें कि यह दूध जो तूने मेरे स्तन से पिया है, तुझ पर हलाल हो जाये।'

वहब के शहीद हो जाने के बाद क्रम से कई योद्धा निकले, और मारे गए थे इस्लामी पुस्तकों में तो उनकी वीरता का बड़ा प्रशंसात्मक वर्णन किया गया है। उनमें से प्रत्येक ने कई–कई सौ शत्रुओं को परास्त किया। ये भक्तों के मानने

की बातें हैं। जो लोग प्यास से तड़प रहे थे, भूख से आँखों तले, अन्धेरा छा जाता था उनमें इतनी असाधारण शक्ति और वीरता कहां से आ गई? उमर–बिन–साद की सेना में 'शिमर' बड़ा क्रूर और दुष्ट आदमी था। इस समर में हुसैन और उनके साथियों के साथ जिस अपमान–मिश्रित निर्दयता का व्यवहार किया गया, उसका दायित्व इसी शिमर के सिर है। यह धार्मिक संग्राम था और इतिहास साक्षी है कि धार्मिक संग्राम में पाशविक प्रवृत्तियां अत्यन्त प्रचण्ड रूप ध ारण कर लेती है। पर इस संग्राम में ऐसे प्रतिष्ठित प्राणी के साथ जितनी घोर दुष्टता और दुर्जनता दिखाई गई, उसकी उपमा संसार के धार्मिक संग्रामों में भी मुश्किल से मिलेगी। हुसैन के जितने साथी शहीद हुए, प्रायः उन सभी की लाशों को पैरों तले रौंदा गया, उनके सिर काटकर भालों पर उछाले और पैरों से ठुकराए गए। पर कोई भी अपमान और बड़ी–से–बड़ी निर्दयता उनकी उस कीर्ति को नहीं मिटा सकती, जो इस्लाम के इतिहास का आज भी गौरव बढ़ा रही है। इस्लाम के साहित्य और इतिहास में उन्हें वह स्थान प्राप्त है, जो हिन्दू–साहित्यों में अंगद, जामवंत, अर्जुन, भीम आदि को प्राप्त है। सूर्यास्त होते–होते सहायकों में कोई भी नहीं बचा।

अब निज कुटुम्ब के योद्धाओं की बारी आई। इस वंश के पूर्वज हाशिम नाम के एक पुरुष थे। इसीलिए हज़रत मोहम्मद का वंश हाशिम कहलाता है। इस संग्राम में पहला हाशिमी जो क्षेत्र में आया, वह अब्दुल्ला था। यह उसी मुसलिम नाम के वीर का बालक था, जो पहले शहीद हो चुका था। उसके बाद कुटुम्ब के और वीर निकले। जाफर इमाम हसन के तीन बेटे, अब्बास के कई भाई, हज़रत अली के कई बेटे और सब बारी–बारी से लड़कर शहीद हुए। हज़रत अब्बास से हुसैन ने कहा–''मैं बहुत प्यासा हूं।'' संध्या हो गई थी। अब्बास पानी लाने चले, पर रास्ते में घिर गए। वह असाधारण वीर पुरुष थे। हाशिमी लोगों में इतनी वीरता से कोई नहीं लड़ा। एक हाथ कट गया, तो दूसरे हाथ से लड़े। जब वह हाथ भी कट गया, तो ज़मीन पर गिर पड़े। उनके मरने का हुसैन को अत्यन्त शोक हुआ। बोले–''अब मेरी कमर टूट गई।'' अब्बास के बाद हुसैन के नौजवान बेटे अकबर मैदान में उतरे। हुसैन ने अपने हाथों उन्हें शस्त्रों से सुसज्जित किया। आह! कितना हृदय–विदारक दृश्य है। बेटे ने खड़े होकर हुसैन से जाने की आज्ञा मांगी, पिता का वीर हृदय अधीर हो गया। हुसैन ने निराशा और शोक से अली अकबर को देखा, फिर आँखें नीचे कर लीं और रो दिए। जब वह शहीद हो गया तो शोक–विह्वल पिता ने जाकर लाश के मुँह पर अपना मुँह रख दिया, और कहा–''बेटा, तुम्हारे बाद अब जीवन को धिक्कार है।'' पुत्र–प्रेम की इहलोक की ममता के आदर्श पर, धर्म पर, गौरव पर कितनी बड़ी विजय है?

अब हुसैन अकेले रह गए। केवल एक सात वर्ष का भतीजा और हसन का एक दुधमुँहा पोता बाकी था। हुसैन घोड़े पर सवार महिलाओं के खीमों की ओर आए, और बोले–''बच्चे को लाओ, क्योंकि अब उसे कोई प्यार करने वाला नहीं रहेगा।'' स्त्रियों ने शिशु को उनकी गोद में रख दिया। वह अभी उसे प्यार कर रहे थे कि अकस्मात् एक तीर उसकी छाती में लगा और वह हुसैन की गोद में ही चल बसा। उन्होंने तुरन्त तलवार से गड्ढा खोदा और बच्चे की लाश वहीं गाड़ दी। फिर अपने भतीजे को शत्रुओं के सामने खड़ा करके बोले–''ऐ अत्याचारियों, तुम्हारी निगाह में मैं पापी हूं, पर इस बालक ने तो कोई अपराध नहीं किया, इसे क्यों प्यासा मारते हो?'' यह सुनकर किसी नर–पिशाच ने एक तीर चलाया, जो बालक के गले को छेदता हुआ हुसैन की बांह मे गड़ गया। तीर के निकलते ही बालक की क्रीड़ाओं का अन्त हो गया।

हुसैन अब रण–क्षेत्र की ओर चले। अब तक रण में जाने वालों को वह अपने खीमे के द्वार तक पहुंचाने आया करते थे। उन्हें पहचानने वाला अब कोई मर्द न था। तब आपकी बहन जैनब ने आपको रोकर विदा किया। हुसैन अपनी पुत्री सकीना को बहुत प्यार करते थे। जब वह रोने लगी, तो आपने उसे छाती से लगाया और तत्काल शोक के आवेग में कई शेर पढ़े, जिनका एक–एक शब्द करुण–रस में डूबा हुआ है। उनके रण–क्षेत्र में आते ही शत्रुओं में खलबली पड़ गई, जैसे गीदड़ों में शेर आ गया। हुसैन तलवार चलाने लगे और इतनी वीरता से लड़े कि दुश्मनों के छक्के छूट गए।

जिधर उनका घोड़ा बिजली की तरह कड़क कर जाता था, लोग काई की भान्ति फट जाते थे। कोई सामने आने की हिम्मत न कर सकता था। इस भान्ति सिपाहियों के दलों को चीरते–फाड़ते वह फरात के किनारे पहुंच गए, और पानी पीना चाहते थे कि किसी ने कपट भाव से कहा–''तुम यहां पानी पी रहे हो उधर सेना स्त्रियों के खीमों में घुस जा रही है।'' इतना सुनते ही लपककर इधर आए तो ज्ञात हुआ कि किसी ने छल किया है। फिर मैदान में पहुँचे और शत्रु–दल का संहार करने लगे। यहाँ तक कि शिमर ने तीन सेनाओं को मिलाकर उन पर मला करने की आज्ञा दी। इतना ही नहीं बगल से और पीछे से भी उन तारों की बौछार होने लगी। यहाँ तक कि जख्मों से चूर होकर वह ज़मीन पर गिर पड़े और शिमर की आज्ञा से एक सैनिक ने उनका सिर काट लिया। कहते हैं, जैनब यह दृश्य देखने के लिए खीमें से बाहर निकल आई थी। उसी समय उमर–बिन–साद से उनका सामना हो गया। तब वह बोली–''क्यों उमर, हुसैन इस बेकसी से मारे जायें और तुम देखते रहो।'' उमर का दिल भर आया, आँखें सजल हो गई और कई बूंदें दाढ़ी पर गिर पड़ीं। हुसैन की शहादत के बाद शत्रुओं ने उनकी लाश की जो दुर्गति की, वह इतिहास की अत्यन्त लज्जाजनक घटना है।

पात्र-परिचय

पुरुष-पात्र

हुसैन : हज़रत अली के बेटे और हज़रत मुहम्मद के नवासे इन्हें फर्जदे–रसूल, शब्बीर भी कहा गया है।

अब्बास : हज़रत हुसैन के चचेरे भाई

अली अकबर : हज़रत हुसैन के बड़े बेटे

अली असगर : हज़रत हुसैन के छोटे बेटे

मुसलिम : हज़रत हुसैन के चचेरे भाई

जुबेर : मक्का का एक रईस

वलीद : मदीना का नाज़िम

मरवान : वलीद का सहायक अधिकारी

हानी : कूफा का एक रईस

यजीद : खलीफ़ा

जुहाक, शम्स, सरजोन, रूमी : बसरे और कूफे का नाज़िम

साद : यजीद की सेना का सेनापति

अब्दुल्लाह, वहब, कसीर, मुख्तार, हुर, जहीर, हबीब : हज़रत हुसैन के सहायक।

हज्जाज, हारिस, अशअस, कीस, बलाल आदि यजीद के सहायक।

साहसराय : अरब–निवासी एक हिन्दू

मुआबिया : यजीद का पिता

स्त्री-पात्र

जैनब : हज़रत हुसैन की बहन

शहरबानू : हज़रत हुसैन की स्त्री

सकीना : हज़रत हुसैन की बेटी

कमर : अब्दुल्लाह की स्त्री

तौआ : कूफा की वृद्धा स्त्री
हिंदा : यजीद की बेगम
नरगिस व जुहरा : वेश्याएँ

2.8.3 तत्वों के आधार पर कर्बला की समीक्षा :

मुंशी प्रेमचन्द मूल रूप से उपन्यासकार और कहानीकार थे। उन्होंने अपने जीवन में कुल तीन नाटकों की रचना की थी जिनमें से 'कर्बला' उल्लेखनीय है। नाटक के सात तत्वों के आधार पर 'कर्बला' की विवेचना इस प्रकार है :–

1. कथानक/कथावस्तु - कर्बला नाटक का कथानक ऐतिहासिकता के धरातल पर स्थित है। इसमें मुस्लिम संस्कृति के महत्वपूर्ण अध्याय कर्बला के युद्ध को आधार बनाकर हुसैन की शहादत को प्रस्तुत किया गया है। मुआबिया के पुत्र यजीद ने छल–बल और अत्याचार के मार्ग पर चलते हुए खलीफा का पद प्राप्त कर लिया था जबकि उसके पिता ने घोषित किया था कि उसकी मृत्यु के पश्चात् वह पद मुहम्मद साहब के नवासे हुसैन को मिलेगा। हुसैन साहब अति सबल और असाध ारण वीर थे। वे इस्लाम धर्म के एक–एक नियम का पालन करने वाले धार्मिक इन्सान भी थे इसलिए खलीफा पद के लिए मासूम लोगों का रक्त नहीं बहाना चाहते थे। यजीद ने तरह–तरह के लालच देकर कबीले के सरदारों को अपनी तरफ मिला लिया था। वह प्रजा पर अत्याचार करता था और अपने नाम पर उन्हें बैयत देने के लिए विवश करता था। कूफा नगर के अधिकतर कबीला–सरदार चाहते थे कि हुसैन साहब ही बैयत लें। हुसैन साहब ने अपने भाई मुस्लिम को अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजा पर उसे विश्वासघात करते हुए मौत के घाट उतार दिया गया। मुस्लिम की मृत्यु का समाचार पाकर हुसैन साहब ने कूफा की ओर कूच किया पर यजीद ने उन्हें कर्बला नाम स्थान पर रोक लिया। हुसैन के साथ परिवार के कुल बहत्तर सदस्य थे जिन्हें रोकने के लिए बाईस हज़ार सैनिक भेजे गए थे। हुसैन साहब ने युद्ध न लड़ने और सन्धि ा करने के लिए प्रस्ताव भेजा पर उसे माना नहीं गया था। अनीतिपूर्ण किए गए युद्ध में हुसैन साहब के सभी साथी मारे गए। हुसैन साहब ने अकेले ही विरोधी पक्ष का सामना किया। शाम के वक्त नमाज़ में लीन हुसैन साहब का सिर शिमर ने कलम कर दिया। अपने इस ऐतिहासिक नाटक में नाटककार ने कल्पना का सहारा नामात्र है। इस नाटक को लेखक ने रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है जो पाठक के मन पर गहरा प्रभाव डालता है।

2. पात्र और चरित्र चित्रण - नाटक में चरित्र–चित्रण का स्थान महत्वपूर्ण होता है क्योंकि पात्रों के चरित्र से ही उद्देश्य की प्राप्ति सम्भव हो पाती है। पात्रों के बिना नाटक गति प्राप्त ही नहीं कर सकता। मुंशी प्रेमचन्द ने अपने नाटक में सबला और दुर्बल मानवीय गुणों से युक्त पात्रों के द्वारा कथा को गति प्रदान की है। पात्र कहीं भी नाटककार के हाथ की कठपुतली जान नहीं पड़ते और न ही अत्यधिक पात्रों को ही लिया गया है। यह एक ऐतिहासिक नाटक है अतएव पात्रों के माध्यम से कहीं भी इसकी ऐतिहासिकता को आंच नहीं आती।

3. संवाद या कथोपकथन - संवाद अथवा कथोपकथन के माध्यम से पात्रों के मनोभाव पाठकों/दर्शकों के समक्ष ठीक ढंग से प्रकट हो पाते हैं। लेखक ने कर्बला का प्रस्तुतिकरण पाठकों/दर्शकों को ध्यान में रखकर किया है इसलिए संवादों को उन्होंने अति स्वाभाविक कर्बला का प्रस्तुतिकरण पाठकों/दर्शकों को ध्यान में रखकर किया है इसलिए संवादों को उन्होंने अति स्वाभाविक और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। कहीं–कहीं लम्बे संवादों का प्रयोग भी किया गया है। नाअक के कथोपकथन, भावानुकूल, पात्रानुकूल, विषयानुकूल और रोचक हैं। जहाँ कहीं संवाद लंबे हुए भी है तो कथानक को गति प्रदान करने और किसी घटना अथवा अन्य पात्र के विषय में जानकारी देने हेतु ऐसा करना आवश्यक भी था। ज्यादातर संवाद संजीव और संक्षिप्त हैं। एक उदाहरण प्रस्तुत हैं–

हुसैन : जी हाँ, उनका नवासा हूँ। मगर आपने नाना को तो देखा ही नहीं, फिर आपको कैसे मालूम हुआ कि मेरी सूरत उनसे मिलती है?

योगी : (हंसकर) भगवन् मैंने उनका स्थूल शरीर नहीं देखा, पर उनके आत्मशरीर का दर्शन किया है। आत्मा द्वारा उनकी पवित्र वार्ता सुनी है, मैं प्रत्यक्ष देख रहा हूँ कि आपमें वही पवित्र आत्मा अवतरित हुई है। आज्ञा दीजिए, आपके चरण रज से अपने मस्तिष्क को पवित्र वार्ता सुनी है, मैं प्रत्यक्ष देख रहा हूँ कि आपमें वही पवित्र आत्मा अवतरित हुई है। आज्ञा दीजिए, आपके चरण रज से अपने मस्तिष्क को पवित्र करूँ।

4. देशकाल एवं वातावरण - नाटक को प्रभावशाली और सजीव बनाने के लिए देशकाल एवं वातावरण का अत्यधिक महत्व होता है। 'कर्बला' नाटक में ऐसा वातावरण बनाया है जिससे मुस्लिम संस्कृति, वेशभूषा, रहन–सहन और विचारधारा का यथार्थ रूप प्रकट हो पाया है। इसमें कथानक और पात्र–योजना की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। लेखक ने तत्कालीन समाज के साथ–साथ समकालीन समाज की जटिलताओं को वातावरण में गूंथने का प्रयास किया है, जिसमें उन्हें पूर्ण रूप से सफलता की प्राप्ति हुई है। यजीद के वैभवशाली और ऐय्याशी भरे जीवन के साथ–साथ उसकी क्रूरता का प्रस्तुतिकरण प्रभावशाली है। कर्बला नाटक वास्तव में ही तत्कालीन जीवन शैली और परिवेश को प्रस्तुत करने में समर्थ सिद्ध हुआ है।

5. रंगमंचीयता/अभिनेयता - मुंशी प्रेमचन्द का 'कर्बला' नाटक मूल रूप से पाठकों के लिए लिखा गया प्रतीत होता है। इसकी रचना रंगमंच को ध्यान में रखकर नहीं की गई है। लेखक ने स्वयं लिखा है, "हमने यह नाटक खेले जाने के लिए नहीं लिखा, मगर हमारा विश्वास है कि यदि कोई इसे खेलना चाहे, तो थोड़ी बहुत कांट–छांट कर खेल भी सकते हैं।" पर सच्चाई यह है कि मूल रूप से कर्बला का मंचन सरल नहीं है। इसके कुछ दृश्य मंच पर अभिनीत नहीं किए जा सकते। हजारों सैनिकों की दीवारों पर चढ़ते हुए किसी भी रंगमंच पर नहीं दिखाया जा सकता। लगभग तीस पात्रों की संख्या रंगमंच की दृष्टि से कुछ अधिक ही है। यह सही है कि इस नाटक के मंचन के लिए पात्र संख्या कम की जा सकती है, अनावश्यक विस्तार कम किया जा सकता है पर कुछ दृश्य मंचन में अवरोध अवश्य उत्पन्न करेंगे, लेकिन रंगमंच की नई तकनीकों के प्रयोग से ऐसा भी किया जा सकता है।

6. भाषा-शैली - 'कर्बला' मुस्लिम संस्कृति और धार्मिक धरातल पर स्थित है। लेखक ने इसमें अरबी और फारसी शब्दों का प्रयोग नहीं किया। इसमें उर्दू शब्दों की अधिकता है। मुस्लिम पात्रों के मुंह से हिन्दी संस्कृत के शब्द कुछ बाधक बनते प्रतीत होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक की इच्छा और उद्देश्य हिन्दी के पाठकों को मुस्लिम संस्कृति की झलक देना था। लेखक ने लिखा भी है, "इस नाटक की भाषा के विषय में कुछ निवेदन करना आवश्यक है। इसकी भाषा हिन्दी साहित्य की भाषा नहीं है। मुसलमान–पात्र से शुद्ध हिन्दी–भाषा का प्रयोग कराना कुछ स्वाभाविक न होता, इसलिए हमने वही भाषा रखी है, जो साधारण–सभ्य समाज में प्रयोग की जाती है, जिसे हिन्दू और मुसलमान दोनों ही बोलते और समझते हैं।" इस दृष्टि से यह नाटक अपने उद्देश्य के बहुत निकट है। उदाहरण–

हुसैन– जी हाँ, उनका नेवासा हूँ। मगर आपने नाना को देखा नहीं, फिर आप को कैसे मालूम हुआ कि मेरी सूरत उनसे मिलती है?

योगी (हँसकर) भगवान्! मैंने उनका स्थूल शरीर नहीं देखा, पर उनके आत्म शरीर का दर्शन किया है। आत्मा द्वारा उनकी पवित्र वार्ता सुनी है। मैं प्रत्यक्ष देख रहा हूँ कि आपमें वही आत्मा अवतरित हुई है। आज्ञा दीजिए, आपके चरण–रज से अपने मस्तक को पवित्र करूँ।

हुसैन–(पैरों का हटा कर) –नहीं–नहीं मैं इन्सान हूँ और रसूल पाक की हिदायत है कि इन्सान को इन्सान की इबादत वाज़िब नहीं।

योगी–धन्य है! मनुष्य के ब्रह्मत्व का कितना उच्च आदर्श है। यह ज्ञान–ज्योति, जो इस देश से उद्‌भासित हुई है, एक दिन समस्त भूमंडल को आलोकित करेगी, और देश–देशान्तरों में सत्य और न्याय का मुख्य उज्जवल करेगी। प्रेमचन्द की भाषा में दुरूहता नहीं है जिस कारण संवाद सरलता से समझ आते हैं। उनमें रोचकता, सहजता और गत्यात्मकता विद्यमान है। मुहावरे–लोकोक्तियों का प्रयोग अति स्वाभाविक है।

7. कथ्य/उद्देश्य - लेखक का कथ्य इस नाटक की रचना से जुड़ा अति सहज और स्वाभाविक है कि सैंकड़ों वर्ष हिन्दू–मुस्लिम साथ–साथ रहकर भी एक–दूसरे के इतिहास को नहीं जान पाए। वे हिन्दुओं को मुस्लिम संस्कृति का परिचय देना चाहते थे और ऐसा करने में उन्हें सफलता की प्राप्ति भी निश्चित रूप से हुई। लेखक ने अत्याचारी मुस्लिम शासकों के परिचय के साथ–साथ हुसैन साहब के आत्म बलिदान, सिद्धान्तप्रियता, साहस और निष्ठा का परिचय अति सहज और सुन्दर ढंग से दिया है। निश्चित रूप से लेखक अपने उद्देश्यों को पाठकों/दर्शकों तक पहुंचने में सफल रहा है।

2.8.4 कथ्य अथवा उद्देश्य :

'कर्बला' नाटक के माध्यम से मुंशी प्रेमचन्द जी हिन्दु और मुस्लिम समन्वय का प्रयास करते जान पड़ते हैं। इसमें वे हिन्दुओं को मुस्लिम इतिहास और संस्कृति का परिचय देते हैं। 1924-1925 में लिखा गया 'कर्बला' नाटक मुस्लिम इतिहास की एक अत्यधिक प्रसिद्ध घटना को आधार बनाकर लिखा गया है। 'कर्बला' नाटक प्रेमचन्द का एक ध ार्मिक–ऐतिहासिक नाटक है। इसकी कथा कर्बला के धर्म–संग्राम पर आधारित हैं। इसमें इस्लाम धर्म के संस्थापक हज़रत मुहम्मद के नवासे हज़रत हुसैन की शहादत का सजीव व रोमांचक वर्णन है। इस मार्मिक नाटक में दिखाया गया है कि उस काल के मुस्लिम शासकों ने किस प्रकार असहाय व निर्बलों की सहायता करने वाले मानवता–प्रेमी हुसैन को परेशान किया और अमानवीय यातनाएं दे–देकर उन्हें तथा उनके साथियों व अनुयायियों को कत्ल कर दिया। कर्बला के मैदान पर लड़ा गया यह युद्ध इतिहास में अपना विशेष महत्व रखता है।

मुंशी प्रेमचन्द जी का लक्ष्य हुसैन साहब के उच्च चरित्र द्वारा पाठकों को ज्ञात कराना था कि मुसलमानों में भी हुसैन जैसे असाधारण मनुष्य हुए हैं, जो मानवता के लिए लड़ते शहीद हुए हैं। हुसैन साहब को मानव प्रेमी, असहायों और निर्बलों के मसीहा के रूप में चित्रित करना भी लेखक का उद्देश्य रहा है। संसार में प्रत्येक अच्छा कार्य करने वाले को कष्ट सहना पड़ता है। हज़रत ईसा मसीह को भी सूली पर चढ़ा दिया गया था। मुस्लिम इतिहास में हज़रत हुसैन की शहादत की घटना अत्यधिक महत्व रखती है। हिन्दू समाज इस घटना, इसकी पृष्ठभूमि और इसके महत्व से अंजान था। इसी कारण मुंशी प्रेमचन्द जी ने साम्प्रदायिक सौहार्द बनाए रखने के लिए 'कर्बला' की इस घटना को आधार बनाकर नाटक की रचना की। चाहे इसके प्रकाशन के समय हिन्दू और मुसलमानों के द्वारा इसका विरोध किया गया था, किन्तु लेखक का लक्ष्य हज़रत मुहम्मद साहब के दौहित्र (बेटी का बेटा) हज़रत हुसैन के चरित्र को गौरवांन्वित करना था। मुसलमानों के द्वारा उनका विरोध करने पर मुंशी जी बहुत निराश हुए थे उन्होंने अपने एक मित्र को एक पत्र लिखा कि जब हसन निजामी श्रीकृष्ण की जीवनी लिख सकते हैं और मुसलमान उसे पसंद कर सकते हैं तो क्या कारण है कि 'कर्बला' पर लिखे हुए नाटक को लेकर मुसलमान उनकी आलोचना कर रहे हैं। नाटक की भूमिका में लेखक लिखता है–कितने खेद और लज्जा की बात है कि कई शताब्दियों से मुसलमानों के साथ रहने पर भी अभी तक हम लोग प्रायः इनके इतिहास से अनभिज्ञ हैं। हिन्दू–मुस्लिम वैमनस्य का एक कारण यह भी है कि हम हिन्दुओं को मुस्लिम महापुरुषों के सच्चरित्रों का ज्ञान नहीं। जहाँ किसी मुसलमान बादशाह का ज़िक्र आया कि हमारे सामने औरंगजेब की तस्वीर खिंच

गई। लेकिन अच्छे और बुरे चरित्र सभी समाजों में सदैव होते आए हैं और होते रहेंगे। मुसलमानों में भी बड़े–बड़े दानी, बड़े–बड़े धर्मात्मा और बड़े–बड़े न्यायप्रिय बादशाह हुए हैं।

अर्थात् मुंशी प्रेमचन्द जी इस नाटक के माध्यम से धर्म पर अधर्म की पराजय को दर्शाते नज़र आते हैं। ध ार्म के नाम पर युद्ध लड़ने वाले व्यक्ति कभी अपने मार्ग में आने वाली मुश्किलों से नहीं घबराते और निरंतर सच्चाई के पथ पर अग्रसर होते रहते हैं। आज से लगभग ब्यासी वर्ष पर प्रेमचन्द जी ने हिन्दू मुस्लिम एकता का जो प्रयास किया वह सराहनीय है और हमारा भी कर्त्तव्य है कि उनके द्वारा किए इस प्रयास को हम विफल न होने दें।

चरित्र-चित्रण, सप्रसंग व्याख्या, प्रश्नोत्तर

इकाई की रूपरेखा :

2.9.0 उद्देश्य

2.9.1 प्रस्तावना

2.9.2 प्रमुख चरित्र चित्रण

2.9.3 महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या

2.9.4 महत्त्वपूर्ण लघु प्रश्नोत्तर

2.9.0 उद्देश्य :

'कर्बला' नाटक के दूसरे पाठ में नाटक के कुछ महत्त्वपूर्ण पात्रों का चरित्र–चित्रण प्रस्तुत किया जाएगा, साथ ही कुछ महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या प्रस्तुत की जाएगी। जिससे विद्यार्थियों का प्रसंग कैसे लिखा जाता है और फिर बाद में उसकी व्याख्या कैसे की जाती है, के बारे में भी महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हो सकेगी। पाठ के अंत में नाटक में कुछ लघु प्रश्नोत्तर भी प्रस्तुत किए जाएंगे। विद्यार्थी नाटक पढ़ कर स्वयं भी ऐसे प्रश्न ढूंढ कर उसका उत्तर आसानी से लिख पाने में सफल हो सकेंगे।

2.9.1 प्रस्तावना :

मुंशी प्रेमचन्द जी ऐसे साहित्यकार हैं, जिनके यहाँ हिन्दू पात्रों के साथ मुसलमान पात्र और मुसलमान पात्रों के साथ हिन्दू पात्र एक ही रंग में रंगे हुए मिलते हैं। उनकी दृष्टि में दोनों एक ही समाज के अंग हैं। आज ऐसा लगता है, जैसे हिन्दू समाज अलग है और मुस्लिम समाज अलग। इस अलगाव को समाप्त करके तथा शोषण मुक्त नए मानवीय संबंधों वाले समाज को निर्मित करने के कार्य में प्रेमचन्द साहित्य निश्चित ही प्रेरणादायक है।

2.9.2 प्रमुख पात्र :

'कर्बला' नाटक में प्रमुख पात्रों में हज़रत हुसैन और यजीद का पात्र चरित्र–चित्रण प्रस्तुत किया जाएगा।

1. हज़रत हुसैन : इस्लाम धर्म के संस्थापक हज़रत मुहम्मद साहब के नवासे का नाम हज़रत हुसैन है। मुस्लिम धर्म में हुसैन साहब का एक मुकाम है, उनकी शहादत का विशेष महत्व है। हज़रत हुसैन सहिष्णु, उदार, ज्ञानी, शांतिप्रिय, सच्चरित्र, धार्मिक पुरुष थे। उन्होंने जुल्म के सामने अपनी आवाज़ बुलंद की थी। नियमानुसार हसन के बाद गद्दी पर उनका अधिकार बनता था, किन्तु यजीद ने उनके साथ दगा की और स्वयं सत्ता पर अधिकार कर लिया। इस पर हुसैन साहब ने उसकी अधीनता अस्वीकार कर दी। वे एक वीर और साहसी योद्धा थे। अब्बास द्वारा उन्हें वलीद पर विश्वास न करने की बात कही जाती है किंतु वे कहते हैं, मुझमें हक की इतनी ताकत है कि वलीद तो क्या, यजीद की सारी फौज भी मुझे नुकसान नहीं पहुँचा सकती। मेरी बाजुओं में इतना बल है कि मैं अकेले उसमें से एक सौ को ज़मीन पर सुला सकता हूँ। हैदर का बेटा ऐसे गीदड़ों से नहीं डर सकता।

'कर्बला' के युद्ध में हुसैन साहब के साथ केवल बहत्तर व्यक्ति थे और यजीद के पास बीस हज़ार सैनिकों की बहुत बड़ी सेना थी। किंतु फिर भी वे निडरता के साथ उसका मुकाबला करने को तत्पर थे। वे युद्ध नहीं चाहते थे क्योंकि एक शांतिप्रिय व्यक्ति युद्ध कैसे लड़ सकता था। सपने में ही उन्हें अपनी शहादत का पूर्वाभास अपने नाना से हो गया था किन्तु वे तनिक भी विचलित नहीं हुए। मदीने को तबाही और युद्ध से बचाने के लिए वे उस जगह को अकेले ही छोड़ देते हैं। कूफा के लोगों की विनती पर यजीद के अत्याचारों से जनता को बचाने के लिए वे वहाँ चले जाते हैं। अन्याय

और अत्याचार के विरूद्ध हज़रत हुसैन लंबा संघर्ष करते हैं। अपने जीवन की अंतिम लड़ाई लड़ते–लड़ते नमाज का समय हो जाता है और हुसैन नमाज़ के लिए झुक जाते हैं। शत्रु पीछे से उनके कंधे पर तलवार मारते हैं। सामने से उनका सिर काटने का साहस किसी में नहीं होता। उन्होंने धर्म की रक्षा के लिए अपने प्राणों का बलिदान दे दिया। आज भी दुनिया भर के मुसलमान मुर्हरम वाले दिन उनकी शहादत को याद किया जाता है।

2. **यजीद :** यजीद 'कर्बला' नाटक का अन्य प्रमुख पात्र है। यजीद खलीफा मुआबिआ के पुत्र थे जो के शाम प्रान्त का सूबेदार था। उसने हज़रत अली को पाँच साल की बेरहम युद्ध के बाद हरा कर खलीफा की गद्दी पर अधिकार मिला था। जीते जी मुआबिआ ने खलीफा की गद्दी पर हज़रत हुसैन को सौंपने की घोषणा की थी, किन्तु मृत्यु से पहले ही उसने अपने बेटे को खलीफा बना दिया। साधारण जनता हज़रत हुसैन के पक्ष में थी और उन्हें ही खलीफा बनाना चाहती थी। इसी कारण यजीद हुसैन को अपना सबसे बड़ा दुश्मन मानता था। यजीद एक शराबी कामोपासक शासक था। वह साफी को पीर मानता था और वेश्याओं के साथ शराब पीता था। खुद को निडर मानने वाला हज़रत हुसैन से अत्यधिक डरता था, 'मैं' सारी दुनिया की फौज़ों से नहीं डरता, मैं डरता हूँ, इस निहत्थे हुसैन से। इसी हुसैन ने मेरी नींद, मेरा आराम हराम कर रखा है।' इस खौफ के पीछे कारण था जनता द्वारा हुसैन साहब का साथ देना। इसी कारण वह उनसे ईर्ष्या भी करता था।

वह एक कूटनीतिज्ञ भी था। राजनीति के सारे दाँव–पेचों की उसे जानकारी थी। साम, दाम दंड सब तरीके वह अपनाता है ताकि प्रजा को अपने वश में कर सके। वह कहता है 'खजाना खोल दो और रियाया का दिल अपनी मुट्ठी में कर लो। रुपया खुदा के खौफ के दिल से दूर कर देता है। सारे शहर को दावत करो कोई मुज़ायका (दुख) नहीं, अगर खज़ाना खाली हो जाए। हर एक सिपाही को निहाल कर दो, और रियातें करने पर भी कोई तुमसे खिंचा रहे, तो उसे कत्ल कर दो। मुझे इस वक्त रूपए की ताकत से धर्म और भक्ति को जीतना है।'

अपने सामने वह किसी की एक नहीं सुनता। पत्नी हिंदा द्वारा भी उसे समझाया जाता है और अधर्म करने से रोका जाता है किन्तु वह कहता है–ये मज़हब की बातें मज़हब के लिए हैं, दुनिया के लिए नहीं। मेरे दादा ने इस्लाम इसलिए कबूल किया था कि उससे उन्हें दौलत और इज्ज़त हाथ आती थी। नजात (मुक्ति) के लिए वह इस्लाम पर ईमान नहीं लाए थे, और मैं भी इस्लाम को नजात का जामिन समझने को तैयार हूँ।' गद्दी के आधीन होकर वह किसी पर भी विश्वास नहीं करता स्वयं अपने बेटे को शक के तहत कैद करवा लेता है। स्वार्थ में अंधा होकर प्रजा पर अत्याचार करता है। 'कर्बला' नाटक के दूसरे अंक के पाँचवें दृश्य में वह रंगमंच से लुप्त हो जाता है।

3. **अबदुल्लाह :** अबदुल्लाह यजीद की सेना का सेनापति था। वह लोगों द्वारा यजीद की बैयत कबूल करने को गल्त समझता था। वह अपने साथी कमर की तरह शरह के मुताबिक हज़रत हुसैन को ही अपना खलीफा मानता है। उसका मानना था कि अमीर और रईस जागीरों और धन के लालच में यजीद का साथ दे रहे हैं किन्तु गरीब व्यक्ति को अपनी जान बचाने के लिए मजबूरी वश यजीद को अपना खलीफा स्वीकार करना पड़ रहा है।

2.9.3 महत्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या :

1. **ख़जाना खोल दो और रियाया का दिल अपनी मुट्ठी में कर लो। रूपया खुदा के खौफ को दिल से दूर कर देता है। सारे शहर की दावत करो कोई मुजायका नहीं, अगर खज़ाना खाली हो जाय। हर एक सिपाही को निहाल कर दो, और अगर इतनी रियायतें करने पर भी कोई तुमसे खिंचा रहे, तो कत्ल कर दो। मुझे इस वक्त रूपए की ताक से धर्म और भक्ति को जीतना है। (पृष्ठ-26 पहला अंक-पहला दृश्य)**

प्रसंग : प्रस्तुत गद्यांश मुंशी प्रेमचन्द द्वारा रचित ऐतिहासिक–धार्मिक नाटक 'कर्बला' के पहले अंक के पहले दृश्य से लिया

गया है। रात के समय यजीद अपने कुछ साथियों और दरबारियों के साथ बैठा राजनीति की बातें करने और शराब पीने में व्यस्त हैं। शराब के नशे में चूर होकर यज़ीद स्वयं को खलीफा घोषित करता हुआ मुहम्मद हुसैन को अपने सामने झुका हुआ देखना चाहता है। वह चाहता है कि सारी प्रजा उसकी अधीनता स्वीकार करे और उसे सम्मान दे।

व्याख्याः यजीद अपने साथियों और अन्य दरबारियों से कूटनीति की बातें करता हुआ कहता है कि खज़ाने के मुँह खोल दो। सारी प्रजा को मालामाल करके अपने पक्ष में कर लो क्योंकि पैसे में इतनी ताकत है कि वह परमात्मा और इंसान के बीच दूरी पैदा कर देता है। मुझे कोई दुख नहीं होगा, अगर लोगों पर खज़ाना लूटा भी दिया जाए। प्रत्येक सिपाही को खुश कर दो और इतना करने पर भी यदि कोई हमारे पक्ष में न आए तो उसे मरवा डालो। इस वक्त मेरा मकसद केवल रूपए की ताकत से धर्म और भक्ति को जीतना है।

विशेष : 1. सुबोध एवं भावानुकूल उर्दू भाषा का प्रयोग हुआ है।

2. ज़हीद के कूटनीतिज्ञ होने के साथ–साथ उसके क्रूर व्यवहार का भी पता चलता है।

3. राजाओं और रयीसों द्वारा धन की शक्ति को उजागर किया गया है।

2. हिंदा, ये मज़हब की बातें मज़हब के लिए हैं, दुनिया के लिए नहीं। मेरे दादा ने तो इस्लाम इसलिए कबूल किया था कि इससे उन्हें दौलत और इज्ज़त हाथ आती थी। न जात के लिए वह इस्लाम पर ईमान नहीं लाए थे, और न मैं ही इस्लाम को नजात का ज़ामिन समझने को तैयार हूँ। (पृष्ठ 27-पहला अंक-पहला दृश्य)

प्रसंग : उपर्युक्त गद्यांश मुंशी प्रेमचन्द द्वारा रचित नायक 'कर्बला' के पहले अंक के पहले दृश्य में अवतरित किया गया है। यह पंक्तियाँ यज़ीद ने अपनी पत्नी हिंदा को तब कहीं, जब हिंदा यज़ीद को हुसैन साहब के विरूद्ध तलवार उठाने से रोकती है।

व्याख्याः यजीद हिंदा से कहता है कि धर्म की बातें धर्म के लिए ही होती हैं, दुनिया के लिए नहीं अर्थात् दुनियावी बातों में धर्म को कोई काम नहीं होता। वह तर्क प्रस्तुत करता हुआ कहता है कि खुद उसके दादा ने इस्लाम धर्म दौलत और मान–सम्मान की प्राप्ति के लिए ही कबूल किया था। मुक्ति के लिए उन्होंने इस्लाम नहीं कबूला था। मैं भी इस्लाम को मुक्ति का साधन समझने से इंकार करता हूँ।

विशेष : 1. हिंदा की दूरदर्शिता स्पष्ट होती है साथ ही उसके नम्र और शांत स्वभाव पर भी दृष्टि पड़ती है।

2. यज़ीद की स्वार्थी प्रवृति दृष्टिगत होती है।

3. उर्दू भाषा का सुंदर और सटीक प्रयोग पात्रों द्वारा हुआ है।

3. आँखों को कसम है, तुम मेरी मजलिस में बैठने के काबिल नहीं हो। सारा मज़ा खाक में मिला दिया। यजीद के सामने दीन का नाम लेना मना है। दीन उन मुल्लाओं के लिए है, जो मसजिदों में पड़े हुए गोस्त की हड्डियों को तरसते हैं; दीन उनके लिए हैं, जो मुसीबतों के सबब से जिन्दगी से बेज़ार हैं, जो मुहताज है, बेबस हैं, भूखों मरते हैं, जो गुलाम हैं, दुर्रे खते हैं। दीन बूढ़े मरदों के लिए, रांड औरतों के लिये, दिवालिए-सौदागरों के लिये हैं। इस ख़याल से उनके आंसू पूछते हैं, दिल की तसकीन होती है। बादशाहों के लिये दीन नहीं है। उनकी नजात रसूल और खुदा के निगाह-करम की मुहताज नहीं। उनकी नजात उनके हाथों में है। (पृष्ठ 53 अंक-दो दृश्य-दूसरा)

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियाँ प्रेमचन्द द्वारा लिखित ऐतिहासिक–धार्मिक नाटक 'कर्बला' के दूसरे अंक से ली गई हैं। प्रस्तुत पंक्तियाँ यजीद ने अपने दरबार में बैठे हुर से उस समय कही हैं जब वह खलीफा दीन–हक का अपमान

करने से रोकता है।

व्याख्याः शराब पीते समय जब हुर ने यजीद को दीन का अपमान न करने की बात कही तो यजीद ने कहा कि उसके सामने दीन का नाम लेना वर्जित है। वह कहता है कि दीन तो उन मुल्लाओं के लिए है, जो मसजिदों में पड़े हुए गोश्त की हड्डियों के लिए तरसते हैं, दीन उनके लिए हैं जो मुसीबतों के कारण जीवन से निराश हैं, जो गरीब हैं, बेबस हैं, भूखों मरते हैं, जो गुलाम हैं, कोड़े खाते हैं। दीन बूढ़े पुरुषों के लिए, विधवाओं के लिए, दिवालिए व्यापारी के लिए हैं। इस विचार से उनके आँसू पोंछते हैं, कि दिल को तसल्ली होती है, बादशाहों के लिए दीन नहीं है। उनकी नज़ात (मुक्ति) खुदा की कृपा दृष्टि पर निर्भर नहीं होती। उनकी नज़ात उनके अपने हाथों में होती है।

विशेष : 1. उर्दू भाषा का सजीव और सुंदर प्रयोग हुआ है।

2. यजीद के धर्मविरोधी विचारों एवं अहंकारी और विलासी स्वभाव का पता चलता है।

3. भाषा शैली सरल और भावानुकूल है।

4. खौफ़ से कांपती हुई बुलबुल मस्ताना ग़जले नहीं गा सकती। शाख पर है, तो उड़ जाएगी, क़फस में है, तो मर जाएगी। मैंने खौफ से गुलशन को आबाद होते नहीं, वीरान देखा है। मेरा वतन कूफ़ा है और मैं कूफ़ियों को खुद जानती हूँ। उन पर सख्तियां करके आप हुसैन को बुला रहे हैं। हुसैन कूफ़े मे दाखिल हो गए, तो फिर आप हमेशा के लिए इराक से हाथ धो बैठेंगी। (पृष्ठ 56 अंक-दूसरा दृश्य-दूसरा)

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियाँ प्रेमचन्द द्वारा लिखित ऐतिहासिक एवं धार्मिक नाटक 'कर्बला' के दूसरे अंक में से ली गई हैं। प्रस्तुत पंक्तियाँ यजीद के दरबार में एक नाचने गाने वाली स्त्री नरगिस ने यजीद से उस समय कही है जब वह उस से कोई मस्त कर देने वाली गज़ल सुनाने को कहता है।

व्याख्याः नरगिस ने खलीफ़ा यजीद से कहा कि डर से काँपती हुई बुलबुल मस्ताना गज़लें नहीं गा सकती। शाख (टहनी) पर है तो उड़ जाएगी, कफस (कैद) में है तो मर जाएगी। मैंने कभी डर से गुलशन (बाग) को आबाद होते नहीं देखा वीरान होते ही देखा है। फिर वह अपनी इस निराशा और उर का कारण बताती हुई कहती है कि मेरा देश कूफा है और मैं कूफियों को अच्छी तरह जानती हूँ। उस पर सख्तियाँ करके आप हज़रत हुसैन को बुला रहे हैं कि वे उनकी सहायता के लिए आएँगे और आप उन्हें पकड़ लेंगे। किन्तु याद रखिए हज़रत हुसैन यदि कूफे में दाखिल हो गए तो फिर आप सदा के लिए इराक से हाथ धो बैठेंगे।

विशेष : 1. नरगिस की देशभक्ति का परिचय मिलता है।

2. वह अपने देश कूफा से अत्यधिक प्रेम करती है।

3. सरल, सहज, विषयानुकूल और पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग हुआ है।

5. भगवन्! मैंने उनका स्थूल शरीर नहीं देखा, पर उनके आत्म-शरीर का दर्शन किया है। आत्मा द्वारा उनकी पवित्र वार्ता सुनी है। आज्ञा दीजिए, आपके चरण रज से अपने मस्तिष्क को पवित्र करूँ। (पृष्ठ 108 अंक-तीसरा, दृश्य-चौथा)

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियाँ मुंशी प्रेमचन्द द्वारा रचित 'कर्बला' नाटक के तीसरे अंक से ली गई हैं। आधी रात के समय एक योगी भभूत रमाए, जटा बढ़ाए, मृग चर्म कंधे पर रखे हुए हुसैन साहब के सामने आते हैं और उनके सामने नतमस्तक होते हैं और पहचान लेते हैं कि वे उनके नवासे हैं। हुसैन साहब कहते हैं कि मगर आपने नाना को तो कभी देखा नहीं फिर आपको कैसे मालूम हुआ कि मेरी सूरत उनके मिलती है? इस प्रश्न के उत्तर में योगी

उपर्युक्त पंक्तियाँ कहते हैं।

व्याख्या: योगी हुसैन साहब से कहते हैं कि प्रभु मैंने हज़रत मुहम्मद साहब को तो चाहे प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा किन्तु उनका आत्मिक दर्शन अवश्य किया है। आत्मा के माध्यम से ही उनकी मधुर वाणी भी सुनी है। उन्हीं की पवित्र आत्मा आप में भी वास करती है। मुझे आज्ञा दीजिए कि मैं आपके चरणों की धूल को अपने माथे पर लगा कर कृतज्ञ हो सकूँ।

विशेष : 1. शुद्ध संस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग हुआ है।

2. योगी का नम्र और कृतज्ञ स्वभाव दृष्टिगोचर हुआ है।

2.9.4 महत्वपूर्ण लघु प्रश्नोत्तर :

प्र.1. मुंशी प्रेमचन्द जी का जन्म कब और कहाँ हुआ? इनका असली नाम क्या था?

उत्तर : मुंशी प्रेमचन्द जी का जन्म बनारस के पास लमही गाँव में 31 जुलाई सन् 1880 को हुआ था। इनका असली नाम धनपतराय था। उर्दू भाषा में पहले ये इसी नाम से ही लिखा करते थे।

प्र.2. इनकी किन्हीं पाँच प्रसिद्ध कहानियों के नाम दें।

उत्तर : कफन, पूस की रात, शतरंज के खिलाड़ी, दो बैलों की कथा, पंच परमेश्वर प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

प्र.3. इनकी कहानियों के विषय के बारे में बताएँ।

उत्तर : इनकी कहानियों में समाज–सुधार, राष्ट्रीय भावना, किसानों की दुर्दशा, जातिवाद और छूतछात, दहेज प्रथा, नारी समस्याएं, अनपढ़ता, गरीबी, बेराजगारी, सामाजिक–धार्मिक अंधविश्वास, मदिरापान इत्यादि प्रमुख समस्याओं का वर्णन किया गया है।

प्र.4. प्रेमचन्द जी के दो प्रसिद्ध उपन्यासों के नाम दें।

उत्तर : गोदान और गबन इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं।

प्र.5. इनकी भाषा पर टिप्पणी करें।

उत्तर : प्रेमचन्द जी की भाषा सरल, स्पष्ट, मुहावरेदार और पात्रानुकूल होती है। कहीं–कहीं कहावतों, सूक्तियों इत्यादि का बखूबी प्रयोग हुआ है। पात्रों के अनुकूल इन्होंने अंग्रेजी, उर्दू फारसी और संस्कृत शब्दों का भी बखूबी प्रयोग किया है।

प्र.6. यजीद के स्वभाव पर टिप्पणी करें।

उत्तर : यजीद शराबी, अन्यायी, क्रूर शासक था। अपने स्वार्थ के लिए ही वह सब कुछ करता था किसी अन्य की अथवा प्रजा के सुख दुख से उसे कोई लेना देना नहीं था।

प्र.7. यजीद का हज़रत हुसैन साहब से कैसा सलूक था?

उत्तर : हज़रत हुसैन खुदा के बंदे थे। दीन इमान को मानने वाले। सारी प्रजा उनके पक्ष में थी। यही बात यजीद को मंजूर न था। उसे खौफ था कि कहीं प्रजा उसे गद्दी से उतारकर हुसैन को न बैठा था। इसी कारण वह हुसैन साहब कस कट्टर विरोधी था।

प्र.8. प्रजा को अपने वश में करने के लिए यजीद ने क्या तरीका अपनाया?

उत्तर : सारी रयाया को अपने वश में करने के लिए यजीद ने खज़ाने के मुँह खोल देने का हुक्म दिया। उसका मानना था कि रूपया खुदा के खौफ को भी दिल से दूर कर देता है। उसे इस बात का भी कोई दुख नहीं था कि ऐसे धन दौलत लुटाने से खज़ाना खाली हो जाएगा। वह चाहता था कि जो धन के लालच में उसके पक्ष में नहीं आता उसे कत्ल कर दिया जाए।

प्र.9. हिंदा अपने पति को क्या मश्वरा देती है?

उत्तर : यजीद की पत्नी हिंदा मश्वरा देती है कि उसे हज़रत हुसैन का कत्ल करने का इरादा छोड़ देना चाहिए। ऐसा करने की सोच कर वह अपनी मुक्ति का मार्ग बंद कर रहा है। खुदा द्वारा भेजे ऐसे इंसान का कत्ल करने की सोचना भी पाप है।

प्र.10. वलीद कौन था? हज़रत हुसैन के कत्ल को लेकर उसकी क्या सोच थी?

उत्तर : वलीद मदीना का नाजिम था। वह यजीद को खलीफा नहीं मानता था क्योंकि उसके चुनाव के लिए कौन के नेताओं की कोई मजलिस नहीं हुई थी। उसका मानना था कि हुसैन यजीद को कभी खलीफा स्वीकार नहीं करेंगे। वह स्वयं का खलीफा का सेवक समझता है यजीद का नहीं।

प्र.11. हज़रत हुसैन ने यजीद की बैयत (गुलामी) क्यों स्वीकार नहीं की?

उत्तर : हज़रत हुसैन का मानना था कि मुआबिआ ने भैया इमाम हसन के साथ कसम खाकर शर्त की थी कि वह अपने मरने के बाद अपनी औलाद में किसी को खलीफा न बनाएगा। हसन के बाद खिलाफत पर मेरा हक है। अगर मुआबिआ मर गया है और उसके बेटे को खलीफा बनाया गया है, तो उसने मेरे साथ और इस्लाम के साथ दगा की है। यजीद शराबी है, बदकार है, झूठा है, बेदीन है, कुत्तों को गोद में लेकर बैठता है। मेरी जान भी जाए, तो क्या, पर मैं उसकी बैयत न अखितयार करूँगा।

प्र.12. अब्बास द्वारा हज़रत हुसैन को कैद किए जाने की शंका प्रकट करने पर हज़रत हुसैन क्या कहते हैं?

उत्तर : हज़रत हुसैन अब्बास को तसल्ली देते हुए कहते हैं कि मुझ में हक की इतनी ताकत है कि यजीद की सारी फौज भी मुझे नुकसान नहीं पहुँचा सकती। मुझे यकीन है कि मेरी एक आवाज़ पर हज़ारों खुदा के बन्दे और रसूल के नाम पर मिटने वाले दौड़ पड़ेंगे, अगर कोई मेरी आवाज न सुने तो भी मेरे बाजुओं में इतना बल है कि मैं अकेले उनमें से एक सौ को ज़मीन पर सुला सकता हूँ। हैदर का बेटा ऐसे गीदड़ों से नहीं डर सकता।

प्र.13. मरवान हज़रत हुसैन को यजीद की अधीनता स्वीकार करने के लिए क्या तर्क देता है?

उत्तर : मरवान हज़रत हुसैन को दोस्ताना सलाह देता हुआ कहता है कि यजीद की अधीनता स्वीकार करने पर आप को कोई नुकसान नहीं होगा। इससे आपस का फसाद मिट जाएगा और हज़ारों खुदा के बन्दों की जानें बच जाएँगी। खलीफा यजीद आपके साथ ऐसा व्यवहार करेंगे कि खिलाफत में कोई भी आपकी बराबरी न कर सकेगा। आपकी जागीरें और वजीफे बढ़ा कर दिए जाएंगे ताकि इज्ज़त से मदीने रसूल और दीन की सेवा कर सकें।

प्र.14. हज़रत हुसैन के मक्का जाने के निर्णय के बाद जैनब उनके साथ जाने के लिए क्या तर्क देती है?

उत्तर : जैनब हज़रत हुसैन के साथ जाने की जिद्द करती हुई कहती है–अगर इस्लाम का बेटा अपनी दिलेरी से इस्लाम की प्रतिष्ठा कायम रखेगा, तो हम अपने सब्र से, जब्त से और बरदाश्त से उसकी शान निभाएंगे। हम पर जिहाद हराम है, लेकिन हम मौका पड़ने पर मरना जानती है। हमारी आँखों से आँसू न निकलेंगे, लबों पर फरियाद न होगी और हमारे दिलों से आह न निकलेगी।

प्र.15. अब्दुल्लाह कौन था?

उत्तर : अब्दुल्लाह यजीद की सेना का सेनापति है। वह लोगों द्वारा यजीद की बैयत कबूल करने को सही नहीं मानता। वह भी अपने साथी कमर की तरह शरह के मुताबिक हज़रत हुसैन को अपना खलीफा मानता है। लोगों द्वारा यजीद की बैयत कबूल किये जाने को वह लोगों की विवशता मानता है। उसके अनुसार अमीरों और रईसों को तो जागीर और मन्सब का लालच है। लेकिन गरीब लोग क्या करें। यदि बैयत नहीं लेते तो मारे जाते

हैं, शहर से निकाल दिए जाते हैं।

प्र.16. साहस राय कौन था? वह ईश्वर से क्या प्रार्थना करता है?

उत्तर : साहस राय अरब में रहने वाले हिन्दुओं में से एक है। वह या तो महाभारत के अश्वत्थामा के वंशजों में से या फिर उन हिन्दुओं की सन्तान था जिन्हें सिकन्दर कैद कर ले गया था। अरब के एक गाँव में बने मन्दिर में वह अपने साथियों सहित भारत लौटने की भगवान से विनती करता है, जिससे वह अरब में पतित बन कर नहीं समाज मे इज्ज़त के साथ रह सके।

प्र.17. हबीब कौन था?

उत्तर : हबीब यजीद की सेना का एक सिपाही था, जो हुसैन साहब का समर्थक है। वह हुसैन साहब को कूफा जाने से रोकता है क्योंकि उसका मानना है कि कूफा वासी धोखेबाज़ हैं।

प्र.18. मुसलिम के बारे में टिप्पणी करें।

उत्तर : मुसलिम हुसैन साहब का चचेरा भाई था। उसने कूफा वासियों द्वारा स्थापित बादशाहत को मानने से इंकार किया क्योंकि वह कूफा कानून के अनुसार नहीं थी। जिआद ने बेगुनाहों को सजाएँ दी थी, जुर्माने के रूप में उनकी दौलत छीनी थी, अमन शांति के बहाने सरदारों को मारा था। ऐसे में वह ऐसी हुकूमत का विरोध करता था।

प्र.19. जैनब का चरित्र चित्रण करें।

उत्तर : 'कर्बला' नाटक में जैनब हज़रत हुसैन की बहन है। वह अपने भाई से बहुत स्नेह करती है और भाई द्वारा किया प्रत्येक कार्य सही मानती है। वह बड़ी निडर और बलिदानी है। यजीद की अधीनता उसे अस्वीकार है। वह धार्मिक प्रवृत्ति वाली स्त्री है और ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहती जिससे धर्म को आघात पहुँचे।

प्र.20. 'कर्बला' की रंगमंचीयता पर टिप्पणी करें।

उत्तर : नाटक को अभिनेयता अथवा रंगमंच के बिना प्रस्तुत करना कठिन है क्योंकि नाटक लिखा ही जाता है–स्टेज अथवा रंगमंच पर खेलने अथवा प्रस्तुत करने के लिए। अभिनय के द्वारा ही नाटककार दर्शकों के सामने जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है। 'कर्बला' नाटक में दृश्यों की भरमार है, पात्रों की संख्या अत्यधिक है। नाटक धर्म से जुड़ा हुआ है। कोई भी अभिनेता हज़रत हुसैन, उनकी बहन, बेटी या पत्नी का अभिनय करने में योग्य और समर्थ नहीं हो सकता। कई दृश्य बड़े जटिल हैं। संवाद लंबे हैं, भाषा कहीं–कहीं कठिन हो गई है। नाटक में गीतों की संख्या भी बहुत ज्यादा है। संक्षेप में कहा जाए तो अभिनेयता और रंगमंच की दृष्टि से चाहे यह एक असफल नाटक है। किंतु यदि पात्रों की संख्या कम कर ली जाए। प्रमुख पात्रों को ही लिया जाए। युद्ध के दृश्यों को आसान करके एक स्थान पर ही घटित करवा लिया जाए। गीतों की संख्या कम कर ली जाए। युद्ध के कठिन दृश्यों को, जो स्टेज अथवा रंगमंच पर प्रस्तुत करने कठिन हो उनके बारे में पर्दे के पीछे से ही आवाज़ के माध्यम से बताया जा सकता है। इस प्रकार का प्राव्धान करने पर यह नाटक रंगमंच पर सफलता से प्रस्तुत किया जा सकता है।

प्र.21. 'कर्बला' एक दुखांत नाटक है? विचार प्रस्तुत करें।

उत्तर : 'कर्बला' एक दुखांत नाटक है। इसके माध्यम से हुसैन साहब की शहादत के माध्यम से मुस्लिम संस्कृति एक संदेश प्राप्त करती है। दूसरों के दुख में स्वयं दुख अनुभव करने वाले हुसैन साहब की दृढ़ता, वीरता, परोपकारी प्रवृत्ति का इसके माध्यम से ज्ञान प्राप्त होता है। दुखांत नाटक होने पर भी अपने अंदर उच्च और परोपकारी भाव को समेटे हुए है।

प्र.22. 'कर्बला' की भाषा शैली पर टिप्पणी करें।

उत्तर : कर्बला मुंशी प्रेमचन्द का एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक–धार्मिक नाटक है। हमकी भाषा शैली में सरलता, सहजता, स्पष्टता, विषयानुकूलता, पात्रानुकूलता, व्यंग्यात्मकता, काव्यात्मकता इत्यादि के गुण विद्यमान् हैं। इसमें उर्दू शब्दावली को अत्यधिक प्रयोग के साथ देशज़, अरबी फारसी, तत्सम–तद्भव शब्दों का भी बाखूबी प्रयोग हुआ है। मुहावरे, लोकोक्तियों का भी इसमें सजीव चित्रण हुआ है।

प्र.23. 'कर्बला' की ऐतिहासिकता पर अपने विचार व्यक्त करें।

उत्तर : 'कर्बला' नाटक में नाटककार ने हज़रत हुसैन की शहादत की ऐतिहासिक घटना को आधार बनाकर कर्बला के मैदान पर ही इसको परिणत होते दिखाया है।

प्र.24. 'कर्बला' के उद्देश्य पर टिप्पणी करें।

उत्तर : मुंशी प्रेमचन्द जी इस नाटक के माध्यम से धर्म पर अधर्म की पराजय को दर्शाते नज़र आते हैं। धर्म के नाम पर युद्ध लड़ने वाले व्यक्ति कभी अपने मार्ग में आने वाली मुश्किलों से नहीं घबराते और निरंतर सच्चाई के पथ पर अग्रसर होते रहते हैं। आज से लगभग ब्यासी वर्ष पर प्रेमचन्द जी ने हिन्दू मुस्लिम एकता का जो प्रयास किया वह सराहनीय है और हमारा भी कर्त्तव्य है कि उनके द्वारा किए इस प्रयास को हम विफल न होने दें।

प्र.25. देशकाल और वातावरण की दृष्टि से 'कर्बला' नाटक पर संक्षिप्त चर्चा करें।

उत्तर : नाटक को प्रभावशाली और सजीव बनाने के लिए देशकाल एवं वातावरण का अत्यधिक महत्व होता है। 'कर्बला' नाटक में ऐसा वातावरण बनाया है जिससे मुस्लिम संस्कृति, वेशभूषा, रहन–सहन और विचारधारा का यथार्थ रूप प्रकट हो पाया है। इसमें कथानक और पात्र–योजना की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। लेखक ने तत्कालीन समाज के साथ–साथ समकालीन समाज की जटिलताओं को वातावरण में गूंथने का प्रयास किया है, जिसमें उन्हें पूर्ण रूप से सफलता की प्राप्ति हुई है। यजीद के वैभवशाली और ऐय्याशी भरे जीवन के साथ–साथ उसकी क्रूरता का प्रस्तुतिकरण प्रभावशाली है। कर्बला नाटक वास्तव में ही तत्कालीन जीवन शैली और परिवेश को प्रस्तुत करने में समर्थ सिद्ध हुआ है।

प्र.26. 'कर्बला' नाटक का संक्षिप्त परिचय दें।

उत्तर : मुंशी प्रेमचन्द जी द्वारा रचित नाटक 'कर्बला' एक धार्मिक नाटक है, जिसकी रचना 1924-1925 ई० में हुई। इसमें एक प्रसिद्ध घटना का वर्णन है, जो मुस्लिम इतिहास से संबंधित है। हज़रत मुहम्मद से संबंद्ध इस घटना में कल्पना का समावेश भी है। प्रेमचन्द जी ने नाटक में हिन्दू पात्रों के प्रवेश को ऐतिहासिक माना है। वे लिखते हैं – ''पाठक इसमें हिन्दुओं को प्रवेश करते देखकर चकित होंगे परन्तु वह हमारी कल्पना नहीं है, ऐतिहासिक घटना है। आर्य लोग वहाँ कैसे और कब पहुँचे, यह विवाद ग्रस्त है। कुछ लोगों का ख्याल है, महाभारत के बाद अश्वत्थामा के वंशधर वहाँ जा बसे थे। कुछ लोगों का यह भी मत है, ये लोग उन हिन्दुओं की सन्तान थे, जिन्हें सिकंदर यहाँ से कैद कर ले गया था। कुछ भी हो, ऐतिहासिक प्रमाण है कि कुछ हिन्दू भी हज़रत हुसैन के साथ कर्बला के संग्राम में सम्मिलित होकर वीरगति को प्राप्त हुए थे।

Type Setting at Computer Lab,
Department of Distance Education, Punjabi University, Patiala. (22)